# योगमयी सृष्टि

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

के

योगमुद्रा में प्रकथित वैदिक प्रवचनों का सङ्कलन

॥ ओ३म् ॥

# योगमयी सृष्टि

*पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज*
*के*
*योगमुद्रा में प्रकथित वैदिक प्रवचनों का सङ्कलन*

**वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जीकृत)**
२५१, दिल्ली गेट, नयी दिल्ली-११० ००२
दूरभाष : ३२८१६१६, ३२८५०००

प्रकाशक : वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जीकृत)
२५१, दिल्ली गेट, नयी दिल्ली-११० ००२
दूरभाष : ३२८१६१६, ३२८५०००



प्रतियाँ : ११००

मूल्य : २५.०० रुपये

प्रथम संस्करण : फरवरी, २०००

शब्द संयोजक : सिटी कम्प्यूटर्स
गंगा विहार, दिल्ली-६४
दूरभाष : २१८८५२२

मुद्रक : नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस
बलबीर नगर, शाहदरा, दिल्ली-३२
दूरभाष : २२८५७५३

# प्राक्कथन

वेद, ऋषियों और यागों की पावन भूमि, आर्यावर्त में परम्परागतों से समय-समय पर दिव्यात्माओं का अवतरण होता रहा है। अवतरण प्रायः अपने पूर्व संस्कारों से जुड़े विश्व-कल्याण के उद्देश्यों से बंधा रहता है। ज्ञान और प्रयत्न के क्षेत्र में पूर्व-जन्म-संगृहीत ऋषि-संस्कारों के महान् आश्चर्य ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (आदि ब्रह्मा के वरिष्ठ शिष्य, श्रृंगी ऋषि की आत्मा) के रूप में एक दिव्यात्मा, वेदज्ञान, दर्शन, वैदिक इतिहास, याग और योग के दिग्दर्शन के लिए अवतरित हुई। इन्होंने एक विशेष प्रक्रिया में, योगावस्थित मुद्रा में, अन्तरिक्षस्थ योगसिद्ध-आत्माओं को सम्बोधित करते हुए सहस्रों वैदिक प्रवचन किये। इनके प्रवचनों में मानव मात्र के कल्याण के लिये पूर्ण साकल्य उपलब्ध है। अधिकांश प्रवचन अनेक प्रकाशित पुस्तकों के रूप में उपलब्ध हैं। इसी श्रृंखला में, 'यागमयी सृष्टि' विषय पर यह पोथी प्रस्तुत है।

यूं तो इनके एक-एक प्रवचन में 'गागर में सागर भरण' की कल्पना चरितार्थ होती है और दिव्यामृतमयी ज्ञान-धारा निस्यन्द होती है, जिसमें अवगाहन कर जिज्ञासु, अविद्या-अंधकार, दुःख-दारिद्र्य, प्रमाद और अकर्मण्यता आदि दोषों का निवारण कर उत्साह, सुख-समृद्धि, मानवीयता, 'ज्ञान-कर्म-उपासनाकाण्ड' और यौगिकवाद से परिपूर्ण होकर 'पुरुषार्थ चतुष्ट्य' को प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है। परन्तु प्रस्तुत पोथी, 'यागमयी सृष्टि' तो उनके ग्यारह प्रवचनों का संग्रह है, जिसमें सृष्टि में सर्वत्र हो रहे याग की ज्ञान-प्रेरणा से साधक याज्ञिक और यौगिक बन सकता है।

साधना में याग और योग की ऊर्ध्वगतियों से शरीररूपी यज्ञशाला को सिद्ध बनाते हुए उससे इस संसाररूपी यज्ञशाला का समन्वय करके ब्रह्म-गतियों में रमण करने की प्रक्रिया का विषय इस पोथी में सङ्कलित प्रवचन रूपी मनकों का सूत्र बनकर प्रकट हुआ है। पोथी के प्रथम भाग में ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में, एक-दूसरे में लय होते हुये ब्रह्म-याग के पात्रों (देवताओं) द्वारा प्रतिष्ठावादी याग का विशद चित्रण हुआ है। भौतिक याग की सतोगुणी ऊर्ध्वगतियों को वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध करते हुये हमारे पूर्वजों ने पिण्ड और ब्रह्माण्ड के समन्वय को किस प्रकार साकार किया था, यह विषय भी प्रथम भाग में ओत-प्रोत हुआ हैं। द्वितीय भाग प्राण-विद्या, योग-विद्या, इन्द्रिय-अनुशासन और वेद-मन्त्रों में प्रतिपादित ज्ञान-कर्म-उपासना के क्षेत्र में ऋषि-मुनियों के अनुसन्धान की आभा में इस सृष्टि को मापते हुये आत्म-सखा अपने प्रभु को प्राप्त करने रूपी अन्नों को पान करने की प्रक्रिया का वर्णन हुआ है।

इस पोथी में वेद के ऋषि ने मानव को परमपिता परमात्मा के इस संसार रूपी कर्म-क्षेत्र में व्यवहार करने से पूर्व याग और योग द्वारा योग्य बनने के लिये तप के विषय पर दिव्य प्रकाश डाला है। प्रवचनों में, वैदिक विचारों में पुनरावृत्ति को रूढ़ि न मानते हुए एक ही विषय को प्रतिष्ठामयी विविधता से प्रस्तुत किया हैं। ऋषि-मुनियों की सभाओं में विचार-विनिमय के द्वारा उनके ही शब्दों में गूढ से गूढ विषय को सरल और सहज बनाकर प्रस्तुत करने में ऋषि ने 'इदं न मम' भाव को क्रियात्मक रूप में अङ्गीकार किया है। संकलित प्रवचनों में महर्षि याज्ञवल्क्य, गार्गी, महाराज प्रजापति, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक, महर्षि विभाण्डक, महर्षि काकभुषुण्ड, महर्षि लोमश, महाराज अश्वपति, महर्षि

अर्द्धभाग, वैशम्पायन, भारद्वाज, महर्षि वर्तेन्तु, भगवान राम, महर्षि रेवक, सुनीति मुनि, नारद मुनि, आदि अनेक ऋषि-मुनियों द्वारा तृतीय यज्ञशाला (भौतिक याग) के माध्यम से शरीर रूपी यज्ञशाला और ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला के क्रियात्मक समन्वय से जुड़े संवादों और विचार-विनिमय की ऋषि ने अपनी मनोहारी शैली में स्तुति की है। 'यागमयी सृष्टि' में स्नान करके याज्ञिक मानव अपने में अपनेपन का दर्शन करता हुआ तप-सम्भावना का क्रियात्मक अनुभव करने लगता है।

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज का सारा जीवन क्रियात्मक यागों के प्रचार-प्रसार में लगा रहा। उन्होंने ग्राम-ग्राम, नगर-नगर भ्रमण कर हज़ारों वेद-पारायण यागों का आयोजन करवाया। अनेक श्रद्धालुओं को पञ्चयागों में योजित किया और अनेकों के हृदय में याग और योग की भूमिका बनाई। उन्होंने, बरनावा, मेरठ में लाक्षागृह आश्रम को एक दिव्ययाग-स्थली का रूप प्रदान किया, जहाँ समय-समय पर वर्ष भर चतुर्वेद और वेद-पारायण यागों का आयोजन होता रहता है। परम्परानुसार, इस वर्ष होलिका पर्व से पूर्व आयोजित चतुर्वेद पारायण याग के शुभ अवसर पर यज्ञ-प्रेमियों की प्रतिष्ठा में यह पोथी प्रस्तुत है।

वैदिक अनुसन्धान समिति उन सभी महापुरुषों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है, जिन्होंने प्रस्तुत पोथी के प्रकाशन के लिये सात्विक सहयोग प्रदान किया। समिति प्रभु से उनके दीर्घ-जीवन में समृद्धि और संवृद्धि की कामना करती है!

# अनुक्रमणिका

पूज्यपाद गुरूदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

# पूज्यपाद ब्र० कृष्णदत्त जी महाराज

उत्तर प्रदेश के ग़ाज़ियाबाद जनपद में मुरादनगर के निकट स्थित खुर्रमपुर-सलीमाबाद गाँव में, एक निर्धन, अशिक्षित, कबीर पन्थी जुलाहे के घर इनका जन्म हुआ। उल्टी प्रक्रिया में, अर्थात् उल्टे पैरों पैदा होने पर नाम रखा गया कृष्णदत्त। गाँव के अशिक्षित परिवेश में इनके जन्म समय का कोई निश्चित सङ्केत नहीं मिलता। फिर भी उनके परिवार के सदस्यों, उनके गाँव के समवायी शिक्षित महानुभावों के सङ्केतों और अन्य तथ्यों के आधार पर ऐसा प्रतीत होता है कि इनका जन्म सन् १६४२ के उत्तर चातुर्मास्यकाल में हुआ।

कहते हैं, जब पूज्य ब्र० जी लगभग दो मास की अवस्था के ही थे, एक दिवस उनकी माता ने उन्हें शवासन में लेटा दिया। कुछ समय उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस अवस्था में शिशु को पाकर परिवार के सदस्य चकित हुए। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर गाँव के ओझा-पण्डित का सहारा लिया गया और भूत-प्रेत का प्रभाव मानकर तदनुरूप शिशु का उपचार प्रारम्भ हो गया और अनेक प्रकार से यातनाएँ दी जाने लगीं। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं। आयु बढ़ने के साथ वाणी स्पष्ट होने पर बाल्य ब्र० जी उस विशेष अवस्था में जाते तो मन्त्र-पाठ और कथा-वाचन स्पष्ट सुनाई देते। आश्चर्य चकित ग्रामवासी गर्दन हिलने और कथा सुनने के इस विचित्र अनुभव को अपने-अपने आधार पर ग्रहण करने लगे।

छः वर्ष की आयु में उन्हें भयानक चेचक निकली। उन्हें शवासन में लिटाये रखा जाता और उस विशेष अवस्था में जाकर उनके प्रवचन होते ही रहते थे। दोनों ओर गर्दन हिलने से उनका पूरा मुख-मण्डल और सिर छिल-छिल कर फोड़े की तरह बन गये थे। पड़ौस के बूढ़े लोगों को अभी भी वह समय याद है और कोई यह नहीं कहता था

कि बालक कृष्णदत्त बच जायेगा। परन्तु प्रभु की कृपा से उसकी अमूल्य निधि मानव-कल्याण के लिए सुरक्षित रही।

सामान्यतः, उन्हें करवट से ही सुलाया जाता था, लेकिन जब कभी शवासन की स्थिति बमती तो कुछ समय के पश्चात् उसी प्रकार गर्दन हिलने लगती और कथा प्रारम्भ हो जाती। धीरे-धीरे गाँव के लोगों को उनकी कथाएँ समझ आने लगीं। उनके पिता उनकी इस अवस्था में जाने से बहुत चिन्तित रहते थे। जब वे ७ वर्ष की अल्पायु के ही थे, तो उनके पिता ने अपने गाँव के चौधरी खचेडू सिंह और चौधरी इन्द्रराज सिंह त्यागी के यहाँ उन्हें नौकर रख दिया। वहाँ ब्र० जी, पशुओं को जङ्गल में चराना, घास लाना, पशुओं का चारा, पानी भरना मेहमानों की सेवा करना, हुक्का भरना, पैर दबाना, कोल्हू में गन्ना डालना, गुड़ बनाना आदि काम करते थे। वहाँ भी जब कभी वह विशेष अवस्था बनती तो कथा प्रारम्भ हो जाती थी। इस प्रकार उनका सामान्य जीवन औपचारिक शिक्षा से वञ्चित रहा।

पशु चराते हुए साथी ग्वाले, बालक ब्र० की इच्छा न होते हुए भी बल से, हाथ, पैर तथा सिर पकड़कर सीधा लेटाते और अपेक्षित रूप में गर्दन हिलने एवं कथा सुनने का मनोरञ्जन करते थे। धीरे-धीरे गाँव के आसपास के अन्य गाँवों में विचित्र बालक का तथाकथित परिचय बढ़ने लगा। ग्राम के विवाहादि उत्सवों में विचित्र बालक को बुलाया जाने लगा और दिव्य प्रवचन क्रिया को मनोरञ्जन का साधन बनाया जाने लगा।

अन्य लोगों की तरह ब्र० जी भी इस अवस्था को व्याधि अथवा अन्य प्रभाव ही मानते थे। उनके परिवार के सदस्य अनेक प्रकार से उन्हें प्रताड़ित करते थे। ब्र० जी कष्टों से परिपूर्ण अपने जीवन को भार रूप में व्यतीत कर रहे थे। एक दिवस, इनकी कथा-प्रक्रिया के पश्चात् पिता द्वारा अत्यधिक पिटाई किये जाने पर इनके मन में विचार आया कि यहाँ कष्ट पाते रहने से तो अच्छा है कहीं जाकर अपना

इलाज कराया जाये, अन्यथा जीवन समाप्त कर दिया जाये। लगभग १५ वर्ष की अवस्था में, शीत काल की मध्य रात्रि में, लगभग एक बजे, अपने परिवार और गाँव को छोड़कर भाग खड़े हुए। उपचार की आशा में एक-डेढ़ मास इधर-उधर भटकते हुए, बरनावा में श्री धर्मवीर त्यागी के घर जा पहुँचे। त्यागी जी उनके पूर्व नियोक्ता इन्द्रराज सिंह से सम्बन्धित थे और उनका परिवार इन्हें जानता था। वहाँ उनकी कथा होती रहती। कई मास कथा चलती रही। ग्रामीण लोग आते और सुनते रहते थे। कुछ श्रद्धा से समझते हुए सुनते और अन्य कौतुहल से।

बरनावा (वारणावत,) मेरठ-जनपद में हिण्डन और काली नदी के सङ्गम पर स्थित है। यहीं महाभारत काल का ऐतिहासिक 'लाक्षागृह' (लाखामण्डप) का टीला है, जहाँ कौरवों ने पाण्डवों को अग्नि में जलाने का षड्यन्त्र रचा था और सौभाग्य से पाण्डव वहाँ से बच निकले थे। यह टीला बड़े विशाल रूप में आज भी विद्यमान है। इसी स्थान से महर्षि महानन्दजी का सम्बन्ध ब्र० जी के भौतिक-पिण्ड से हुआ, ऐसा बरनावा निवासियों से मालूम हुआ। उनका कथन है कि जिस समय प्रारम्भ में यहाँ ५-६ मास तक कृष्णदत्त जी की कथा हुई तो कभी कथा में महानन्द मुनि का कोई सङ्केत, अथवा नामोच्चारण नहीं हुआ था। एक दिन ब्र० जी अपने चार साथियों के साथ घूमते हुए इस लाखामण्डप को देखने गये। थोड़ी देर घूम-फिर कर आ गये और उसी दिन रात्रि की कथा में महानन्द जी ने यह कहा कि गुरु जी आज तो आप हमारे आश्रम में गये थे। तब से उनके प्रवचनों में महानन्द जी के प्रश्नोत्तर होने लगे।

उनके प्रवचनों से स्पष्ट हुआ कि ब्र० कृष्णदत्त जी पूर्व जन्मों में शृंगी ऋषि रहे हैं और महानन्द जी उनके सूक्ष्मशरीरधारी, योगसिद्ध शिष्य रहे हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि महाभारत की लाक्षागृह-अग्निकाण्ड-स्थली पूर्व समयों से महानन्द जी की तपोभूमि रही है। और पू० ब्र० कृष्णदत्त जी के यहाँ पदार्पण तक महानन्द जी श्राद्धरूप में तपस्या करते रहे।

कि बालक कृष्णदत्त बच जायेगा। परन्तु प्रभु की कृपा से उसकी अमूल्य निधि मानव-कल्याण के लिए सुरक्षित रही।

सामान्यतः, उन्हें करवट से ही सुलाया जाता था, लेकिन जब कभी शवासन की स्थिति बनती तो कुछ समय के पश्चात् उसी प्रकार गर्दन हिलने लगती और कथा प्रारम्भ हो जाती। धीरे-धीरे गाँव के लोगों को उनकी कथाएँ समझ आने लगीं। उनके पिता उनकी इस अवस्था में जाने से बहुत चिन्तित रहते थे। जब वे ७ वर्ष की अल्पायु के ही थे, तो उनके पिता ने अपने गाँव के चौधरी खचेडू सिंह और चौधरी इन्द्रराज सिंह त्यागी के यहाँ उन्हें नौकर रख दिया। वहाँ ब्र० जी, पशुओं को जङ्गल में चराना, घास लाना, पशुओं का चारा, पानी करना मेहमानों की सेवा करना, हुक्का भरना, पैर दबाना, कोल्हू में गन्ना डालना, गुड़ बनाना आदि काम करते थे। वहाँ भी जब कभी वह विशेष अवस्था बनती तो कथा प्रारम्भ हो जाती थी। इस प्रकार उनका सामान्य जीवन औपचारिक शिक्षा से वञ्चित रहा।

पशु चराते हुए साथी ग्वाले, बालक ब्र० की इच्छा न होते हुए भी बल से, हाथ, पैर तथा सिर पकड़कर सीधा लेटाते और अपेक्षित रूप में गर्दन हिलने एवं कथा सुनने का मनोरञ्जन करते थे। धीरे-धीरे गाँव के आसपास के अन्य गाँवों में विचित्र बालक का तथाकथित परिचय बढ़ने लगा। ग्राम के विवाहादि उत्सवों में विचित्र बालक को बुलाया जाने लगा और दिव्य प्रवचन क्रिया को मनोरञ्जन का साधन बनाया जाने लगा।

अन्य लोगों की तरह ब्र० जी भी इस अवस्था को व्याधि अथवा अन्य प्रभाव ही मानते थे। उनके परिवार के सदस्य अनेक प्रकार से उन्हें प्रताड़ित करते थे। ब्र० जी कष्टों से परिपूर्ण अपने जीवन को भार रूप में व्यतीत कर रहे थे। एक दिवस, इनकी कथा-प्रक्रिया के पश्चात् पिता द्वारा अत्यधिक पिटाई किये जाने पर इनके मन में विचार आया कि यहाँ कष्ट पाते रहने से तो अच्छा है कहीं जाकर अपना

इलाज कराया जाये, अन्यथा जीवन समाप्त कर दिया जाये। लगभग १५ वर्ष की अवस्था में, शीत काल की मध्य रात्रि में, लगभग एक बजे, अपने परिवार और गाँव को छोड़कर भाग खड़े हुए। उपचार की आशा में एक-डेढ़ मास इधर-उधर भटकते हुए, बरनावा में श्री धर्मवीर त्यागी के घर जा पहुँचे। त्यागी जी उनके पूर्व नियोक्ता इन्द्रराज सिंह से सम्बन्धित थे और उनका परिवार इन्हें जानता था। वहाँ उनकी कथा होती रहती। कई मास कथा चलती रही। ग्रामीण लोग आते और सुनते रहते थे। कुछ श्रद्धा से समझते हुए सुनते और अन्य कौतुहल से।

बरनावा (वारणावत,) मेरठ-जनपद में हिण्डन और काली नदी के सङ्गम पर स्थित है। यहीं महाभारत काल का ऐतिहासिक 'लाक्षागृह' (लाखामण्डप) का टीला है, जहाँ कौरवों ने पाण्डवों को अग्नि में जलाने का षड्यन्त्र रचा था और सौभाग्य से पाण्डव वहाँ से बच निकले थे। यह टीला बड़े विशाल रूप में आज भी विद्यमान है। इसी स्थान से महर्षि महानन्दजी का सम्बन्ध ब्र० जी के भौतिक-पिण्ड से हुआ, ऐसा बरनावा निवासियों से मालूम हुआ। उनका कथन है कि जिस समय प्रारम्भ में यहाँ ५-६ मास तक कृष्णदत्त जी की कथा हुई तो कभी कथा में महानन्द मुनि का कोई सङ्केत, अथवा नामोच्चारण नहीं हुआ था। एक दिन ब्र० जी अपने चार साथियों के साथ घूमते हुए इस लाखामण्डप को देखने गये। थोड़ी देर घूम-फिर कर आ गये और उसी दिन रात्रि की कथा में महानन्द जी ने यह कहा कि गुरु जी आज तो आप हमारे आश्रम में गये थे। तब से उनके प्रवचनों में महानन्द जी के प्रश्नोत्तर होने लगे।

उनके प्रवचनों से स्पष्ट हुआ कि ब्र० कृष्णदत्त जी पूर्व जन्मों में शृंगी ऋषि रहे हैं और महानन्द जी उनके सूक्ष्मशरीरधारी, योगसिद्ध शिष्य रहे हैं। यह भी ज्ञात हुआ कि महाभारत की लाक्षागृह-अग्निकाण्ड-स्थली पूर्व समयों से महानन्द जी की तपोभूमि रही है। और पू० ब्र० कृष्णदत्त जी के यहाँ पदार्पण तक महानन्द जी श्राद्धरूप में तपस्या करते रहे।

ब्र० जी के हृदय में इस टीले को आश्रम में परिवर्तित करने की प्रेरणा बलवती होने लगी। लोग इनके प्रवचनों की सार्थकता समझने लगे और धीरे-धीरे इनकी लोकप्रियता बढ़ने लगी। समीपवर्ती गाँवों में उन्हें प्रवचन के लिये बुलाया जाने लगा। इन्हीं दिनों यज्ञों में उनकी रुचि बढ़ने लगी और जिस परिवार में प्रवचन/कथा करते, वहाँ यज्ञ करने की प्रेरणा भी देते। विशेष रूप से उनकी विदाई के समय यज्ञ होने लगे। तभी ब्र० जी ने लाक्षागृह टीले पर भी यज्ञों के आयोजन की प्रेरणा दी।

आर्य जगत् के अनेक प्रतिष्ठित विद्वान इस अशिक्षित ग्रामीण युवक की विचित्र अवस्था, दिव्य प्रवचन-शैली और विलक्षण वैदिक प्रभाव को देखकर इनकी ओर आकर्षित हुए। उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित आचार्य सुरेन्द्र शर्मा गौड़ जी, श्री ब्र० कृष्णदत्त जी की विलक्षण प्रवचन क्रिया एवं प्रवचन शैली से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने साप्ताहिक पत्र, 'आर्यमित्र' में इनके विषय को प्रकाशित कराया। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को लिखा और वैदिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट किया कि उनकी यह अवस्था योग की दिव्य मुद्रा है, समाधि है।

सन् १९५८-५९ ई० में,वैद्य, पं० प्रकाश चन्द्र जी शास्त्री ने विनय नगर के आर्य समाज प्रधान को ब्र० जी के विषय में बताया और इस प्रकार ब्र० जी को दिल्ली बुलाने की योजना बनने लगी। अन्ततः शास्त्री जी, आकाशवाणी के डॉ० बनवारी लाल जी शर्मा एवं अन्य महानुभावों के प्रयत्न से दिनाङ्क २८ दिसम्बर ,१९६१ को ब्र० कृष्णदत्त जी महाराज आर्यसमाज, विनय नगर में पधारे। अगले दिन, वहाँ, भारत सेवा समाज के स्थान पर इनका प्रवचन लगभग २५० जिज्ञासुओं ने सुना और मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। दिल्ली में कई दिन तक प्रवचनों के कार्यक्रम होते रहे। आत्मा-परमात्मा, प्राण की महत्ता, अनावृष्टि-अतिवृष्टि आदि अनेक विषयों पर इनके दिव्य प्रवचन हुए। अनेक प्रतिष्ठित विद्वानों,

दार्शनिकों और मनोवैज्ञानिकों ने इनके प्रवचनों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सुना और गम्भीर विश्लेषण हुआ।

१ जनवरी, १९६२ को इनके प्रवचन को प्रथम बार टेप रिकॉर्ड किया गया। प्रत्येक दिन नवीन् विषय होता था। धीरे-धीरे प्रवचनों को सुनने वालों की संख्या बढ़ने लगी। ७ जनवरी को एक विशेष यज्ञ के पश्चात् लगभग दस हज़ार लोगों की भव्य उपस्थिति में प्रवचन हुआ। सौल्लास निर्णय लिया गया कि इनके बहुमूल्य प्रवचनों की निधि को रिकार्ड किया जाना चाहिये और इनकी यौगिक क्रिया एवं प्रवचन-सामग्री पर अनुसन्धान होना चाहिये। शीघ्र ही 'वैदिक अनुसन्धान समिति, नई दिल्ली' का गठन किया गया। इस प्रकार प्रवचन टेप होने लगे और प्रकाशन कार्य प्रारम्भ हो गया। उधर ब्र० जी के लिये देश के कोने-कोने से निमन्त्रण आने लगे और ब्र० जी का जीवन यज्ञों और प्रवचनों में अत्यन्त व्यस्त हो गया।

ब्र० जी की प्रेरणा से लाक्षागृह टीले पर एक यज्ञशाला का निर्माण कराया गया और लाक्षागृह को एक आश्रम का रूप दिया गया। तदनन्तर, बरनावा आश्रम में, हर वर्ष शिवरात्रि एवं होलिका पर्व के मध्य दिनों में लगातार आठ दिनों का पूज्य ब्र० जी की प्रेरणा से एवं जनता जनार्दन के सहयोग से, चतुर्वेद पारायण यज्ञों का आयोजन हो रहा है। और इसी प्रकार रक्षाबन्धन के दिवस सामवेद परायण यज्ञ सम्पन्न होता है। पिछले कुछ वर्षों से आश्विन मास के कृष्णपक्ष की तृतीया को पूज्य ब्र० जी के जन्म-दिवस के रूप में मनाया जा रहा है और इस दिन भी सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन होता है। आजकल आश्रम में पाँच भव्य यज्ञशालाएँ हैं, जहाँ हज़ारों-हज़ारों की संख्या में वैदिक श्रद्धालु यज्ञ एवं प्रवचनों के दिव्यामृत से लाभान्वित होते हैं।

ब्र० जी की ही प्रेरणा से लाक्षागृह आश्रम में निःशुल्क वैदिक शिक्षा के लिए एक संस्कृत विद्यालय की स्थापना हुई। ब्र० जी के योग सिद्धात्मा शिष्य ही के नाम पर विद्यालय का नामकरण हुआ। सन् १९६५ में

लाक्षागृह-आश्रम में यज्ञों एवं शिक्षण के प्रबंधन के लिए 'श्री गांधी धाम समिति' नाम से एक समिति का गठन हआ। शनै-शनै, यथापेक्षा, यहाँ पर्याप्त कमरे, गऊशाला, खेती के लिए पर्याप्त भूमि तथा ट्यूबवेल और अन्य साधनों का प्रबन्ध हो गया।

सम्प्रति, इस संस्कृत महाविद्यालय में लगभग १५० छात्र, वैदिक शिक्षण-पद्धति के आधार पर, आचार्य स्तर तक विभिन्न विषयों में प्रबुद्ध अध्यापकों द्वारा शिक्षार्जन कर रहे हैं। आज भी यहाँ के विद्वान आचार्य, देश के कोने-कोने में याग करवा रहे हैं और ब्र० जी द्वारा वेद एवं यज्ञ-प्रचार की ज्योति को प्रभावी रूप से देदीप्त कर रहे हैं।

पूज्य ब्र० जी की योग मुद्रा में जाने की प्रक्रिया पर गम्भीर अनुसन्धान की आवश्यकता है। यूं तो इनके प्रवचनों में ही महर्षि महानन्द जी ने इस क्षेत्र में एवं पूज्य ब्र० जी से जुड़े सभी प्रश्नों पर व्यापक प्रकाश डाला है और यह एकदम स्पष्ट है कि पूज्य ब्र० जी आदि ब्रह्मा के वरिष्ठ शिष्य शृंगी ऋषि की आत्मा थे और इनका यह जीवन आदि ब्रह्मा जी के एक श्राप का परिणाम था। त्रेता काल में इनके ही द्वारा पुत्रेष्टि यज्ञ करवाने से भगवान राम अवतरित हुए थे। परन्तु उस विशेष समाधि अवस्था में दिये जाने वाले इनके प्रवचन, अन्तरिक्ष-स्थित ऋषि-मण्डल में सूक्ष्म शरीरधारी योगसिद्ध आत्माओं को सम्बोधित होते थे और उनका यह शरीर एक दिव्य-यन्त्र की भान्ति उस आकाशवाणी से पृथ्वीमण्डल पर हम लोगों को प्रेरणार्थ योजित करता था। उनकी यह प्रवचन-प्रक्रिया यौगिक थी, जिसे प्राणसत्ता को जांनने वाले ही ग्रहण कर सकते हैं। अनेक लोगों ने इनकी यौगिक प्रक्रिया पर अनुसन्धान किये हैं।

१९६४ में, प्रतिष्ठित योग विद्वान् स्वामी योगेश्वरानन्द जी ने इनकी योग-मुद्रा एवं प्रवचन प्रक्रिया पर विशेष अनुसन्धान किये और अपने यौगिक बल से इनकी प्रतिभा को जाना। स्वामी प्रभु आश्रित जी, स्वामी सच्चिदानन्द सरस्वती, डॉ० रणवीर सिंह शास्त्री विद्यावाचस्पति, पण्डित धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड, महान् वैयाकरण एवं दार्शनिक डॉ० श्री हरिदत्त

जी शास्त्री, विश्वनाथ प्रसाद जी, डॉ० देशमुख महोपाध्याय, श्री पं० वीरसेन जी वेदश्रमी आदि अनेक विद्वानों ने ब्र० जी की योग-मुद्रा एवं प्रवचन प्रक्रिया पर अनुसन्धान किये और अपनी शुभ सम्मतियां प्रकट कीं।

१९६६ में, माननीय विज साहब ब्र० जी को हैदराबाद ले गये। वहाँ तत्कालीन शिक्षामन्त्री एवं भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री नरसिंहाराव जी ने खण्डुराव देसाई एवम् अन्य राजनीतिज्ञों के साथ ब्र० जी के प्रवचनों का आयोजन करवाया। 'राजा का धर्म' विषय पर हुए एक प्रवचन को सुनकर सब आश्चर्य चकित रह गये। भूतपूर्व मन्त्री श्री बलराम जाखड़ एवं भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद के सुपुत्र डॉ० मृत्युञ्जय प्रसाद जी ने भी इनके प्रवचनों को सुना है और आश्चर्यबद्ध होकर प्रशंसा की है।

इनकी योग मुद्रा में जाने की प्रक्रिया बड़ी विचित्र थी। प्रवचन से पूर्व इन्हें कोई ज्ञान नहीं होता था कि ये किस विषय पर प्रवचन करेंगे और प्रवचन के उपरान्त भी यही दशा बनी रहती थी। उन्हें ज्ञान नहीं रहता था कि उन्होंने कब और कैसे क्या कहा। प्रारम्भ में ब्र० जी चादर लेकर शवासन में लेट जाते थे। चादर ओढ़ने का उद्देश्य बाह्य अशान्त प्रभाव से बचना था। ४-५ मिनट तक उन्हें सामान्य रहने का आभास रहता था। उसके बाद उन्हें पूर्व स्थिति का कोई ज्ञान नहीं रहता था। योगविदों के अनुसार, इसके बाद इनके प्राण एकीकृत होकर ब्रह्मरन्ध्रोन्मुखी हो जाते थे, और समाधि लग जाती थी। पूज्य ब्र० जी अन्तरिक्ष के किसी ऐसे मण्डल से सम्बन्ध स्थापित कर लेते, जहाँ योगसिद्ध आत्माएँ उनके पूर्व जन्मों के दिव्य ज्ञान की अपेक्षा में सभा योजित होती थीं। इस प्रकार, लगभग दस मिनट तक उस अवस्था में लेटे रहने के पश्चात् वे दोनों हाथों से चादर को मुख से उतारते थे और हाथों को वक्षस्थल पर विचित्र पाठ-मुद्रा में लाते थे। गर्दन के ऊपर का भाग दायें-बायें, दोनों ओर तीव्र रूप से गति करने लगता था, सम्भवतः यह प्राणों का सङ्घात था, और अति मधुर ध्वनि में मन्त्र-गायन प्रारम्भ हो जाता था।

मन्त्र गायन में वेद-मन्त्रार्थों की प्रतिभा का भान तो होता ही है, साथ ही वैदिकोत्तर काल में विकसित होने वाली किसी वेद-भाष्यी भाषा का बोध भी होता है। सम्भवतः यह ब्राह्मी का प्राचीन रूप है। मन्त्र-गायन की समीक्षा से ऐसा बोध भी होता है, जैसे उस काल में ऐसे विशिष्ट विद्यालय, अथवा गुरुकुल प्रणाली रही हो, जहाँ अपने प्रकार की ऐसी समवैदिकी भाषा का विकास होता रहा था। गायन तो तत्सम छन्दोबद्ध ही रहा है, परन्तु शब्द-रूप एवं मन्त्र-विन्यास अपनी अलग विधा का बोध कराते हैं। लगभग दस मिनट तक मन्त्रोच्चारण चलता था। मन्त्रोच्चार के उपरान्त मनोहारी एवं मधुर ध्वनि में आशीर्वचन (जीते रहो !) सुनाई पड़ता था। और, 'देखो, मुनिवरो !' सम्बोधन के साथ, एक मनोहारी और वृद्ध ऋषि-तुल्य भाषा में लगभग ४० मिनट का ज्ञानगर्भित एवं विज्ञान पुष्ट प्रवचन होता रहता था। कभी-कभी प्रवचन की अवधि अधिक भी होती थी।

प्रवचन की धारा-प्रवाहिता, विषय-विन्यास एवं दर्शन का स्तर इतना उत्कृष्ट एवं वैज्ञानिक होता था कि जिसे सुनकर आज भी बड़े-बड़े विद्वानों का मस्तिष्क कल्पना में नृत्य करने लगता है। प्रवचन में इतनी सरसता और सात्विकता होती है कि अल्पज्ञ श्रोता विषय-सामग्री के ग्रहण स्तर में न होता हुआ भी, बन्धा हुआ सा रहता है।

प्रवचनों की विषय सामग्री, ऋषि-मुनियों के वैदिक, यौगिक एवं व्यावहारिक अनुभवों, दृष्टान्तों, मानव-धर्म और मानवीयता के तथ्यों से ओतप्रोत रहती है। सम्पूर्ण मानवता के लिये ग्राह्य वैदिक ज्ञान और आचरण की ये अनूठी चर्चाएँ, न केवल इतिहास, विज्ञान एवं दर्शन से जुड़ी गुत्थियों को सुलझाती हैं, बल्कि सम्प्रदायों, रुढ़िवादिता, साहित्य एवम् इतिहास के प्रक्षेपों से भ्रमित, आज के मानव को जीवन के सभी क्षेत्रों में आचरण योग्य विशुद्ध साकल्य भी उपलब्ध कराती हैं। प्रवचन की भाषा सुमधुर तत्सम हिन्दी रही है। कभी-कभी प्रवचनों की भाषा, संस्कृत भी रही है। कुछ प्रवचन तो पूर्णरूप से संस्कृत में ही हैं।

इनके प्रवचनों में तीन और आत्माओं—आदि ब्रह्मा (इनके पूज्यपाद

गुरुदेव), इनके शिष्य महर्षि लोमश मुनि और महर्षि महानन्द मुनि की वार्ताएँ भी आयी हैं। महर्षि महानन्द जी के तो इनसे प्रश्नोत्तर, प्रायः होते रहे हैं। यज्ञ की पूर्णाहुति के पश्चात् यजमान के लिए आशीर्वचनों और राष्ट्रवाद पर इनकी दिव्य टिप्पणियों से पूर्ण वार्ताएँ तो सर्व अपेक्षित रही हैं।

ब्र० जी की बढ़ती लोकप्रियता और प्रवचनों से पाखण्ड एवं रूढ़िवाद के युक्तियुक्त खण्डन के कारण अनेक बार उन पर शारीरिक हमले हुए। एक बार तो औषधि रूप में उन्हें कच्चा पारा खिला दिया गया, जिसके कारण उनका शरीर फोड़े-फोड़े हो गया और हृदय तथा फेफड़ों को गहरी क्षति पहुँची थी।

सामान्य अवस्था में, एक सामान्य से प्रतीत होने वाले ब्र० जी ने अपने छोटे से जीवन काल में ५००० के लगभग वेद पारायण यज्ञों का आयोजन करवाया, जिनमें लगभग ३५ चतुर्वेद पारायण यज्ञ हैं। आज के वाममार्ग काल में, ग्राम-ग्राम, नगर-नगर घूम कर इस महामानव ने महर्षि दयानन्द द्वारा पुनर्जागृत वेद एवं यज्ञ-प्रचार की ज्योति को हज़ारों-हज़ारों परिवारों में देदीप्यमान कर दिया। अनेक श्रद्धालुओं को 'दैनिक-यज्ञ' में योजित किया।

आजीवन ब्रह्मचारी रहकर सात्विक एवं सादा जीवन जीने वाले ब्रह्मचारी जी की निस्पृहता, निरभिमानता आदि सभी विचारशीलों को अत्यन्त प्रभावित करती थीं। उनकी विलक्षण स्मरण शक्ति और सबके प्रति अगाध प्रेम ने उन्हें 'सभी का अपना' बना दिया था।

यज्ञों के विस्तार की भूमिका बनाते हुए और अपने दिव्य यौगिक प्रवचनों द्वारा ब्रह्म-ज्ञान का प्रसारण करते हुए, यह दिव्यात्मा, १५ अक्तूबर १९९२ को ब्रह्म मुहूर्त के समय, ५० वर्ष की अवस्था में, ब्रह्म-लोक के लिए महाप्रयाण कर गयी। यद्यपि, पूज्यपाद ब्र० कृष्णदत्त जी, आज हमारे मध्य नही हैं, लेकिन, उनकी वेदवाणी, यज्ञों की भूमिका और उनकी दिव्य-प्रेरणाएँ, सर्वदा-सर्वदा, मानव-मात्र का मार्गदर्शन करती रहेंगी !

# प्रतिष्ठावाद

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महान है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है, जिसके ऊपर हमारे यहाँ परम्परागतों से मानव अपने में उसका विचार-विनिमय करता रहा है। क्योंकि हमारे यहाँ जब वेदों का उद्गीत गाया जाता है, तो वह भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में रत्त होता रहा है, जैसे हमारे यहाँ गान गाने वाला गान गाता है तो वह जटा-पाठ और घन-पाठ में मानो 'उसकी' प्रतिभा का अपने में यशोगान गाने लगता है। इससे पूर्व काल में हमने तुम्हें यह प्रकट कराते हुए कहा था कि जब ज्ञान अपने में वर्णित होता है तो अपने में वह गुणगान गाता है और गान गाने वाला गाता ही रहता है और वह उद्गीत रूप में मानो उसका गान गाता है, इसीलिए हम परमपिता परमात्मा का जो यशोगान है अथवा उसकी जो महती है उसको हम अपने में धारण करते रहते हैं।

## प्रकाश और वैदिक गान

आओ, मुनिवरो! आज का हमारा वेद-मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है और उसके गुणों का गुणगान गा रहा

है। मुनिवरो! हमारे यहाँ, ऋषि-मुनि जब यह विचारते रहते हैं कि वेदों का गान गाना एक 'प्रकाश भवितं वर्णस्सुतं ब्रह्मः' क्योंकि वेद हमारे यहाँ प्रकाश की रु.शा में प्रकाशक माना गया है। वेद का ऋषि कहता है, प्रश्न करने वाला कि—"महाराज! जब हम वेदों का गान गाते हैं, आप उसको प्रकाश की संज्ञा प्रदान करते हैं, परन्तु प्रकाश तो यह सूर्य का भी उदय हो रहा है और यह प्रातः काल से मानो उदय हो करके सायं काल तक प्रकाश देता रहता है।" परन्तु आचार्यजन यह कहते रहे हैं कि जब वह गान गाने वाला गान गाता है तो 'गानां भवितं ब्रह्मः वर्णस्सुत प्रवः', मेरे प्यारे! जब वह गान गाता है तो 'गानां भूतं ब्रह्मः वर्णस्तुते', **आचार्य यह कहता है कि यह जो प्रकाश है वह मानव के बाह्य नेत्रों को प्रकाशक बनाता रहता है, परन्तु यह जो वेदों का प्रकाश है, यह मानव के अन्तःकरण को प्रकाशमान बनाता है और अन्तः करण का जो प्रकाश है यह ही अनुपम प्रकाश माना गया है।** आओ, मुनिवरो! देखो हम इस प्रकाश के लिए सदैव अपने में गान गाते रहें, अपने में यह विचारते रहें कि यह गान गा रहा है तो उस प्रकाश के लिए। हम सदैव अपने में याचक बने रहें और यह विचारते रहें कि यह हमारे अन्तःकरण का प्रकाश है और मानव के अन्तः करण को प्रकाश में लाना बहुत अनिवार्य है।

## जनक की सभा में याज्ञवल्क्य-गार्गी संवाद

आओ, मुनिवरो! देखो हम उस परमपिता परमात्मा के अनुपम प्रकाश के लिए प्रकाशक बने रहें और प्रकाश में मानो सदैव रत्त होते रहें। तो विचारवेत्ता यह कहता है, विचारं भवितं ब्रह्मः' मुझे, बेटा! वह काल स्मरण आता रहता है, राजा जनक के यहाँ, बेटा! नाना प्रकार के

याग होते रहे हैं। उनके यहाँ, कहीं मानो देखो, ब्रह्मयाग होता रहा है और कहीं उनके यहाँ देवयाग को अपने में याज्ञिक रूपों में परिणित किया है। मेरे प्यारे! देखो, 'ब्राह्मण वृत्तं देवाः', याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, बेटा! अपनी सभा में विद्यमान हैं और सभा में आने से 'सम्भूति ब्रह्मणः वृत्ताः' मानो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से नाना प्रकार के जहाँ प्रश्न किये जा रहे थे तो उन प्रश्नों में एक प्रश्न था, "ब्रहो सम्भवः ब्रह्मणः कृति देवः' चक्राणी गार्गी उपस्थित हो करके बोली—"हे प्रभु! मैं आप से कुछ जानना चाहती हूँ।" उन्होंने कहा—"देवी! तुम प्रश्न करो, जितना मैं जानता होऊंगा, उतना उत्तर अवश्य दूंगा।" उन्होंने ब्रह्म-वेत्ताओं से कहा—"हे ब्रह्मवेत्ताओ! यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो मैं इस आचार्य से कोई प्रश्न कर संकू?" ब्रह्मवेताओं ने कहा कि—"अवश्य कीजिए।"

## सांसारिक प्रतिष्ठा—पृथ्वी

तो चाक्राणी गार्गी ने उनसे एक प्रश्न किया कि—"महाराज! यह जो संसार मुझे दृष्टिपात् आ रहा है, चाहे वह जड़ रूप में है, चाहे वह चैतन्य रूप में विद्यमान है, प्रभु मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो संसार मुझे दृष्टिपात् आ रहा है, यह नाना प्रकार की सृष्टि वाला जगत्, हे भगवन्! यह ब्रह्माण्ड, यह कहाँ किसमें प्रतिष्ठित हो जाता है? क्योंकि मैं प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में जानती रहती हूँ। हे प्रभु! मेरा यह प्रसंग सदैव बना रहता है कि एक माता का पुत्र है, माता है, महामाता है, पितर है, महापितर है, परन्तु यह सर्व-जगत् है, और इसमें भी चार प्रकार की सृष्टियाँ मानो देखो निहित रहती हैं और उन सृष्टियों में, एक-एक सृष्टि में नाना प्रकार की योनियाँ विद्यमान होती हैं। हे भगवन्! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो संसार है, यह चार सृष्टियों में यह विभक्त होता

रहा है, मानो सबसे प्रथम यह स्थावर-सृष्टि है और द्वितीय अण्डज-सृष्टि मानी जाती है और तृतीय, भगवन्! यह जंगम और उद्भिज यह चार प्रकार की सृष्टियाँ, यह मुझे भली भान्ति दृष्टिपात् आते रहते हैं, परन्तु स्थावर सृष्टि में भी नाना प्रकार की मानो उनमे जातीयता का आभास होता है और अण्डज सृष्टि में भी नाना प्रकार की मानो योनियों का आभास होता रहता है, हे प्रभु! जंगम सृष्टि में भी इसी प्रकार असंख्य योनियों का मानो, दखो उसमें प्रतिपादन किया जाता है, इसी प्रकार देखो जो स्थावर सृष्टि है, इसमें भी इसी प्रकार का जगत् हमें दृष्टिपात् आता है, हे प्रभु! यह नवीन जगत् है और जगत् में भी नाना प्रकार के दन माने गये हैं, हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो संसार है, जो मुझे दृष्टिपात् आ रहा है, चाहे वह समुद्रों के रूप में हो, चाहे नद्य-नदियों के रूप में हो, चाहे वह पृथ्वी के रूप में विद्यमान हो, हे प्रभु! इसकी प्रतिष्ठा कहाँ है? कहाँ यह ओत-प्रोत होता है?"

मुनिवरो! देखो, जब यह याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने श्रवण किया तो याज्ञवल्क्य ने कहा कि "यह जो संसार है, इसकी जो प्रतिष्ठा है, यह मानो देखो पृथ्वी मानी जाती है और यह पृथ्वी में प्रतिष्ठित हो जाता है, इसका जो अपना पृथ्वी का जो स्वरूप है, वह मानो देखो 'अव्रहे' यह 'अमृतम्' गुरूत्व रूप में मानो इसका प्रतिपादन किया जाता है और इस पृथ्वी में ही मानो देखो यह प्रतिष्ठा, प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है। 'प्रतिष्ठा, प्रतिष्ठ, प्रतिष्ठप्रव्हा लोकाम्' मानो देखो यह सब उसमें प्रतिष्ठित हो जाता है।"

## पृथ्वी की प्रतिष्टा–जल

मेरे प्यारे। देखो, जब उन्होंने कहा कि यह पृथ्वी में ओत-प्रोत हो

जाता है तो उस समय, मानो देखो 'ऋषि वृत्तम्' ऋषि से चाक्राणी गार्गी ने कहा–"प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि मानो देखो, यह 'ब्रह्मम्' यह पृथ्वी कहाँ प्रतिष्ठित होती है? यह पृथ्वी में जब यह संसार निहित हो जाता है तो यह पृथ्वी कहाँ प्रतिष्ठित हो जाती है?" उन्होंने कहा–"यह जो पृथ्वी है, यह मानो आपो में ओत-प्रोत हो जाती है। आपो में यह प्रतिष्ठित हो जाती है, आपो ही इसका एक द्यौ-वृत्ति माना गया है, और यह इसी में ओत-प्रोत हो करके अपनेपन को धारण कर लेती है।" मेरे प्यारे! देखो, उन्होने कहा–" 'सम्भव प्रव्हे' "। देखो यह 'आपाम्' यह आपो में ही, मुनिवरो! यह सर्वत्र, पृथ्वी के नाना रूप इसमें प्रतिष्ठित हो जाते हैं। मानो देखो यह अपने में ही अपनेपन का अपनेपन में भासने लगता है।

## जल की प्रतिष्ठा–अग्नि

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि–"हे प्रभु! यह जो 'पृथ्वी ब्रह्म' यह जो 'आपा ब्रहे', आपा यह जो आपो है, यह कहाँ प्रतिष्ठित हो जाता है?" उन्होंने कहा–"यह आपो ही जल है, और यह जल मानो देखो आपो कहलाता है, यह आपो ही मुनिवरो! देखो अग्नि में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह अग्नि भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप में रत्त रहती है। यह अग्नि जब अपने वास्तविक स्वरूप में होती है तो एक-दूसरे को यह अपने में प्रतिष्ठित मानो देखो एक-दूसरे की सहायता में सहायक बन जाती है, और एक-दूसरे में एक दूसरे की प्रतिष्ठा हो जाती है। परन्तु यदि पदार्थों का सम्मिश्रण होता है तो इसका अपना सूक्ष्म रूप मानो देखो विशाल बन जाता है।

## सहायकवाद

मेरे प्यारे! यहाँ तो एक-दूसरे के सहायक बन करके (प्रकृति) अपने में क्रियाशील हो रही है। जैसे माता का पुत्र माता का सहायक बना हुआ है और पुत्र की माता सहायक बनी रहती है, पति-पत्नी एक-दूसरे के सहायक होते हैं, ऐसे ही भिन्न-भिन्न प्रकार के जो प्राणी हैं, वे एक-दूसरे के सहायक बन करके, बेटा! प्रतिष्ठा को प्राप्त कर रहे हैं। इसी प्रकार मुनिवरो! देखो एक-दूसरे में ओत-प्रोत होता हुआ यह आपो मानो अग्नि में प्रतिष्ठित हो जाता है और उसी में प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है।''

## अग्नि के–विभिन्न रूप

उन्होंने कहा–''प्रभु! यह भी मैने स्वीकार कर लिया। माता के कुल में जब मैं अध्ययन करती थी तो माता अपनी लोरियों का मुझे पान करा करके यह शिक्षा मुझे प्रदान करती रही है। मानो यही अग्नि भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में रत्त हुई है। जैसे गार्हपथ्य, गृहपथ्य, वैश्वानर और आह्वनीय मानो देखो, यही अग्नि वैश्वानर बन करके, यही अग्नि भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में रत्त हो करके, यही अग्नि आह्वनीय नाम की अग्नि कहलाती है। यह अग्नि भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में रत्त हो करके अणु और परमाणु में समाहित हो जाती है।'' मेरे प्यारे! यह अग्नि अपने में महान पवित्रता को प्राप्त करती रहती है और उसी में यह आपो प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है।

## अग्नि की प्रतिष्ठा–वायु

मेरे प्यारे! देखो उस समय जब चाक्राणी ने यह श्रवण किया तो

ऋषि से बोली—हे प्रभु! जब मुझे मेरी प्यारी माता अपने अंग-संग विद्यमान करके मुझे यह शिक्षा देती रही है और मुझे यह कहा करती थी कि अग्नि का चयन करो, अग्नि हमारे इस मानवीय शरीर में प्रविष्ठ है और अग्नि ही संसार का मानो पिण्ड रूप में 'पिण्डो अग्रो' को जन्म देती रहती है यह जो नाना प्रकार के पिण्ड विद्यमान हैं, चाहे वे लोक-लोकान्तरों के रूप में हों चाहे वे मानो सूर्य और चन्द्र के रूप में विद्यमान हों, यह सर्वत्र एक पिण्ड रूप बना हुआ है, चाहे वह माता के गर्भ-स्थल में पिण्ड बना हो परन्तु देखो यह जितनी योनियाँ हैं, सब पिण्डाकार कहलाती हैं और ये एक-दूसरे में प्रतिष्ठित रहती हैं। तो इसी प्रकार यह जो अग्नि है, 'अग्नं ब्रह्मः', देखो अग्नि वायु में प्रतिष्ठित हो जाती है, जहाँ वायु होती है वहीं अग्नि का प्रकाश होता है और अग्नि के प्रकाश में ही, मुनिवरो! यह देखो अपने में प्रकाशित रहती है और यह वायु अपने में अमृता यह उसकी जननी कहलाती है।"

## वायु का स्वरूप

मुनिवरो! देखो हम वायु के ऊपर विचार-विनिमय करें वायु गति है और यह मानो देखो कहीं प्राणों के रूप में गति करती है, कही अणु के रूप में गतिवान कहलाती है। यह एक-एक रूप में मानो वायु ही गति का स्रोत माना गया है तो इसलिए हमें विचारना है कि वायु के ऊपर हमें विचार-विनिमय करते हुए वायु के स्वरूप को जानना है। वायु जब इस रूप में होती है तो प्राण-सत्ता को प्रदान करती रहती है। यह परमात्मा की दी हुई अनुपम एक गति है, जिस गति को धारण करता हुआ मानव गतिवान हो रहा है। प्रत्येक परमाणु अपने में गतिवान बन रहा है। मेरे पुत्रो! देखो इसी प्रकार यह गति 'अमृतम्' कहलाती है।

## वायु-प्रतिष्ठा–अन्तरिक्ष

तो विचार आता है, मुनिवरो! ऋषि कहता है–"देवी! यह जो वायु है, यह गतिवान हो रही है, और अग्नि इसमें प्रतिष्ठित हो जाती है, परन्तु चाक्राणी बोली–"प्रभु! जब मैं आचार्य कुल में अध्ययन करती थी तो आचार्य मुझे इसका अवधान करते रहे हैं। मैं यह जानना चाहती हूँ, 'प्रभु! जब यह मानो देखो अग्नि भी न हो, यह 'अग्नि ब्रह्मः' और वायु कहाँ प्रतिष्ठित हो जाती है?" उन्होंने कहा–अन्तरात्मा ब्रह्मा कृतं वर्णस्सुतं ब्रव्हे', अन्तरिक्ष में यह ओत-प्रोत हो जाती है। मानो देखो, अन्तरिक्ष को देवत्त्व माना गया है, और उसी में यह प्रतिष्ठा को प्राप्त करता रहता है।"

मेरे पुत्रो! देखो जब इस प्रकार उन्होंने वर्णन किया तो ऋषि, मुनिवरो! देखो अन्तरिक्ष पर आ करके शान्त हो गया। उन्होंने कहा–**"देवी! यह जो सत् है यह भी अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत है, जैसे मानव के हृदय में सर्वत्र इन्द्रियों का विषय समाहित हो जाता है, इसी प्रकार मानो देखो बाह्य-जगत् में जितना भी यह तत्वों का विषय है, मानो पंच महाभूतों का विषय है, यह सर्वत्र मानो देखो अन्तरिक्ष में समाहित हो जाता है।** जैसे लोक-लोकान्तर अपने में गतिवान् रहते हैं, इसी प्रकार यह मानो देखो अपने स्वरूप में गतिवान हो जाते हैं। तो 'अमृतं ब्रह्मः अन्तरिक्षं ब्रव्हे' यह अन्तरिक्ष में मानो देखो एक-दूसरे की परिक्रमा करते रहते हैं, एक-दूसरे में प्रतिष्ठा को प्राप्त होते रहे हैं।"

## अन्तरिक्ष की प्रतिष्ठा–महतत्त्व

तो मेरे पुत्रो! जब उन्होंने यह कहा तो चाक्राणी और ऋषि भी दोनों मौन हो गये, परन्तु चाक्राणी के समीप एक वेद-मन्त्र स्मरण आया और वेद-मन्त्र कह रहा था, 'चन्द्रं ब्रव्हा कृतं देवो अस्सुतं बह्मः वर्णस्सुति देवत्वं प्रतिष्ठाम्' वेद-मन्त्र की एक आख्यायिका उन्हें स्मरण आई और उन्होंने कहा कि–'' 'वेदं ब्रह्मः' हे प्रभु! वेद-मन्त्र यह कहता है कि अन्तरिक्ष कहाँ प्रतिष्ठित होता है और यह जो अन्तरिक्ष है, यह महतत्त्व की प्रतिभा में प्रतिष्ठित हो जाता है अथवा शून्य बिन्दु में प्राप्त हो जाता है, जिसको महतत्त्व कहते हैं, सर्वत्र मानो एक-दूसरे में लय होता हुआ, एक-दूसरे में प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है।''

## महतत्त्व की प्रतिष्ठा–चन्द्र

मेरे पुत्रो! देखो उन्होंने कहा, चाक्राणी ने कि–हे प्रभु! मानो देखो यह जो महतत्त्व है, यह कहाँ प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है?'' उन्होंने कहा–यह जो महतत्त्व है, यह चन्द्रमा में ओत-प्रोत हो जाता है। 'चन्द्रमा ब्रह्मः वृते', चन्द्रमा ही मानो देखो शीतलता और अमृत का एक कुञ्ज माना गया है। हम इस अमृतमयी धारा को अपने में धारण करें।''

बेटा! ऋषि-मुनियों की बड़ी विचित्र एक शैली रही है उच्चारण करने की, मानो देखो ध्रुवा से ऊर्ध्वा में, ऊर्ध्वा से ध्रुवा में जाने की। उनकी एक मानो बड़ी विचित्र शैली रही है, क्योंकि वेदों के वांगमय में जब प्रवेश करते रहे हैं तो उनकी शैली में इस प्रकार की धाराएँ उसमें मानो ओत-प्रोत रही हैं। तो बेटा! देखो जब उन्होंने यह कहा–''कि देवी! यह जो चन्द्रमा है, यह महतत्त्व की प्रतिष्ठा में मानो उसको

भासता रहता है और यही मानो देखो नाना प्रकार की वनस्पत्तियों को, वनस्पत्तियों के रसों को अपने में धारण करता है और वही मानो देखो उन रसों को धारण करके वनस्पत्ति का रस मानो वनस्पति को प्रतिष्ठित कर देता है।'' मुनिवरो! देखो उसी में यह अपनी आभा को प्राप्त करता रहता है। तो विचार आता रहता है, हमारे यहाँ 'सम्भूति ब्रह्मः सम्भूति लोकां, देवत्रा लोकं ब्रह्मः' मेरे प्यारे! देखो वेद का ऋषि कहता है कि वह मुनिवरो! देखो उसमें प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है और 'प्रतिष्ठा धारा भूतं ब्रहे' मानो देखो प्रतिष्ठित हो करके अपनी धारा में परिणित हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! वेद का मन्त्र यह कहता है, चन्द्रमा जो वनस्पत्तियों के रस को ले करके भ्रमण करता और यह सबको रसों को प्रदान करता रहता है, चाहे यह माता के गर्भस्थल में हो, चाहे यह वनस्पत्तियों के रूप में हो, चाहे मुनिवरो! देखो वह खाद्यान्न में विद्यमान हो, चाहे यह खनिज में विद्यमान हो, सर्वत्रता में वही मानो देखो भासता रहता है और वह, मुनिवरो! देखो अपनी शीतलमयी आभा को परिणित करता रहता है।

## चन्द्रमा की प्रतिष्ठा–सूर्य

आओ, मेरे प्यारे! जब यह वाक्य उन्होंने प्रकट किया 'अमृतं ब्रह्मः वेदां भूतं ब्रह्मः' तो गार्गी ने कहा–''हे प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, भगवन्! यह जो चन्द्रमा है, यह कहाँ प्रतिष्ठित हो जाता है?'' उन्होंने कहा–''यह जो चन्द्रमा है, यह चन्द्रमा सूर्य-लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह चन्द्रमा, 'भूतं ब्रह्मः' क्योंकि चन्द्रमा सूर्य से सहायता को प्राप्त

करता हुआ यह मानो अमृत देता है। और वह 'चन्द्रमं ब्रव्हा' वह जो सूर्य है, वह प्रकाश है उसे अदिति कहते हैं, मानो उसे भास्कर भी कहते हैं और वही, मुनिवरो! देखो सूर्य है जो मेरे प्यारे! देखो नाना वृत्तियों में रत्त रहने वाला है, वही सूर्य है, जिसका समन्वय, मुनिवरो! द्यौ से रहता है। यह द्यौ से प्रकाश को ले करके और यह संसार को प्रकाशमान बना करके यह मानो देखो 'अमृतां ब्रहे' चन्द्रमा को अमृतमान बनाता है और यही अमृतमान बना करके मानो उसे धारयामी बनाता रहता है।''

आओ, मेरे प्यारे! यह तो वेद का ऋषि कहता है, 'वेदां भूतं ब्रह्मः वर्णः', मेरे पुत्रो! देखो यह जो सूर्य है यह प्रकाश का अपने मे दूत बना हुआ है, जिसके ऊपर हम विचार-विनिमय करते रहे हैं। परम्परागतों से ही हमारा यह सदैव विचार बना रहा है कि यह जो सूर्य है, यह अदिति ही नहीं मानो देखो, यह उदयन जो प्रातःकालीन उदय हो करके प्रकाश देता है, रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है, अन्धकार को अपने में धारण करके यह प्रकाश का दूत बन जाता है। प्रकाश का दूतक कहलाया गया है। वेद का ऋषि कहता है, तुम सूर्य को, मुनिवरो! देखो अपने में स्वीकार करो। और, चन्द्रमा उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसी से सहायता को प्राप्त करता हुआ अपने में प्रकाशित होता रहता है। यह मानो अदिति बन करके, यह बेटा! प्रकाश देता है, यह ऊर्ज्वा को प्रदान करता रहता है।

## सूर्य की प्रतिष्ठा–गन्धर्व

मेरे पुत्रो! देखो, इतने में चाक्राणी उपस्थित हो करके नतमस्तिष्क हो करके बोली कि–''प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, भगवन्! यह सूर्य

कहाँ प्रतिष्ठित हो जाता है?" उन्होंने कहा—"यह जो सूर्य है, यह मानो देखो गन्धर्व में ओत-प्रोत हो जाता है, और यह 'गन्धर्व ब्रह्मः वरणस्सुते' **गन्र्धव वह मण्डल है, मेरे प्यारे! जो सौरमण्डलों का अन्तिम मनका कहलाया जाता है।"**

जब, मुनिवरो! देखो आचार्य नाना प्रकार के तारामण्डलों को गणना में लाता रहा है और गणना में लाते-लाते, मुनिवरो! देखो 'गणना भूतं ब्रहे' वह अन्तिम मनका मानो देखो गन्धर्व कहलाता है, मेरे पुत्रो! देखो जब आचार्यजन, वैज्ञानिकजन, जब इसको गणना में लाना प्रारम्भ करते हैं तो पृथ्वी से गणना करते हैं, और वह पृथ्वी सूर्य में, सूर्य बृहस्पति में, बृहस्पति मानो देखो यह आरूणी में, आरूणी, मुनिवरो! देखो 'अमृतम्' ध्रुव में और ध्रुव, मुनिवरो! देखो इसी प्रकार स्वाति-नक्षत्रों में नाना प्रकार के नक्षत्रों की गणना करते-करते अन्तिम मनका यह गन्धर्व रह जाता है और यह गन्धर्व मानो देखो सूर्य में ओत-प्रोत हो जाता है।

**मेरे प्यारे! यह जो गन्धर्व है, हमारे यहाँ गान गाने वाले को भी गन्धर्व कहा जाता है, परन्तु वह गान में 'अमृतम्' मानो गन्धर्व नाम, मुनिवरो! यहाँ लोक-लोकान्तरों को, मण्डल को भी कहा गया है।** 'मंगलां भूतं ब्रह्मः, मंगलां देवत्वां लोकां वाचस्प्रव्हे लोकं ब्रहे वर्णः' मेरे पुत्रो! देखो विचार-विनिमय करने से यह प्रतीत होता है कि यह जो गन्धर्व है, यह मण्डलों का अन्तिम मनका कहलाता है। जैसे माला में नाना प्रकार के मनके होते हैं, एक सुमेरू के साथ में मनका होता है, वह अन्तिम मनका कहलाता है, मेरे पुत्रो! देखो इसी प्रकार यह नाना प्रकर के मण्डलों का एक वृत्त है, मानो देखो 'अमृतम्' यह मण्डल

अपने में प्रतिष्ठित हो जाता है, जिसको हमारे यहाँ सौर-मण्डल कहते हैं और सौर मण्डल का अन्तिम मनका, बेटा! यह गन्धर्व है, इसी में सूर्य प्रतिष्ठित हो जाता है।

## गन्धर्व की प्रतिष्ठा–इन्द्र

परन्तु वेद को जानने वाला इस वाक्य में शान्त नहीं हो जाता, चाक्राणी ने नमः हो करके यह कहा–"हे प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ यह गन्धर्व कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा–"यह जो गन्धर्व है, यह इन्द्र-लोकों में ओत-प्रोत हो जाता है।"

हमारे यहाँ, वैदिक साहित्य में, बेटा! इन्द्र की बड़ी विवेचना मानी गई है, क्योंकि राजा का नाम इन्द्र है और इन्द्र नाम आत्मा का है, इन्द्र नाम परमात्मा का है और इन्द्र नाम, बेटा! ये मण्डल जिनकी मैं विवेचना कर रहा हूँ, मेरे प्यारे! जब नाना प्रकार के मण्डलों में, मानो गणित करने लगता है तो यह हमारे इन्द्र नाम का एक मण्डल कहलाता है, जो धिराज के रूप में विद्यमान है। मेरे प्यारे! देखो, वह गन्धर्व लोकों में, यह मानो 'अमृतम्' यह गन्धर्व, इन्द्र में प्रतिष्ठित हो जाते हैं, क्योंकि इन्द्र की पत्नी का नाम शचि है मानो देखो शचि नाम, बेटा! विद्युत को कहा गया है और, मुनिवरो! देखो 'अमृतं ब्रव्हे कृतं देवत्त्वम्' देखो इन्द्र वायु के रूप में भी परिणित किया गया है और जहाँ वायु को इन्द्र कहते हैं, वहाँ लोक को भी इन्द्र कहते है, जिसकी मैं विवेचना कर रहा हूँ। इन्द्र अपने में 'इन्द्रो अस्वतं ब्रह्मः वृत्ताः' यह इन्द्र अपने में अस्वाति में प्रतिष्ठित हो रहा है। मेरे पुत्रो! इसमें गन्धर्व ओत-प्रोत हो जाता है और गन्धर्व इसकी प्रतिष्ठा मानी जाती है।

## इन्द्र की प्रतिष्ठा–प्रजापति

मेरे पुत्रो! चाक्राणी उपस्थित हो करके बोली–"प्रभु! आप की विवेचना के लिये मैं नमः होती हूँ, परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ प्रभु! यह मानो देखो इन्द्र कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा–"इन्द्र प्रजापति में ओत-प्रोत हो जाता है। क्योंकि यदि प्रजा नहीं होगी तो इन्द्र भी नहीं रहेगा और प्रजापतियों का भी इन्द्र पति कहलाता है इसमें वह प्रतिष्ठित होता है।" मेरे प्यारे! वह कहता है–"यह इन्द्र प्रजापति में ओत-प्रोत हो जाता है, जो प्रजा का स्वामी है, प्रजा का नेतृत्त्व करने वाला है, ऐसा प्रजापति वह परमपिता परमात्मा है। राजा का नाम भी प्रजापति है परन्तु प्रजापति नाम पितरों को कहा गया है।" मुनिवरो! देखो इसीलिए "पितराम् भूतं ब्रह्मः वरणस्सुतं देवत्वाय पितराः' वह पितर ही, मुनिवरो! देखो हमारे जीवन को ऊंचा बनाते हैं। तो विचार आता रहता है, बेटा! देखो यह 'पितरो अमृतम्' यह प्रजापति कहलाता है। प्रजापति देखो प्रजा का नेतृत्त्व करता हुआ, प्रजा का स्वामी बन करके हम प्रजापति प्रजावान बन करके, सागर से पार होने का प्रयास करें।

## प्रजापति की प्रतिष्ठा–याग

मेरे पुत्रो! देखो चाक्राणी नतमस्तिष्क हो करके बोली–"प्रभु! हम जानना चाहते हैं, यह प्रजापति कहाँ प्रतिष्ठित होता है, कहाँ ओत-प्रोत हो जाता है? उन्होंने कहा–"यह तो प्रजापति है, यह मानो देखो याग में प्रतिष्ठित हो जाता है। 'यागां भूतं ब्रह्मः यागां देवत्वां देवो ब्रह्मः यागः' मेरे प्यारे! देखो प्रजापति याग में प्रतिष्ठित हो जाता है, याग में

प्रजापति रहता है, जितने भी संसार के शुभ और आत्मीय कर्म है, इन सर्वत्र का नाम, मुनिवरो! देखो याग में प्रतिष्ठित स्वीकार किया गया है। विचारवेत्ता कहते हैं कि यह देखो याग में प्रतिष्ठित हो जाता है तो मुनिवरो! देखो 'विचित्र ब्रह्मः कृतं देवो **द्रवत्वा** यागः' हे मानव! इसीलिए तू याज्ञिक बन।

## याग का वसु रूप

मेरे पुत्रो! देखो याग में मानव को प्रतिष्ठित हो जाना चाहिये। याग वसु कहलाता है, क्योंकि याग संसार को बसाने वाला है इसीलिए याग को विष्णु भी कहते हैं और याग का नाम वसु कहा गया है। मेरे पुत्रो! देखो, जो यज्ञमान को अपने मैं बसाने वाला है। यह 'प्रजापतं ब्रहे' प्रजा को भी अपने में बसाने वाला है। मेरे पुत्रो! देखो हमें याग में परिणित हो जाना चाहिये और मुनिवरो! देखो इसमें प्रजापति निहित रहता है।

## याग की प्रतिष्ठा–दक्षिणा

मेरे पुत्रो! देखो जब यह ऋषि ने वाक्य प्रकट किया तो देवी ने नत मस्तक हो करके कहा–"हे प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ, मानो यह याग कहाँ प्रतिष्ठित रहता है?" उन्होंने कहा–"याग दक्षिणा में रहता है। इसलिए यज्ञमान मानो याग के पश्चात पुरोहित को अपनी दक्षिणा प्रदान करता है।

## दक्षिणा का स्वरूप

दक्षिणा कहते किसे हैं? विचार आता है कि वेद में मन्त्र आया है

और वेद में वह आख्यायिका को मै वर्णन कर रहा हूँ। न्यौदा में मन्त्र आया है—'यागां ब्रव्हे वृत्तं संवृत्ति देवत्वां देवो ब्रहा वृत्तं यज्ञमानस्सुति देवत्वां लोकाः' मेरे प्यारे! देखो वेद का ऋषि कहता है कि—यह दक्षिणा क्या है, जो यज्ञमान मानो पुरोहित को दक्षिणा देता है? **मेरे प्यारे! देखो, जितने यज्ञमान के इस मानवीयत्व में मानो त्रुटियाँ होती हैं, उन त्रुटियों को वह संकल्पवादी बनता है और कहता है, आज से मैं यह अमुक त्रुटि को नष्ट कर रहा हूँ, मैं आचार्य को दक्षिणा में प्रदान कर रहा हूँ, आचार्य उसे सहर्ष अपने में स्वीकार करता है।** परन्तु द्रव्य तो केवल इसलिए यज्ञमान देता है कि इसके उदर की पूर्ति हो जाये परन्तु दक्षिणा का अभिप्रायः यह है कि वह अपनी त्रुटियों को प्रदान करता है। मानो देखो वह दक्षिणा देने वाला अपने में संकल्पवादी बनता है यदि यज्ञमान देखो अपनी दक्षिणा नहीं देगा तो याग सफलता को प्राप्त नहीं होगा। और, दक्षिणा कहते हैं, अपनी त्रुटियों को त्यागना है, अपने में याग जैसे यज्ञमयी स्वरूप को बनाना है। तो मुनिवरो! देखो जब यज्ञमयी स्वरूप बनता है, तो उसकी त्रुटियाँ नष्ट हो जाती हैं।

## महाराज प्रजापति के यज्ञ में दक्षिणा

मेरे पुत्रो! देखो मुझे बहुत सा काल स्मरण आता रहता है। एक समय, मेरे पूज्यपाद 'अमृतम' देखो 'देवत्वाम्' माने देखो महाराजा प्रजापति के यहाँ एक यज्ञ हुआ था, उस यज्ञ में जब दक्षिणा देने लगे तो राजा ने अपनी देवी से कहा—"हे देवी! 'दक्षिणां भूतं ब्रव्हे', देवी! आचार्य को कुछ दक्षिणा प्रदान करो।" आचार्य कहता है—"मुझे दक्षिणा दो।" मेरे प्यारे! देखो वह दक्षिणा जब प्रदान करने लगे तो देवी ने यह संकल्प किया—"हे प्रभु! मैं ईश्वर से वार्त्ता प्रगट किया करूंगी।" परन्तु

देखो यज्ञमान कहता है, मेरे हृदय में जितनी भी दुरिता है उनको मैं दक्षिणा में प्रदान करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो वह दक्षिणा ले करके आचार्य सहर्ष प्रसन्न हो गये। उनका याग सफलता को प्राप्त हो गया।

**मेरे प्यारे! देखो अभिमान हो, कामना की प्रवृति विशेष हो, मेरे प्यारे! देखो इसमें 'यागं ब्रव्हे वृत्तं' याग में बाधक जो भी क्रियाकलाप हों, सब त्रुटियों का समूह माना गया है। उनको त्यागना ही, मुनिवरो! देखो याग की दक्षिणा का एक नृत्य कहा जाता है। तो मुनिवरो! देखो आचार्य को सदैव यह प्रदान करनी चाहिये।**

### कौशल्या की दक्षिणा

मेरे पुत्रो! देखो मुझे वह काल स्मरण आता है। जब पुत्रेष्ठी याग हुआ था, तो कौशल्या ने अपने में देखो राष्ट्र के अन्न को न पान करने का संकल्प किया था और यह दक्षिणा में दिया कि–"हे प्रभु! मैं यह दक्षिणा में देना चाहती हूँ और जब देखो मैं 'अमृतम्' मैं उस अन्न को पान अवश्य करूंगी जिस अन्न से मानो देखो इसमें किसी प्रकार का शोषण न हो अथवा किसी प्रकार की 'मंगलं वृत्ति' राष्ट्र का जो अन्न है, वह रजोगुण तमोगुण से सना हुआ होता है, मैं उस अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी।" यह जो संकल्प किया था आचार्य को, बेटा! इसे उन्होंने प्रदान किया।

मेरे प्यारे! देखो मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, मैं उस काल में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ। विचार-विनिमय केवल यह कि दक्षिणा देनी चाहिये परन्तु दक्षिणा का अभिप्रायः ही अपनी त्रुटियों को त्यागना है।

अपने में संकल्पवादी बनना है। आत्मा के स्वरूप को जानने के लिए वह सदैव तत्पर रहे। ऐसी दक्षिणा जब प्रदान करता है, तो यज्ञमान का याग, मुनिवरो! देखो सफलता को, देव-लोक को ले जाता है।

## दक्षिणा की प्रतिष्ठा–श्रद्धा

तो विचार आता है जब ऋषि ने इस प्रकार विवेचना दी तो चाक्राणी ने नतमस्तक हो करके कहा–''प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ कि दक्षिणा कहाँ प्रतिष्ठित रहती है, यह कहाँ शयन करती है?'' तो उस समय आचार्य ने कहा, मुनिवरो! देखो याज्ञवल्क्य बोले–''हे देवी! तुम प्रश्न कर रही हो मैं तुम्हारा उत्तर दे रहा हूँ, परन्तु जहाँ तक मेरे से उत्तर बनेगा देता रहूँगा यह जो दक्षिणा है, इसका समन्वय मानव के हृदय से होता है, यह मानो देखो दक्षिणा हृदय में समाहित रहती है और वह मानो देखो श्रद्धा से ही दक्षिणा को प्रदान करता है। दक्षिणा श्रद्धा में रहती है।''

## श्रद्धा की प्रतिष्ठा–हृदय

'श्रद्धां में देहि अग्णं ब्रह्मः वरणस्सुतम ब्रह्मे लोकां देवत्वां भूतं ब्रह्मः वर्णः' वेद का आचार्य कहता है कि–''देखो इसका सम्बन्ध हृदय से है मानो श्रद्धा से है और श्रद्धा का समन्वय देखो हृदय से माना गया है। हे देवी! देखो, वही श्रद्धा हृदय में शयन करती रहती है, हृदय में प्रतिष्ठित रहती है। इसलिये देखो प्राणी हृदयग्राही बनना चाहिये।''

## प्रश्नों की सीमा और अभिमानवाद

मेरे प्यारे! देखो आगे ऋषि कहता है–''हे चाक्राणी! तुम आगे

प्रश्न मत कर देना अन्यथा तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जायेगा।'' मेरे प्यारे! देखो चाक्राणी ने जब यह कहा तो उन्होंने स्वीकार किया। "प्रभु! मैं आगे प्रश्न नहीं करूंगी क्योंकि मेरा मस्तिष्क वास्तव में नष्ट हो जायेगा, देखो मेरा मस्तिष्क नीचे गिर जायेगा।'' बेटा! ऐसा ऋषि ने क्यों कहा है? क्योंकि प्रश्नकर्ता की एक सीमा होती है प्रश्नों की और वह सीमा, हृदय में हृदय का समावेश हो जाता है तो, मुनिवरो! आगे प्रश्न करना व्यर्थ हो जाता है और जब प्रश्नकर्ता प्रश्न करता रहता है और आचार्य से किसी प्रश्न का उत्तर नहीं बन पाता क्योंकि वह उसमें प्रतिष्ठित हो जाता है तो ज्ञान वहाँ बन नहीं पाता तो देखो उससे प्रश्नकर्ता को अभिमान हो जाता है और अभिमान ही, मुनिवरो! देखो संसार में मृत्यु मानी गई है। उसका मस्तिष्क नीचे गिर जाता है, क्योंकि अभिमान ही मानव को देखो त्रुटियों का अवृत्त बना देता है। अभिमान ही मानव को मृत्यु के कगार तक ले आता है, मानो देखो मृत्यु के तट पर विद्यमान हो जाता है। इसीलिए, मुनिवरो! देखो हम अपने में जब यह प्रश्न आ गया कि हृदय, मानो देखो हृदय 'अमृतम्' **दक्षिणा हृदय में, मानो श्रद्धा से, श्रद्धा हृदय में और हृदय का मिलान मानो देखो उस परमपिता परमात्मा के हृदय से, जब समन्वय हो जाता है तो आगे, बेटा! प्रश्न और देखो उत्तर नहीं बन पाता। विचार आता है कि हृदय से हृदय का जहाँ मिलान हुआ, वहाँ मुनिवरो! देखो आत्मा का परमात्मा से मिलान हो जाता है और आत्मा परमात्मा से जहाँ मिलान हुआ, वहाँ, बेटा! मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त होने लगती है।**

तो विचार आता रहता है, मुनिवरो! देखो वह हृदय; हृदय में

श्रद्धा, श्रद्धा में; दक्षिणा, दक्षिणा में; याग और याग से प्रजापति और प्रजापति से इन्द्र, इन्द्र से गन्धर्व और गन्धर्व से सूर्य और सूर्य से चन्द्रमा, बेटा! यह ध्रुवा से ऊर्ध्वा में गमन किया ऋषि ने और यह मानो देखो 'ऊर्ध्वा परमब्रहे' यह ध्रुवा से मानो देखो ऊर्ध्वा की ओर उड़ानें उड़ने लगे, तो मुनिवरो! यह संसार मानो देखो, यह पृथ्वी में और पृथ्वी, आपो में, आपो जल में और जल, मुनिवरो! देखो अग्नि में, अग्नि वायु में, वायु अन्तरिक्ष में, अन्तरिक्ष महतत्त्व में यहाँ आ करके, बेटा! अपने में एक-दूसरे में समाहित हो गया।

तो विचार आता रहता है, बेटा! ऋषि-मुनियों की बड़ी विचित्र शैली रही है शिक्षा देने की। उन्होंने कहा कि ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में गमन करना मानो देखो हमारा कर्त्तव्य है। हमारे में ज्ञान, मानो जिस भी स्थलि में तुम जाओ वहाँ एकता के सूत्र में सूत्रित हो जाओ एक माला बना लो और माला को, मुनिवरो! धारण करके, मुनिवरो! देखो उसको धारयामि बना करके तुम संसार को अपने में पिरो दो और अपने को 'अवृत्तम्' और संसार तुम्हारे में पिरोया जाये तो तुम्हारा कल्याण हो जायेगा।

## गार्गी के तप-अनुष्ठान

तो आज, बेटा! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ, मैं कोई व्याख्यता नहीं हूँ परन्तु देखो मैं केवल दो ऋषियों की वार्ता को प्रकट कर रहा था। चाक्राणी ने, बेटा! देखो बड़े-बड़े अनुष्ठान किये ब्रह्म-ज्ञान को प्राप्त करने के लिए और वह प्रश्न करती रहती थी आचार्यों से। और, **मुनिवरो! देखो जब गान गाने लगती तो गान**

**गाती रहती थी। सर्प-राज भी, मृगराज भी नतमस्तिष्क हो करके, चरणों में ओत-प्रोत होते रहे हैं, इसी प्रकार आचार्यो का यह कथन रहा है कि प्रत्येक मानव को तपस्वी बनना चाहिये और तपा हुआ जो ज्ञान है, वही ज्ञान, मुनिवरो! देखो मानव के हृदय में समाहित हो करके, विवेकी बन जाता है और विवेकी का जब समन्वय परमपिता परमात्मा के हृदय से आलिंगन हो जाता है तो मेरे प्यारे! देखो वह आत्मा का परमात्मा से मिलान होना प्रारम्भ हो जाता है** एक-दूसरे में प्रतिष्ठा को प्राप्त करना, मानो एक-दूसरे को एक-दूसरे में लय करते चले जाओ और लय करते-करते प्राणों के माध्यम से जैसे प्राण को अपान, अपान को व्यान, व्यान को, मुनिवरो! समान में और समान को उदान में जब समेट लिया जाता है, तो बेटा! चित के संस्कार जागरूक हो जाते हैं। वे जो चित्त में नाना प्रकार के संस्कार विद्यमान होते हैं, उनकी जागरूकता हो जाती है।

तो विचार आता रहता है, हम, मुनिवरो! देखो उस वाक्य को विचार-विनिमय करते हुए, मैं बेटा इससे पूर्व काल में तुम्हें उच्चारण कर रहा था, महर्षि गौतम की चर्चाएं मानो देखो, गौतम ऋषि भी इस प्रकार के विचार-विनिमय करके धारयामि बने। तो विचार आता रहता है, चाक्राणी गार्गी, बेटा! देखो अन्त में मौन हो गई और ऋषि के चरणों को स्पर्श करके अपने स्थान पर विद्यमान हो गई।

### ब्रह्मयाग

मेरे प्यारे! देखो उनका 'नृत्यं ब्रह्मः' वह ब्रह्मयाग होता है, जिसको हमारे यहाँ ब्रह्मयाग कहते हैं। **ब्रह्मयाग उसे कहते हैं, जहां ब्रह्म की**

**प्रतिभा हमें प्राप्त हो जाये। अथवा ब्रह्म के मानो देखो उस मार्ग पर चलने के लिए हमे एक मार्ग प्राप्त हो जाये, गतियाँ प्राप्त हो जायें। हम उसको जान करके अपनेपन में उसमें सिमट जायें और वह हममें सिमट जाये।** बेटा! इसका नाम ब्रह्म ज्ञान कहा जाता है। यह ब्रह्मज्ञान क्या, ज्ञान का नाम ही याग है क्योंकि उसमें चरू है उसमें, मुनिवरो! देखो एक प्रकाश है, आनन्दवत् है।

मुनिवरो! देखो वेद का जो प्रकाश है वह मानव के अन्तःकरण को प्रकाशमान बनाता है, जैसे नाना सूर्य, मुनिवरो! देखो मानव के नेत्रों का प्रकाश बन करके आते हैं और वह सूर्य मानो देखो नेत्रों का देवता बन करके आता है, प्रकाशक बन करके आता है, इसी प्रकार मानव के अन्तःकरण को प्रकाशमान बनाने वाला एक केवल 'अमृतं ब्रह्मः वरणं ब्रह्मे लोकां वाचस्सुतः प्रव्हा' परमपिता परमात्मा है। वेद का आचार्य कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा को मानो देखो अपने में धारण करते हैं। यह है, बेटा! आज का वाक्य, आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की अराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए एक- दुसरे मनके को एक-दूसरे में पिरोते चले जायें माला के सदृश्य।

श्री लक्ष्मीचन्द, (चेयरमैन)
बुढ़ाना, मुज़फ्फरनगर
२६-१२-६१

# प्रतिष्ठावादी जगत्

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, जो परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं, परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। वह परमपिता परमात्मा सीमा से रहित हैं और वह सीमा में आने वाले नहीं हैं, इसलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का सदैव गुणगान गाते रहते हैं और उसकी महिमा को चिन्तन में लाते रहे हैं—क्योंकि हमारे यहाँ ऋषि-मुनि जब भी शान्त-मुद्रा में विद्यमान हो गये हैं, उसी काल में उस परमपिता परमात्मा का यह जो ब्रह्माण्ड है, इसमें जो लोक-लोकान्तरों की माला बनी हुई है, उसे एक सूत्र में लाने का प्रयास किया और उसके ऊपर चिन्तनमयी अपने जीवन को ले गये।

## दो पदार्थों के मिश्रण में गुणवत्ता-वर्धन

तो विचार आता रहता है कि हमें भी उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में और उसके रचाये हुए ब्रह्माण्ड के ऊपर विचार-विनिमय

करना चाहिये, क्योंकि अपने-अपने स्वरूप में यह ब्रह्माण्ड परिणित हो रहा है। प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता की प्रतिभा में सदैव निहित रहता है और एक-दूसरे की प्रतिभा को प्रभावित नहीं कर पा रहा है। विचार आता है कि **अग्नि में जब दूसरे पदार्थों का मिश्रण हो जाता है तो अग्नि मानो देखो उग्र रूप धारण कर लेती है परन्तु जब दूसरे पदार्थो का उसमें सम्मिश्रण नहीं होता, तो वही अग्नि ऊष्ण कहलाती है और वह अग्नि मानो देखो अपने इस रूप में जब रत्त रहती है तो वह दूसरे को अपने प्रभाव में नहीं ला सकती, अपने में स्वतः निहित रहती है।**

आओ, मुनिवरो! देखो, मैं विज्ञान के क्षेत्रों या पदार्थो की प्रतिभा में नहीं ले जा रहा हूँ, केवल वेद का यह संकेत रहा है, मन्त्रों का यह संकेत रहा है, एक-दूसरे में एक-दूसरा ही निहित रहता है। परन्तु देखो उसकी प्रतिभा को हमें जानना है। क्योंकि हमारे ऋषि-मुनियों की बड़ी विचित्र एक शैली रही है कि ध्रुवा से ऊर्ध्वा में और ऊर्ध्वा से ध्रुवा में इस संसार को उन्होंने मापने का प्रयास किया, क्योंकि ध्रुवा से ऊर्ध्वा को गमन करना है और ध्रुवा से 'ध्रुवां ब्रह्मण वृत्तं देवाः' मानो ध्रुवा से ऊर्ध्वा में, ऊर्ध्वा को ध्रुवा में परिणित करके आचार्यो ने, बेटा! इसके ऊपर बड़ा विश्लेषण दिया।

## याज्ञवल्क्य आश्रम में प्रतिष्ठा-चर्चा

आओ, मैंने ये वाक्य तुम्हें पूर्व काल में भी प्रगट किये हैं। एक समय, बेटा! मुझे स्मरण आता रहा है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में प्रातःकालीन् ऋषि-मुनि और देखो ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन

करने लगे। जव वह अध्ययन करने लगे 'अध्यानां भूः वर्णं ब्रह्मः' तो मेरे प्यारे! ब्रह्मचारियों के मध्य में याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यमान हैं तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने 'अमृतं ब्रह्मः' कुछ वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाया, क्योंकि न्यौदा में मन्त्रों का अध्ययन करते हैं, वह जानते हैं कि कितना रहस्यतं होता है। आचार्य ने जिस समय वेद का मन्त्र उच्चारण किया और वेद का मन्त्र कहता है, 'ब्रहां अस्सुतं ब्रवे कर्णं ब्रवा वृत्ताः' वेद का मन्त्र कहता है कि एक-दूसरा यह संसार माला के रूप में हमें दृष्टिपात् आता है। हम जब अपने मानवीय जीवन के ऊपर विचार-विनिमय करते हैं, तो वहाँ भी हमें यह संसार ही, शरीर भी माला के सदृश्य और माला के रूप में हमें प्रायः दृष्टिपात् आता रहा है।

## प्रश्नकर्त्ता और जिज्ञासु

मेरे प्यारे! देखो जब बहुत समय विचार-विनिमय करते हुआ तो उस समय याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ब्रह्मचारियों से एक समय प्रातःकालीन न्यौदा में मन्त्रों का उच्चारण करते हुए बोले—"हे ब्रह्मचारियो! तुम प्रायः जिज्ञासु हो, परन्तु यदि तुम्हें कोई विचार-विनिमय करना हो जिज्ञासा रूपों से तो जिज्ञासा को तुम पूर्ण कर सकते हो, क्योंकि संसार में एक तो प्रश्न होता है, एक जिज्ञासा होती है, तो **जो जिज्ञासु होता है, वह यर्थाथता को जानने के लिए तत्पर रहता है, परन्तु जो प्रश्नकर्त्ता होता है, प्रश्न करने वाले के हृदय में एक समय अभिमान की उत्पत्ति हो जाती है और वह अभिमान देखो उसकी मृत्यु का मूल कारण बनता है। तो इसलिए हमें जिज्ञासु बनना चाहिये और जिज्ञासा में यर्थाथता को दृष्टिपात् करना चाहिये।**

## सांसारिक सृष्टि की प्रतिष्ठा — पृथ्वी

परन्तु ज याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ब्रह्मचारियों से यह कहा तो एक ब्रह्मचारी यज्ञदत्त नाम के विद्यालय में अध्ययन करते थे और एक श्वेताश्वेतर ब्रह्मचारी, दोनों ब्रह्मचारी बोले कि–"प्रभु! हमे एक-दूसरे में जिज्ञासा है।" याज्ञवल्क्य मुनि बोले–"क्या जिज्ञासा है? उन्होंने कहा–"प्रभु! हम बहुत समय से आपके आश्रम में अध्ययन कर रहे हैं परन्तु हम एक-दूसरे की माला को नहीं बना सके हैं। हमारी इच्छा यह है, प्रभु! हम यह जानना चाहते है कि यह जो ब्रह्माण्ड, जिसका हम अध्ययन करते हैं नित्यप्रति, दर्शनों में और वेद-मन्त्रों में जिसका अध्ययन कर रहे हैं, परन्तु अध्ययन करते-करते हम इस वाक्य को 'अमृतं ब्रह्मः' हम यह जानने के जिज्ञासु बने रहे हैं कि यह संसार कहाँ प्रतिष्ठित होता है और कहाँ यह प्रतिष्ठित हो करके, कहाँ समाहित हो रहा है?" मेरे प्यारे! उन्होंने कहा–"तुम क्या जानते हो इस सम्बन्ध में?" उन्होंने कहा–प्रभु! चारों प्रकार की सृष्टि हमारे समीप आती रही है और चारों प्रकार की सृष्टि में मानो उसकी हम प्रतिष्ठा के ऊपर हम बड़ा बल देते रहे हैं और प्रतिष्ठा में जाना चाहते हैं।"

मेरे पुत्रो! देखो जब उन्होंने यह कहा तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने यज्ञदत्त ब्रह्मचारी से कहा–"हे ब्रह्मचारी! यह जो संसार तुम्हें दृष्टिपात् आ रहा है, यह चार प्रकार की आभा में नृत हो रहा है। मानो सबसे प्रथम, यह जो 'अमृतम्' यह जो 'अमृतां' विश्वं ब्रह्मो वृतिका'" ऐसा वेद का उन्होंने सूत्र उद्गीत रूप में गाया। उन्होंने कहा–"सबसे प्रथम, यह जो संसार है, यह स्थावर में निहित है, और द्वितीय जो सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है, उसको अण्डज सृष्टि कहते हैं, और तृतीय में जंगम

है, और चतुर्थ में उद्भिज कहलाती है, मानो देखो यह चार प्रकार की सृष्टि कहलाती है, और चारों प्रकार की जो सृष्टि है, अपने में उनमें आवान्तर भेदन माने गये हैं, आवान्तर देखो जातीयता में यह ओत-प्रोत रहा है। स्थावर सृष्टि में भी नाना प्रकार की जातीयता है और अण्डज में भी परन्तु इसी प्रकार जंगम और वह देखो स्वेदज में भी इसी प्रकार का वृत्त माना गया है। परन्तु इसके ऊपर विचार-विनिमय तो गम्भीरता से नहीं करूंगा, केवल तुम परिचय में जाना चाहते हो। **यह जो संसार है, यह सर्वत्र मानो पृथ्वी में निहित हो जाता है। यह पृथ्वी इसका उद्गीत गाती है और यह पृथ्वी में ओत-प्रोत हो जाता है। इसलिए तुम्हें विचारना है कि तुम प्रथम 'ब्रह्मः वर्णनं', यह पृथ्वी भी मानो देखो उसी में समाहित हो रही है और उसी में यह प्रतिष्ठित हो रहा है और मानो देखो उसी की आभा से इसकी प्रतिभा का जन्म होता है।**

## पृथ्वी की प्रतिष्ठा— आपो

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपना मन्तव्य दिया तो उस समय ब्रह्मचारी बोले कि–"हे प्रभु! हम चलो यह भी स्वीकार करते हैं यह पृथ्वी में ओत-प्रोत है परन्तु यह जो पृथ्वी है यह कहाँ प्रतिष्ठा को प्राप्त करती है?" उन्होंने कहा–"यह जो पृथ्वी है, इसका एक मौलिक गुण मानो देखो गुरुत्त्व माना गया है और वह जो पृथ्वी है यह 'आप्रणम्' यह आपो में ओत-प्रोत हो जाती है। आपो में मानो देखो 'आपां ब्रह्मणे वृत्तम् आपां दिव्यां गतं ब्रह्मे वृत्ताः" मानो यह जो आपो है यह एक प्रकार की अनुपम ज्योति है, जिस ज्योति को हमें विचारना है। एक मानव पिपासा में परिणित हो रहा है, परन्तु जैसे जल उसको

देखो आपो प्राप्त हुआ, तो मुनिवरो! देखो उसकी पिपासा शान्त हो जाती है, और वह मानो देखो अपने में शान्तवना को प्राप्त होता है। तो वह अमृत है। तो अमृत को पान करना तुम्हारा कर्त्तव्य है।

## उत्पति का मूल— आपो

इस प्रकार जब ऋषि ने कहा कि यह 'अमृतम्' यह आपो है और यह आपो ही मानो देखो उत्पत्ति के मूल में विद्यमान रहता है। मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन किया, माता के गर्भस्थल में क्या, और पृथ्वी के गर्भस्थल में यह नाना प्रकार का खाद्य, खनिज पदार्थ है, आपो की वह सर्वत्र मानो देखो आभा में आभायित हो रहा है इस प्रकार माता के गर्भस्थल में हम शिशु बन करके, मानो देखो उसके आपो ही ओढ़न, आपो ही मानो देखो बिछौना बन करके उसी में वास करता रहता है और उसी में रत्त होता रहता है।'' तो मुनिवरो! देखो इसी प्रकार 'अमृतं ब्रह्मः वृत्ते' मानो देखो यह आपो कहलाता है। यह आपो है, जो कृषक मानो अपनी कृषि में देखो अन्न इत्यादि को जब प्रदान कर देता है तो नाना प्रकार के खनिज पदार्थों के मूल में भी वह विद्यमान है। इसी प्रकार खनिज में भी आपो की आवश्यकता रहती है।

## चन्द्रमा की शीतलता और आपो

मुनिवरो! देखो उस आपो में जब 'आपां भूतम्' मानो देखो उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह आपो ही है, बेटा! जो समुद्रों के रूप में विद्यमान होता है, देखो यह चन्द्रमा अपने देखो उन पदार्थों को ले करके जल को, यह 'आपो आपं ब्रह्मे' मानो देखो शीतल बना देता है और रात्रि को अपने में सम्बोधित करता रहता है। तो विचार आता रहता

है और वह पुनः उसके बदले अमृत देता रहता है। तो इसलिए प्रभु का विज्ञान कितना अनुपम है।

## जल की ओत-प्रोतक— अग्नि

मेरे पुत्रो! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया। ऋषि के वर्णन करने से ब्रह्मचारियों ने कहा—"हे प्रभु! हमारी यह जिज्ञासा है कि हे प्रभु! यह आपो कहाँ प्रतिष्ठित होता है? जैसे पृथ्वी इसमें 'प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठिता' यह इसमें प्रतिष्ठित होती है तो यह 'जलं ब्रह्मः' यह जो जल है, यह कहाँ प्रतिष्ठित होता है? आपो कहाँ रहता है?" उन्होंने कहा—"यह पृथ्वी जल में 'जलं ब्रह्मः' और **यह जो जल है, आपो है, यह अग्नि में ओत-प्रोत हो जाता है। अग्नि में यह प्रतिष्ठित हो जाता है, क्योंकि अग्नि उष्ण बनाती है, उष्ण कहलाती है और यह 'अमृतम्' मानो देखो इसके उग्र रूप को अपने में धारण कर लेती है।** धारण करती हुई मानो देखो उसी में 'प्रतिष्ठां प्रतिष्ठायाम' उसी में प्रतिष्ठित हो जाती है।

## अग्नि द्वारा जल का रूपान्तरण

मेरे प्यारे! देखो यह अग्नि भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में रत्त रहती है। जब यह अग्नि आपो को धारण कर लेती है, बेटा! अग्नि शीतल बन जाती है। मानो यह जल को, जल के ऐसे पिण्ड बना देती है, जल का पिण्ड यह अग्नि ही बनाती है। अग्नि ही, मेरे प्यारे! देखो इसको विकृत रूप में ला देती है, नद-नदियों के रूप में परिणित कर देती है। यही, मानो देखो, अग्नि है, जो ऊष्ण बनाती रहती है। जितनी आवश्यकता होती है, उतनी उसको शीतलता देती है उष्णता देती है, **मेरे प्यारे! जब हम माता के गर्भस्थल में विद्यमान होते हैं, तो मेरे**

**पुत्रो! देखो अग्नि ही उसको ऊष्ण बनाती रहती है उसको मानो धीमा-धीमा ऊष्णता देकर उसका पालन कर रही है। यह पालना के मूल में विद्यमान रहती है, इसलिए अग्नि ही आपो को अपने में धारण करती है।**

## तीन प्रकार के परमाणु

मुनिवरो! देखो जब 'अग्नं ब्रह्मः' जब वैज्ञानिकजन अपनी एक-एक स्थली पर विद्यमान हो करके इनके ऊपर विचार-विनिमय करते हैं, तो बेटा! गुरुत्त्व, तरलत्व और तेजोमयी तीन प्रकार के परमाणु होते हैं और इन परमाणुओं में ही, मुनिवरो! देखो सर्वत्र जगत् निहित रहता है। यही पिण्डाकार बनते रहते हैं, यही लोक-लोकान्तरों के रूप में, बेटा! एक माला के सदृश्य दृष्टिपात् आते रहे हैं।

## पिण्ड-निर्माण में परमाणुओं का नेतृत्त्व

विचार आता है कि वही मानो देखो 'पिण्डां भूतं ब्रह्मे' यह पिण्डाकार बनने वाला जो जगत् है, मानो देखो माता के गर्भस्थल में, जब तीनों प्रकार के परमाणु अपने में रत्त होते हैं तो यह शरीर रूपी पिण्ड बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, जब यही परमाणु एकाग्र हो करके सूर्य जैसे पिण्ड का निर्माण करते हैं, यही चन्द्रमा का निर्माण करते हैं, मानो यह पिण्डाकार जगत् मानो दृष्टिपात् आता रहता है। मेरे पुत्रो! देखो ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया कि अग्नि ही मानो देखो 'अग्रत तेजोमयी है, वह धीमा-धीमा तेज दे करके और मानो देखो परमाणुओं को 'अग्रतम्' मानो देखो धीमा अश्वत दे करके मानो देखो उसको पिण्डाकार बना देती है।

## पिण्ड-प्रभ्रामक— वायु

विचार आता है, मेरे प्यारे! ये जो पिण्ड हैं, ये कहाँ गमन करते हैं? 'त्वायं ब्रह्मः कृते' वेद का ऋषि कहता है, ब्रह्मचारी! अब तुम्हें शंका होगी कि यह पिण्ड कहाँ भ्रमण करता है? मानो देखो यह वायु में गति करता रहता है। ''प्राणं भूतं ब्रह्मः वर्णनं ब्रहे' बेटा! देखो इस वायु के मानो देखो एक प्राण रूप माना गया है, हमारे मानव-शरीर में ये दस प्राण कहलाते हैं, जो वायु के स्वरूप में रहते हैं। मानो प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कुरू और कृकल, ये दस प्राण कहलाते हैं, बेटा! देखो, जो गति कराते रहते हैं। **इस ब्रह्माण्ड के भी दस प्रकार के प्राण माने गये हैं और वायु बना करके, बेटा! वायु इन परमाणुओं को गति कराती रहती है।**

## वायु-गति की प्रतिष्ठा— अन्तरिक्ष

वायु जहाँ गति करता है, उसको अन्तरिक्ष कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो वायु गति देता है, अन्तरिक्ष अवकाश देता है और वह, मुनिवरो! देखो यह ब्रह्माण्ड अपने में गति कर रहा है। कैसा उज्ज्वल यह प्रभु का निर्माण किया हुआ यह जगत् है, एक-दूसरे में ओत-प्रोत हो रहा है! माला बन रही है! माला को धारण कर रहा है, और विचारक, मुनिवरो! विचार-विनिमय कर रहा है! वैज्ञानिक बन करके, कोई मानो दार्शनिक बन करके, कोई, मेरे प्यारे! देखो योगाभ्यास करने वाला योगाभ्यास से प्राण को अपान में, अपान को व्यान में, व्यान को समान में और समान को, मुनिवरो! देखो वह उदान में प्रवेश करके, इन प्राणों की कृतियों को जानता हुआ इस ब्रह्माण्ड में वह रत्त हो जाता है।

## महतत्त्व

आओ, मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं प्रगट करूंगा, केवल यह कि आज का हमारा यह वेद का मन्त्र क्या कह रहा है? वेद का वाक्य क्या कह रहा है? परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मैं विशेष चर्चा नहीं, केवल परिचय देने आया हूँ। परन्तु जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया कि देखो एक-दूसरे से, ध्रुवा से ऊर्ध्वा में गमन कराया है ऋषि ने और वह 'ध्रुवां ब्रह्मः ध्रुवां ब्रह्मे कृतः' मेरे पुत्रो! देखो, यहाँ आ करके ऋषि मौन होने लगे, जब ऋषि मौन होने लगे ऋषि ने कहा कि इससे आगे जो गति है, मानो देखो वह केवल महतत्व बिन्दु रह जाता है।

## महतत्त्व का प्रसारक— चन्द्रमा

मेरे पुत्रो! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार उच्चारण करके मौन होने लगे, तो कुछ समय के पश्चात् ब्रह्मचारी भी मौन हो गये। परन्तु ब्रह्मचारियों ने, दोनों ने उपस्थित हो करके कहा—"प्रभु! हमारे अन्तर्हृदय में जिज्ञासा बनी रही है और उस जिज्ञासा को हम पुनः से प्रगट करना चाहते हैं।" आचार्य ने कहा कि—"जिज्ञासा है, अब भी तुम्हारी?" उन्होंने कहा,—"प्रभु! यह महतत्व कहाँ प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है?" मेरे प्यारे! देखो अब यहाँ उन्होंने देखो जैसे ध्रुवा से ऊर्ध्वा में ले गये अब ऊर्ध्वा से ध्रुवा में ले गये हैं जगत् को। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा—**"यह जो चन्द्रमा है, यह अमृतमयी है। यह जो चन्द्रमा है मानो देखो ये जो महावृत्तियाँ है, इसमें ओत-प्रोत हो जाती हैं और चन्द्रमा ही, मुनिवरो! देखो अमृत को वृष्टि कराने वाला है।** ये चन्द्रमा में ओत-प्रोत हो जाती हैं।

## वाजपेयी याग और चन्द्रमा

यह जो चन्द्रमा है, यह समुद्रों से जलों का उत्थान करता है और जलों की वृष्टि करा देता है, मानो इसको अन्तरिक्ष में प्रविष्ठ करा देता है। मेरे प्यारे! वही रूप बन करके वृष्टि के रूप में परिणित करा देता है। उस समय यज्ञमान अपने गृह में वह वाजपेयी याग करता है और वाजपेयी याग करके कहता है, "हे अग्नं ब्रह्मः! तू आ और मेरे अन्तर्हृदय में समाहित हो।" और वह कहता है, "हे अग्नि! तू आ करके, तू अग्नि स्वरूप बन करके मेरे जीवन को ऊँचा बना। मानो तू चन्द्रमा है, तू सोम की वृष्टि करने वाला है।" मेरे पुत्रो! चन्द्रमा को सोम कहा है। यह चन्द्रमा है, जो जलों का उत्थान करता है। यही वनस्पतियों में रस प्रदान करता है। यही खनिजों में मानो देखो अस्तित्व की सत्ता प्रदान कर देता है

## चन्द्रमा की प्रतिष्ठा—सूर्य

मेरे पुत्रो! देखो, यह मैं ऐसे वाक्यों में तुम्हें ले जा रहा हूँ, दर्शनों से जिनका समन्वय रहता है। परन्तु देखो ब्रह्मचारी बोले कि–प्रभु! जब हम विद्यालय में अध्ययन करते थे तो यह वाक्य आचार्यजन हमें प्रगट करते रहे हैं, हम यह जानना चाहते हैं, प्रभु! यह चन्द्रमा कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा–"यह जो चन्द्रमा है, यह सूर्य में प्रतिष्ठित हो जाता है। यह जो सूर्य है यह 'अमृता प्रह्म' यह प्रकाश के देने वाला, ऊर्ज्वा के भी देने वाला है। परन्तु देखो चन्द्रमा में जो ऊर्ज्वा है, वह सर्वत्र चन्द्रमा में जो कान्ति है, वह सर्वत्र मानो देखो सूर्य की मानी गई है, इसलिए सूर्य में 'प्रतिष्ठायां प्रतिष्ठितः' यह प्रतिष्ठा को प्राप्त करता रहता है।

## सूर्य का अदिति-रूप

मेरे पुत्रो! देखो वैदिक साहित्यवेताओं ने जब विचार-विनिमय किया तो सूर्य को अदिति के नाम से वर्णन किया है। इसका ही नामोकरण मानो देखो विष्णु है और इसी का नामोकरण उदयन कहा गया है। यह उदय होता है तो रात्रि को अपने में निगल जाता है और जब यह उदय होता है तो नाना प्रकार की क्रान्ति को ले करके उषा-काल में, बेटा! अमृत को बिखेर देता है। यही मानो देखो सूर्य है, जो अदिति बन करके मानो देखो 'अजातां ब्रह्मे' यह मानो देखो ब्रह्मचारी भी आदित्य बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो उसी की ऊर्ज्चा में नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में गमन करने वाले यन्त्रों का निर्माण किया जाता है जो मानो वैज्ञानिकजन इसके ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं।

आओ, मेरे प्यारे! देखो यह जो सूर्य है, इसी के प्रकाश में मानो इसी में ओत-प्रोत होने वाला यह चन्द्रमा है। चन्द्रमा, 'ब्रह्म कृतं सूर्यं ब्रहे' यह जो सूर्य है, मानो देखो प्रकाश का द्योतक है, और यह उषा का 'आवृत्तम्' मानो देखो कृषक की भूमि को, यह अन्न आदि को परिपक्व करने वाला है, इसलिए मानो देखो इसको हमें अदिति स्वीकार कर लेना चाहिये। यह प्रकाशक है और यही, मुनिवरो! देखो प्रकाश देता हुआ मानव को अग्रत ऊर्ज्चा देता है।

## सूर्य की प्रतिष्ठा—गन्धर्व-मण्डल

मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी बोले कि "प्रभु! हम माता की लोरियों का पान करते हैं। माता हमें शिक्षा देती थी तो वह इस प्रकार की प्रायः

विज्ञान की शिक्षा हमें देती रही है, "हम यह जानना चाहते हैं, भगवन्! यह जो सूर्य है, यह कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा "यह सूर्य गन्धर्व लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है, यह गन्धर्व जो मण्डल है जितना भी सौर-मण्डल है मानो देखो उसका यह अन्तिम मनका कहा गया है और यह सूर्य भी उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसका समन्वय आदित्य से होता है, और आदित्य ही मानो देखो उसी से वह भासता रहता है।

मुनिवरो! देखो, वह जो 'अमृतम्' हमारे यहाँ आचार्यों ने कहा, जब हम विचारते रहते हैं, तो नाना पृथ्वियों को विचारते हैं, विज्ञानवेत्ता नाना पृथ्वियों की माला बनाते हैं तो वह सूर्य उन मालाओं को धारण करता है, नाना सूर्यों की माला बनाते हैं, उसको बृहस्पति अपने में धारण कर लेता है और नाना बृहस्पतियों की माला बना करके उसको आरूणी मण्डल अपने में धारण कर लेता है, मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार धारयामी बनाते हुए ध्रुव अपने में नाना मण्डलों को धारण करता है।" तो मुनिवरो! देखो विचार यह कि देखो 'अमृतं ब्रह्म प्रातम्' लगभग-लगभग एक करोड़ की संख्या में गन्धर्व में इस प्रकार के मण्डलों का एक-दुसरे में ओत-प्रोत होता हुआ, उसका सबसे अन्तिम जो मनका है, वह मुनिवरो! देखो यह 'अमृतं ब्रह्मः कृति' यह मुनिवरो! देखो असुति कहा जाता है, जिसमें मुनिवरो! देखो यह सूर्य प्रतिष्ठित हो जाता है। जिसको आरूणी कहते हैं; मानो जिसको अपने में प्रतिभाषित कहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उसमें जब ओत-प्रोत होता है तो अपने में अपनेपन का ही दृष्टिपात् कराता हुआ, मुनिवरो! देखो यह इतने मण्डलों का सौरमण्डल बनता है और सौरमण्डल, मुनिवरो! देखो 'अमृतं ब्रहे' सौरमण्डल बन करके नाना आकाश-गंगाओं का निर्माण होता है, तो बेटा! मैं इस

## सूर्य का अदिति-रूप

मेरे पुत्रो! देखो वैदिक साहित्यवेताओं ने जब विचार-विनिमय किया तो सूर्य को अदिति के नाम से वर्णन किया है। इसका ही नामोकरण मानो देखो विष्णु है और इसी का नामोकरण उदयन कहा गया है। यह उदय होता है तो रात्रि को अपने में निगल जाता है और जब यह उदय होता है तो नाना प्रकार की क्रान्ति को ले करके उषा-काल में, बेटा! अमृत को बिखेर देता है। यही मानो देखो सूर्य है, जो अदिति बन करके मानो देखो 'अजातां ब्रह्मे' यह मानो देखो ब्रह्मचारी भी आदित्य बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो उसी की ऊर्ज्वा में नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में गमन करने वाले यन्त्रों का निर्माण किया जाता है जो मानो वैज्ञानिकजन इसके ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं।

आओ, मेरे प्यारे! देखो यह जो सूर्य है, इसी के प्रकाश में मानो इसी में ओत-प्रोत होने वाला यह चन्द्रमा है। चन्द्रमा, 'ब्रह्म कृतं सूर्यं ब्रहे' यह जो सूर्य है, मानो देखो प्रकाश का द्योतक है, और यह उषा का 'आवृत्तम्' मानो देखो कृषक की भूमि को, यह अन्न आदि को परिपक्व करने वाला है, इसलिए मानो देखो इसको हमें अदिति स्वीकार कर लेना चाहिये। यह प्रकाशक है और यही, मुनिवरो! देखो प्रकाश देता हुआ मानव को अग्रत ऊर्ज्वा देता है।

## सूर्य की प्रतिष्ठा—गन्धर्व-मण्डल

मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी बोले कि "प्रभु! हम माता की लोरियों का पान करते हैं। माता हमें शिक्षा देती थी तो वह इस प्रकार की प्रायः

विज्ञान की शिक्षा हमें देती रही है, हम यह जानना चाहते हैं, "भगवन्! यह जो सूर्य है, यह कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा "यह सूर्य गन्धर्व लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है, यह गन्धर्व जो मण्डल है जितना भी सौर-मण्डल है मानो देखो उसका यह अन्तिम मनका कहा गया है और यह सूर्य भी उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसका समन्वय आदित्य से होता है, और आदित्य ही मानो देखो उसी से वह भासता रहता है।

मुनिवरो! देखो, वह जो 'अमृतम्' हमारे यहाँ आचार्यों ने कहा, जब हम विचारते रहते हैं, तो नाना पृथ्वियों को विचारते हैं, विज्ञानवेत्ता नाना पृथ्वियों की माला बनाते हैं तो वह सूर्य उन मालाओं को धारण करता है, नाना सूर्यों की माला बनाते हैं, उसको बृहस्पति अपने में धारण कर लेता है और नाना बृहस्पतियों की माला बना करके उसको आरूणी मण्डल अपने में धारण कर लेता है, मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार धारयामी बनाते हुए ध्रुव अपने में नाना मण्डलों को धारण करता है।" तो मुनिवरो! देखो विचार यह कि देखो 'अमृतं ब्रह्म प्रातम्' लगभग-लगभग एक करोड़ की संख्या में गन्धर्व में इस प्रकार के मण्डलों का एक-दुसरे में ओत-प्रोत होता हुआ, उसका सबसे अन्तिम जो मनका है, वह मुनिवरो! देखो यह 'अमृतं ब्रह्मः कृति' यह मुनिवरो! देखो असुति कहा जाता है, जिसमें मुनिवरो! देखो यह सूर्य प्रतिष्ठित हो जाता है। जिसको आरूणी कहते हैं; मानो जिसको अपने में प्रतिभाषित कहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उसमें जब ओत-प्रोत होता है तो अपने में अपनेपन का ही दृष्टिपात् कराता हुआ, मुनिवरो! देखो यह इतने मण्डलों का सौरमण्डल बनता है और सौरमण्डल, मुनिवरो! देखो 'अमृतं ब्रहे' सौरमण्डल बन करके नाना आकाश-गंगाओं का निर्माण होता है, तो बेटा! मैं इस

## सूर्य का अदिति-रूप

मेरे पुत्रो! देखो वैदिक साहित्यवेताओं ने जब विचार-विनिमय किया तो सूर्य को अदिति के नाम से वर्णन किया है। इसका ही नामोकरण मानो देखो विष्णु है और इसी का नामोकरण उदयन कहा गया है। यह उदय होता है तो रात्रि को अपने में निगल जाता है और जब यह उदय होता है तो नाना प्रकार की क्रान्ति को ले करके उषा-काल में, बेटा! अमृत को बिखेर देता है। यही मानो देखो सूर्य है, जो अदिति बन करके मानो देखो 'अजातां ब्रह्मे' यह मानो देखो ब्रह्मचारी भी आदित्य बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो उसी की ऊर्ज्या में नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में गमन करने वाले यन्त्रों का निर्माण किया जाता है जो मानो वैज्ञानिकजन इसके ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं।

आओ, मेरे प्यारे! देखो यह जो सूर्य है, इसी के प्रकाश में मानो इसी में ओत-प्रोत होने वाला यह चन्द्रमा है। चन्द्रमा, 'ब्रह्म कृतं सूर्यं ब्रहे' यह जो सूर्य है, मानो देखो प्रकाश का द्योतक है, और यह उषा का 'आवृत्तम्' मानो देखो कृषक की भूमि को, यह अन्न आदि को परिपक्व करने वाला है, इसलिए मानो देखो इसको हमें अदिति स्वीकार कर लेना चाहिये। यह प्रकाशक है और यही, मुनिवरो! देखो प्रकाश देता हुआ मानव को अग्रत ऊर्ज्या देता है।

## सूर्य की प्रतिष्ठा—गन्धर्व-मण्डल

मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी बोले कि "प्रभु! हम माता की लोरियों का पान करते हैं। माता हमें शिक्षा देती थी तो वह इस प्रकार की प्रायः

विज्ञान की शिक्षा हमें देती रही है, हम यह जानना चाहते हैं, "भगवन्! यह जो सूर्य है, यह कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा "यह सूर्य गन्धर्व लोकों में प्रतिष्ठित हो जाता है, यह गन्धर्व जो मण्डल है जितना भी सौर-मण्डल है मानो देखो उसका यह अन्तिम मनका कहा गया है और यह सूर्य भी उसी में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसका समन्वय आदित्य से होता है, और आदित्य ही मानो देखो उसी से वह भासता रहता है।

मुनिवरो! देखो, वह जो 'अमृतम्' हमारे यहाँ आचार्यों ने कहा, जब हम विचारते रहते हैं, तो नाना पृथ्वियों को विचारते हैं, विज्ञानवेत्ता नाना पृथ्वियों की माला बनाते हैं तो वह सूर्य उन मालाओं को धारण करता है, नाना सूर्यों की माला बनाते हैं, उसको बृहस्पति अपने में धारण कर लेता है और नाना बृहस्पतियों की माला बना करके उसको आरूणी मण्डल अपने में धारण कर लेता है, मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार धारयामी बनाते हुए ध्रुव अपने में नाना मण्डलों को धारण करता है।" तो मुनिवरो! देखो विचार यह कि देखो 'अमृतं ब्रह्म प्रातम्' लगभग-लगभग एक करोड़ की संख्या में गन्धर्व में इस प्रकार के मण्डलों का एक-दुसरे में ओत-प्रोत होता हुआ, उसका सबसे अन्तिम जो मनका है, वह मुनिवरो! देखो यह 'अमृतं ब्रह्मः कृति' यह मुनिवरो! देखो असुति कहा जाता है, जिसमें मुनिवरो! देखो यह सूर्य प्रतिष्ठित हो जाता है। जिसको आरूणी कहते हैं; मानो जिसको अपने में प्रतिभाषित कहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, उसमें जब ओत-प्रोत होता है तो अपने में अपनेपन का ही दृष्टिपात् कराता हुआ, मुनिवरो! देखो यह इतने मण्डलों का सौरमण्डल बनता है और सौरमण्डल, मुनिवरो! देखो 'अमृतं ब्रहे' सौरमण्डल बन करके नाना आकाश-गंगाओं का निर्माण होता है, तो बेटा! मैं इस

सम्बन्ध में विशेषता नहीं, केवल यह, कि सूर्य कहाँ प्रतिष्ठित होता है? यह, मेरे प्यारे! गन्धर्व-मण्डल में ओत-प्रोत हो जाता है और, गन्धर्व ही अपने में उसे धारण कर लेता है।

## गन्धर्व की प्रतिष्ठा—इन्द्र-लोक

मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचारी नतमस्तक हो करके बोले—"कि प्रभु! आपकी बुद्धि बड़ी प्रखर है, आपका अध्ययन बड़ा विचित्र है, हम यह जानना और चाहते हैं, जिज्ञासा तो हममें बनी ही रही है और जिज्ञासा यह कि हम यह और जानना चाहते हैं कि यह गन्धर्व कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा—"यह गन्धर्व, इन्द्र-लोकों में प्रतिष्ठित होता है।" तो आओ, वैदिक साहित्य में इन्द्र की बड़ी विचित्र व्याख्याएं मानी गई हैं, जैसे इन्द्र नाम परमात्मा का है; इन्द्र नाम राजा का है; इन्द्र नाम आत्मा का है, परन्तु यहाँ प्रकरण से इन्द्र नाम मण्डलों का कहा गया है, लोक को कहा है, जिसमें मुनिवरो! देखो यह गन्धर्व ओत-प्रोत हो जाता है। यह, 'इन्द्रो ब्रह्मणं ब्रहे इन्द्रा सन्धनं ब्रीहि कृता', यह इन्द्र मानो अपनी-अपनी आभा में परिणित हो जाता है और इन्द्र ही मानो देखो सर्वत्र ओत-प्रोत हा रहा है। जितना मण्डलवाद है, जितना लोक-लोकान्तरवाद है, वही इन्द्र में प्रतिष्ठित हो जाता है, उसी में सिमट जाता है।

## इन्द्र की परिभाषा

**वह इन्द्र, 'इन्द्र शासक कृते' को कहा जाता है, इसीलिए वह भी शासन करता है। जैसे आत्मा इस शरीर में रहता है तो वह शासन है, वह शाश्वत है। परन्तु इसी प्रकार परमात्मा का नामोकरण**

**भी इन्द्र है, क्योंकि वह शाश्वत है, वह शासन करता है।** इस ब्रह्माण्ड को निर्माणित करके इसको गति देता है; इसको शासन कर रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो राजा को इसीलिए 'साधनां ब्रहे वृत्तम्' होने से उसे भी इन्द्र कहा है।

## इन्द्र का प्रतिष्ठा तत्त्व–प्रजापति

तो मुनिवरो! देखो 'अमृतं ब्रह्मः' यह इन्द्र में गन्धर्व ओत-प्रोत हो जाता है। परन्तु ब्रह्मचारी नतमस्तक हो करके बोले–"प्रभु! यह इन्द्र कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा–"यह जो इन्द्र है, 'अमृत्' देखो यह प्रजापति में ओत-प्रोत हो जाता है। हमारे यहाँ, प्रजापति की बड़ी विचित्र विवेचनाएं हैं। **प्रजापति नाम राजा का है, जो प्रजा का स्वामी है। पिता का नाम भी प्रजापति है, जो प्रजा का स्वामी है और देखो यह संसार प्रजा में ही ओत-प्रोत हो रहा है।** मेरे प्यारे! 'अमृतं प्रजां भूतं ब्रह्मे' यह प्रजा में ओत-प्रोत हो जाता है। यह अपने में प्रजापति कहलाता है। मेरे पुत्रो! देखो, प्रजावान बनता हुआ मानो अपने में बड़ा प्रसन्न होता है। प्रजावान बनने वाली मेरी प्यारी माताएं अपने में बड़ी प्रसन्न होती हैं। इसी प्रकार प्रजावान यह इन्द्र भी प्रजान प्रजापति में ओत-प्रोत हो जाता है, उसी में रत्त हो जाता है।"

## प्रजापति की प्रतिष्ठा-गति–याग

मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने कहा, ब्रह्मचारी ने–"प्रभु हमारी जिज्ञासा तो बन ही रही है। प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, यह प्रजापति कहाँ प्रतिष्ठित होता है?" उन्होंने कहा–"यह जो प्रजापति है यह 'अमृतं धी असुता' मानो देखो हमारे यहाँ यह याग में प्रतिष्ठित हो जाता है। 'यागां

भूतं यागां दिव्यां, यागां पविते ब्रह्म', मानो देखो यह प्रजापति याग में है। **जितने भी संसार के सुक्रियाकलाप हैं, आत्मा से जिनका समन्वय रहता है, मेरे प्यारे! वे सर्वत्र याग रूप माने गये हैं।** तो याग में वह प्रतिष्ठित हो जाता है। प्रजापति याग में रहता है। उसी में प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। मेरे पुत्रो! देखो याग का उत्तरा जितने भी सु-आत्मीय कर्म हैं, उन सर्वत्र का नाम ही याग कहा गया है। क्योंकि वह सब पवित्र क्रियाकलाप माने गये हैं, मेरी प्यारी माता अपने गर्भ में अपने बालक को शिक्षा दे रही है, सुयोग्य बना रही है तो वह याग कर रही है। मेरे पुत्रो! राजा अपने राष्ट्र में, अपने में देखो वह अश्वमेध याग करता हुआ, प्रजा को सुमार्ग दे रहा है, वह भी याग कर रहा है। यहाँ याग की बड़ी विस्तृत विवेचना मानी गई है। माता, देखो पितर अपने गृह में अपने ब्रह्मचारियों को, बाल्यों को, प्रजा को प्रजावान बनाता है, वह भी याग कर रहा है।

## याग का प्रतिष्ठा-कर्म—दक्षिणा

मेरे पुत्रो! देखो, जहाँ 'आत्म ब्रह्मे' सर्वत्र एक याग में परिणित होने वाला यह जगत् है।'' परन्तु जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया, उन्होंने कहा—''हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, यह यज्ञ कहाँ प्रतिष्ठित होता है? यह याग कहाँ प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है?'' उन्होंने कहा—''यह याग प्रतिष्ठायाग जभी बनता है, जब मानो देखो 'दक्षिणां भूतम्' जब यज्ञमान दक्षिणा देता है। मेरे प्यारे! 'दक्षिणां भूतं ब्रह्मः' दक्षिणा में ही यह याग परिणित हो जाता है। उसी में निहित है, उसी में समाहित हो जाता है।'' परन्तु देखो उन्होंने जब यह कहा तो वेद का एक मन्त्र आता है, **'यज्ञमानं ब्रह्मः दक्षणां भूतं ब्रह्मे दक्षिणां देवत्वं ब्रह्मः'**

मेरे प्यारे! देखो यज्ञमान कहता है, अपने पुरोहित से—"प्रभु में आपको दक्षिणा प्रदान करना चाहता हूँ, आप क्या चाहेंगे?" उन्होंने कहा—"दक्षिणा जो तुम्हारी इच्छा है, वह प्रदान करो।" वह कहता है—"दक्षिणां भूतं" आचार्य कहता है कि—"मैं वह दक्षिणा चाहता हूँ, जिससे मेरे यज्ञमान का कल्याण हो जाये। **मेरे प्यारे! देखो, द्रव्य देना नहीं है, द्रव्य देना तो उसके उदर की पूर्ति है, परन्तु दक्षिणा का अभिप्रायः है कि वेद जितनी त्रुटियाँ हैं, उन सर्वत्र अपनी त्रुटियों को यज्ञमान देखो 'यागां पुरोहितां भूतम्' जो याग का पुरोहित है, उसे प्रदान कर देनी चाहिये, क्योंकि वह त्रुटियों का त्यागना ही, मुनिवरो! देखो याग का सफल होना है। और यदि वह याग में त्रुटियों को नहीं त्यागेगा, दक्षिणा नहीं देगा, पुरोहित को, मेरे प्यारे! वह याग सम्पन्नता को प्राप्त नहीं होता।" तो इसीलिए जितनी त्रुटियाँ हैं, उनको त्यागने का प्रयास करना चाहिए।**

## कौशल्या की दक्षिणा

'दक्षिणां भूतम्' जैसे, मुनिवरो! देखो मुझे वह काल स्मरण है, त्रेता के काल में जब, मुनिवरो! देखो राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि याग किया था, तो बेटा! देखो कौशल्या जी ने कहा था कि "मैं अपने देव को, पुरोहित को दक्षिणा देना चाहती हूँ," तो उस समय आचार्य ने कहा—"देवी! दक्षिणा।" तो उन्होंने यह कहा कि—"हम यह चाहते हैं कि तुम्हारे गर्भ से ऐसे पुत्र का जन्म होना चाहिये, ऐसे देव का जन्म होना चाहिये जिससे देखो वह हमारा याग सम्पन्नता को प्राप्त हो जाये।" मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, "दक्षिणां भूतम्' उन्होंने कहा—कि राष्ट्र के अन्न को तुम्हें ग्रहण नहीं करना है, **क्योंकि अन्न से मानव की प्रवृत्तियों का जन्म**

**होता है। अन्न से ही मानव का जीवन बनता है। यदि मानो देखो अन्न पवित्र नहीं है तो मन भी पवित्र नहीं होगा और मन पवित्र नहीं होगा तो मानो उसका क्रियाकलाप भी पवित्र नहीं होगा और जब क्रियाकलाप पवित्र नहीं होगा तो याग कैसे सफल होगा?''** मेरे प्यारे! देखो, वेद का ऋषि कहता है 'अन्नादां भूतं ब्रह्मः' देखो अन्न पवित्र होना चाहिये; परिश्रमी होना चाहिये। उस अन्न को पान करने से हमारी आत्मा का उत्थान होता है। उग्रवाद हमारे जीवन में नहीं आयेगा। हमारा जीवन हिंसक नहीं बनेगा। वह अहिंसा में परिणित हो जायेगा।

मेरे प्यारे! देखो हमारे ऋषि-मुनियों ने जब दर्शन का अध्ययन किया, जब दर्शनों का निर्माण किया, वेद के मन्त्रों के द्वारा उन्होंने वायु को सेवन किया, उसमें से पोषक तत्वों को ले करके और कहीं मानो देखो, जल को ले करके उन्होंने अपने आहार को पवित्र बनाया तो दर्शनों की लेखनियाँ बद्ध कीं। इस सम्बन्ध में, तो बेटा! मैं तुम्हें कल ही चर्चा दे सकूंगा। आज का विचार तो केवल यह कि कौशल्या ने यह संकल्प किया था, कि मैं कोई राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं करूंगी यह 'पापां भूतं ब्रह्मे' यह पाप का अन्न होता है, जो राष्ट्र-कोष में होता है। मानो यह एकत्रित किया हुआ होता है और यह अन्न मेरी बुद्धि को भ्रमित न कर दे। तो इस प्रकार, मुनिवरो! देखो जब यज्ञमान अपनी दक्षिणा प्रदान करता है, दक्षिणा देता है, तो याग अपने में सम्पन्नता को प्राप्त होता है

## दक्षिणा-भावों का जनक—हृदय

मेरे पुत्रो! देखो ब्रह्मचारी बोले कि—''प्रभु! जिज्ञासा बनी रही और

वह जिज्ञासा यह है, अन्तिम जिज्ञासा है कि यह 'यागाम्' देखो यह दक्षिणा कहाँ समाहित रहती है?'' उन्होंने कहा—''दक्षिणा हृदय में रहती है। हृदय से दक्षिणा के भावों का जन्म होता है। और हृदय ही तो देखो मानव के जीवन की प्रतिष्ठा को ऊँचा बनाता है।''

## हृदय की प्रतिष्ठा-प्रगति—श्रद्धा

मानो देखो, ''वह जो 'श्रद्धा, याग-श्रद्धा में रहती है, इसीलिए श्रद्धा होनी चाहिये। और, **श्रद्धा में यह जगत् है, श्रद्धा में माता है, श्रद्धा में पितर हैं, श्रद्धा में आचार्य हैं, और श्रद्धा में ही, मुनिवरो! देखो, यह सर्वत्र जगत् और राष्ट्र श्रद्धा में ही निहित रहता है। तो हमारे अन्तर्हृदयों में श्रद्धा होनी चाहिये और श्रद्धा से विवेक की उत्पति होती है। श्रद्धा में 'वेदां भ्रमण' वेदों का ज्ञान विद्यमान होता है। इसीलिए** हम श्रदालु बनें। और, श्रद्धा में ही ओत-प्रोत हो करके श्रद्धा प्रदान की जाती है।''

## श्रद्धा की परिणति, ब्रह्म-हृदय-मिलन

मेरे प्यारे! देखो आचार्य ने आगे कहा है कि—''हे ब्रह्मचारियो। तुम अबोध हो, देखो आगे अन्तिम प्रश्न मत करो। आगे प्रश्न करोगे तो तुम्हारा मस्तिष्क नीचे गिर जायेगा?'' ब्रह्मचारी, देखो बोले कि—''प्रभु! ''मस्तिकां भूतम्'' ''क्योंकि तुम प्रश्न करते रहोगे और प्रश्न करने वाला देखो वह थकित नहीं होता, उत्तर देने वाला थकित हो जाता है। क्योंकि अन्तिम देखो, अवर्चनीय शब्दों में परिणित हो जाता है। वह अवर्चनीय शब्दों में न ले जाओ। हे ब्रह्मचारी! 'ब्रह्मणे कृतं देवत्वां ब्रह्मः''। **मानो देखो यह श्रद्धा, हृदय में ओत-प्रोत रहती और जब परमात्मा के**

**हृदय और मानव के हृदय का एकोकीकरण हो जाता है, तो मानव मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है।** हे ब्रह्मचारी तुम मोक्ष में चले जाओ, परन्तु देखो इस अपने में हृदय को हृदय से मिलान करना है। और हृदय से हृदय का मिलन वाला ही मानो देखो यह जगत् माना गया है। **हृदय से मिलान होता है तो प्रजावान बनता है। हृदय से देखो हृदय का मिलान होता है, तो इन्द्र बनता है, 'इन्द्रं ब्रह्मे'। हृदय से हृदय का मिलान होता है तो सूर्य अपनी आभा में देखो तेजोमयी बन करके प्रकाश देता है। यह सर्वत्र जगत् ही मानो देखो परमात्मा का हृदय है। और जब मानव का हृदय परमात्मा के हृदय से समन्वय कर लेता है, तो बेटा! वह इकाई में परिणित हो करके परमात्मा को प्राप्त कर लेता है।**

आओ, 'बेटा! मैं कोई व्याख्यता नहीं हूँ, तुम्हें केवल परिचय देने के लिए आया हूँ। और, परिचय केवल यह है कि हम देखो हृदय से श्रद्धा, और श्रद्धा से दक्षिणा और दक्षिणा से ही, मेरे प्यारे! याग और याग से प्रजापति, प्रजापति से इन्द्र और इन्द्र से गन्धर्व और गन्धर्व से सूर्य, सूर्य से चन्द्रमा, मुनिवरो! देखो यह तो ध्रुवा से ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ी और इसी प्रकार, मुनिवरो! देखो यह संसार पृथ्वी में, और पृथ्वी, मुनिवरो! देखो आपो में, आपो अग्नि में और अग्नि, मुनिवरो! देखो वायु में और वायु, अन्तरिक्ष में गमन करता रहता है। इन सर्वत्र परमाणुओं को ले करके और पिण्डों में गति कराता रहता है प्राण, वायु के माध्यम से। इस प्रकार, मुनिवरो! देखो वेद का वाक्य कहता है, हे मानव! तू अपने में चिन्तन करने वाला बन। ऋषि-मुनि और ब्रह्मचारी अपने विद्यालयों में विद्यमान हो करके, बेटा! इस प्रकार जब गम्भीर

मुद्रा में मुद्रित हो जाते हैं तो विद्यालय श्रेष्ठ बन जाते हैं और राष्ट्र भी पवित्र बनता है,, समाज भी ऊर्ध्वा को प्राप्त होता है।

तो बेटा! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा का गुणगान गाते हुए इस संसार-सागर से पार होने का प्रयास करें। क्योंकि यह संसार, सागर है अमूल्यत्त्व है और इस सागर में, बेटा! देखो जितनी गम्भीरता में चले जाओंगे उतना ही मानो यह सागर तुम्हारे समीप आता रहेगा। यह बेटा! आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है? क्या, परमात्मा का जो जगत् है, इसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना चाहिये और गम्भीरता से, मुनिवरो! देखो जिज्ञासु बन करके यर्थाथता में प्रवेश कर जाओगे तो मानवीयत्व का कल्याण हो जायेगा। यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा तो तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

श्री राजपाल त्यागी
पञ्चशील, मेरठ
२६—१२—६१

# यज्ञशाला-समन्वय

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, जो परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं। आज हमें कहीं से यह प्रेरणा आ रही है कि याग के ऊपर कुछ अपना व्यक्तव्य, विचार-विनिमय दिया जाये।

## संसार रूपी यज्ञशाला

आज का हमारा वेद-मन्त्र उस परमपिता परमात्मा के यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन कर रहा था जो एक-एक आख्यिका में निहित रहता है। तो वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है; हम उस परमपिता परमात्मा को अपने में मानो याज्ञिक स्वीकार करते रहे हैं, क्योंकि इसका **यह जो ब्रह्माण्ड है अथवा यह जो जगत् है, यह एक प्रकार की यज्ञशाला माना गया है। यहाँ प्रत्येक मानव अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके सुकर्म की उन्हें प्ररेणा आती रहती है और उसी प्ररेणा के साथ में जो अपने जीवन को बनाने का प्रयास करता है तो वह परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में याग कर रहा है। तो 'यजनं ब्रह्मः' मानो जितना भी संसार का शुभचिन्तन है, सुविचार है मानो वह सर्वत्र यज्ञमयी स्वीकार किया जाता है।**

विचार आता रहता है कि परमपिता परमात्मा का यह जो संसार है,यह जो राष्ट्र है अथवा राज्य है या यह ब्रह्माण्ड है, इस ब्रह्माण्ड में उस परमपिता परमात्मा का याग हो रहा है। तो वह जो याग है, अपने में बड़ा महान् और पवित्रत्त्व में रत्त होता रहा है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनि परम्परागतों से अन्वेषण करते रहे हैं और सृष्टि के प्रारम्भ से ही अपने जीवन को चिन्तनीय बनाते रहे हैं और वह जो चिन्तन है एक महान है, जिसके ऊपर मानव क्या, **प्रत्येक प्राणी अपने में चिन्तनमय बना हुआ है और विचार-विनिमय करता रहता है कि परमात्मा के उस ज्ञान और विज्ञान में मैं रत्त हो जाऊँ। जैसे मानो देखो विद्युत होती है और मुनिवरो ! देखो, वह विद्युत अपने में ही, मानो देखो, मेघ-मण्डलों में शान्त हो जाती है, इन्द्र के द्वार से आती है और वह शचि बन करके मानो मेघ-मण्डलों में शान्त हो जाती है इसी प्रकार प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मेरे जीवन में मैं मानो देखो 'उसी' में रत्त होता रहूँ और उसी में मानो देखो मेरी प्रतिष्ठा हो जाये।** तो ऐसा प्रत्येक मानव का एक मानवीय विचार रहता है, चाहे वह शिक्षक है, चाहे वह गृहपथ्य नाम की अग्नि का चयन करने वाला है, चाहे वह आह्वनीय नाम की अग्नि का चयन करने वाला है, चाहे वह मानो देखो गार्हपथ्य अग्नि में रत्त हो रहा है। तो विचार आता रहता है कि यह संसार मानो एक प्रकार की यज्ञशाला है मानो देखो 'ब्रह्मणं ब्रह्मः कृतं देवाः', प्रत्येक राजा भी यही चाहता है कि मैं राष्ट्र में अपने में मौन हो जांऊ और मेरे मौन होने से मेरा राष्ट्र पवित्र बन जाये।

### याज्ञिक की समन्वय-यज्ञशाला

मेरे प्यारे! मुझे बहुत सा काल स्मरण आता रहता है, हमारे यहाँ

जब वाजपेयी अथवा अग्निष्टोम और 'देव अमृतम्' अश्वमेध याग होते रहे हैं। तो अश्वमेध याग राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके, उस याग में अपने-अपने विचारों की आहुति देते रहे हैं। और, साकल्य की आहुति अग्नि के मुखारबिन्दु में देते हुए वह यज्ञमान बन करके अग्नि से कहता है–"हे अग्नि! तू देवताओं का मुखारबिन्दु है और तू देवताओं के द्वारा यह मानो देखो साकल्य, देखो भाव भीनी मेरी यह जो धाराएं हैं, उसे तू देवता के द्वारा प्रणीत कर, क्योंकि देवता मेरे अन्तर्हृदय में क्रियाकलाप कर रहे हैं, वे देवता यहाँ और वह बाह्य-जगत् में दोनों एक तुल्य माने गये है। तो मेरे प्यारे! देखो यज्ञमान इस प्रकार 'प्रथा वर्णनं ब्रह्मः'।

## शरीर रूपी यज्ञशाला

वेद का मन्त्र कहता है, मुनिवरो! देखो, **'अवृत्तम्' अग्नि है और अग्नि देवताओं का मुख है इसी प्रकार मानव के शरीर में भी अग्नि प्रदीप्त होती रही है और मानो देखो यह जो शरीर रूपी जो एक नृत्य है, यज्ञशाला है, इसमें देवता अपना क्रियाकलाप कर रहे हैं। तो वह देवत्त्व को प्राप्त हो रहे हैं, वह 'अग्नि' देवता कहलाती है, बाह्य-जगत् में भी आन्तरिक जगत् में भी मानो देखो इस अग्नि का हमें आह्वान करना चाहिये।** विचार आता रहता है, बेटा! यह देवताओं की पुरी है और देवताओं की पुरी में मानो देखो अग्न्याधान हो रहा है। यह कैसा विचित्र अग्न्याधान हो रहा है जिसके ऊपर प्रत्येक मानव अपने में चिन्तनमय बना हुआ है!

बेटा! मैं आज तुम्हें उस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तो नहीं केवल

विचार-विनिमय यही, कि हम परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त होते रहें और उसका ज्ञान और विज्ञान, अपने में धारयामि स्वरूप यह ब्रह्माण्ड की रचना हो रही है और मानव का शारीरिक जो जीवन है, यह भी आत्मा रूपी जो ब्रह्मा है मानो पञ्च महाभूतों में इन्द्र जो प्रथम है, वह मानो अपने में याग हो रहा है, और वह याज्ञिक बना हुआ है। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में इतना वाक् उच्चारण करने आया हूँ कि हमारा सर्वत्र जगत् मानो देखो याग में परिणित रहता है।

## शिकामकेतु उद्दालक का विज्ञान

आओ, मेरे प्यारे! मैंने कई कालों में वे चर्चाएं प्रकट भी की हैं, आज भी मुझे स्मरण आ रहा है क्या, मुनिवरो! देखो जब मैं शिकामकेतु उद्दालक मुनि के आश्रम में प्रवेश करता हूँ तो शिकामकेतु उद्दालक मुनि मानो नित्यप्रति अपनी विज्ञानशाला में याग करते थे और जब वह याज्ञिक बनते उनकी देवी रम्भेश्वरी और शिकामकेतु, उद्दालक गोत्र में जन्म लेने वाले ऋषिवर, बेटा! याग कर रहे हैं। परन्तु देखो वह अग्नि की धाराओं के ऊपर चिन्तन कर रहे हैं, अपने पूर्वजों के विचार और उनके चित्रों को जानने का प्रयास करते, क्योंकि विज्ञान अपने में बड़ी पराकाष्ठा पर रहा है। विज्ञानवेत्ता जब अपने में, बेटा! जब विज्ञान की प्रतिभा में परिणित होते तो विज्ञान अपने स्थान में मानो एक परिपूर्ण रहा है।

## विभाण्डक मुनि की अध्यक्षता में ऋषि-सभा

मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण आता रहता है,एक समय ऋषि-मुनियों की एक सभा हुई जिस सभा में, मुनिवरो! देखो महर्षि विभाण्डक मुनि

महाराज की अध्यक्षता में जिसमें महर्षि वैशम्पायन भी विद्यमान हुए और प्रवाहण, शिलभ और दालभ्य इत्यादि ऋषि-मुनियों का एक समाज था।

## यज्ञ और अग्नि का समन्वय

मुनिवरो! देखो उन्होंने कहा कि—"अमृतं ब्रह्मे अग्नं ब्रह्मः', कि यह अग्नि का और यज्ञ का क्या समन्वय रहता है?" तो महर्षि विभाण्डक मुनि बोले कि—"देखो, यह जो अग्नि है, यह देवताओं का मुखारबिन्दु है, जैसे राष्ट्र में एक पुरोहित होता है, जैसे जगत् में अग्नि है, ऐसे ही जो पुरोहित है, बुद्धिमान है, जो पराविद्या के देने वाला है वह भी अग्नि के तुल्य कहलाता है तो इसीलिए इसी प्रकार 'अग्नं ब्रह्मः अग्नहुते' यह अग्नि मानो देवताओं का मुखारबिन्दु है, यह पुरोहित है, यही 'ज्ञानं ब्रह्मे' और यह सदैव नवीन बना रहता है जिस ईंधन को यज्ञमान नित्यप्रति मानो भस्माभूत करता है और उसकी सूक्ष्म धाराओं को अग्नि में परिणित करता है, यह अपनी यज्ञशाला में याग करता है तो याग करता हुआ समिधा को मानो अग्नि को 'अग्नि' के समर्पित करता है और 'अग्नि' उसे, मुनिवरो! देखो द्यौ में प्रवेश करा देती है। मुनिवरो! देखो वह अग्नि ही अप्रतिम् है, वह धारा है और परमाणुवाद को लेकर के अन्तरिक्ष में गमन करती है। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज अपने आसन् पर विद्यमान हैं परन्तु जब यह सभा हुई तो उस समय विभाण्डक मुनि से कहा गया कि—"महाराज! हम इसको प्रत्यक्ष रूप से जानना चाहते हैं।"

## उद्दालक-आश्रम में ऋषि-आगमन

सब ऋषि-मुनि अपनी वार्ता प्रगट करा रहे थे और महर्षि विभाण्डक

मुनि की अध्यक्षता वाला समाज मानो कजली वनों से भ्रमण करता है और भ्रमण करता हुआ, मुनिवरो! देखो वह शिकामकेतु उद्दालक के आश्रम में पहुँचा और शिकामकेतु उद्दालक ने उनका स्वागत किया और स्वागत करते हुए कहा—"सम्भव ब्रह्मे लोकाम्' हे प्रभु! आज कैसे आगमन हुआ है?" तो मुनिवरो! देखो, महर्षि 'सम्भव ब्रहे कृतम्' वेद का ऋषि कहता है 'सम्ब्रहे सत्कारं धनं ब्रीहि वर्जासुतं ब्रहे', महर्षि प्रवाहण बोले कि—"हे प्रभु! हम जिस तरह आपका नामोकरण श्रवण करते हैं वह व्यवहार में प्राप्त नहीं होते हैं।" उन्होंने कहा—"भगवन्! क्योंकि आपने ऋषि-मुनियों से यह नहीं प्राप्त कराया कि तुम्हारा आगमन कैसे हुआ है और आगमन हुआ है तो हमारा आतिथ्य स्वीकार किया जाये।" मेरे प्यारे! रम्भेश्वरी ने कहा—"प्रभु ! हे ब्रह्मवेताओ! हमारे व्यवहार में त्रुटि रह गई हो उसको क्षमा कीजिए।" तो मुनिवरो! देखो, क्षमा का पात्र बन गये।

देखो, जब उन्होंने नाना प्रकार के कन्दमूल और जो भी आश्रम में था ला करके ऋषि-मुनियों का आतिथ्य किया और आतिथ्य-सत्कार करने के पश्चात् मानो उन्होंने 'रथं ब्रह्मे' उस समय उन्होंने कहा—"कहो, भगवन्!" दोनों ने नतमस्तक हो करके कहा, "कैसे तुम्हारा आगमन हुआ है?" उन्होंने कहा—"ऋषिवर! हमारा जो आगमन हुआ है इसलिए कि हम न्योदा में वेद-मन्त्रों का उद्गीत गा रहे थे, प्रातःकालीन मानो वेद-मन्त्रों का उद्गीत गा रहे थे, वेद में नाना प्रकार के मन्त्रों का उद्घोष हो रहा था और वह मन्त्र यह कह रहा था, 'यशतं ब्रह्मे यज्ञनं ब्रह्मः वर्णस्सुते',—हे प्रभु ! यह जो यज्ञमान है, यह अग्नि की धाराओं पर अपने चित्रों को चित्रण कर लेता है। तो प्रभु! हम चित्रों को

दृष्टिपात् करना चाहते हैं। हमने यह श्रवण किया है कि तुम जहाँ याज्ञिक हो वहाँ ब्रह्मवेत्ता हो और जहाँ ब्रह्मवेत्ता हो वहाँ याज्ञिक हो। भौतिक याज्ञिक भी कहलाते हो और भौतिक याग के साथ में तुम आध्यात्मिक याग में भी परिणित रहते हो।" मेरे पुत्रो! उन्होंने कहा–"भगवन्! इसमें 'अमृतम्' मानो यह तो मैं सदैव चिन्तन करता रहता हूँ",

## परमात्मा और आत्मा का ब्रह्मत्त्व

ऐसा मुझे स्मरण आता रहा है, पुत्रो! कि वह विचार-विनिमय करते रहे और विचार-विनिमय उनका बड़ा भव्यता में होता रहा। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा है–"सन्धनं वर्णे सुतं यज्ञनं ब्रह्मः' मानो देखो वह जो ब्रह्मा है, वह यज्ञनम् है, वह याज्ञिक है, मेरे प्यारे! वह ब्रह्मा है, शाश्वत है, तो इसीलिए देखो **वह जो परमपिता परमात्मा है, वह ब्रह्मा इस संसार रूपी यज्ञशाला का ब्रह्मा है, आन्तरिक जगत् में यज्ञशाला जो है, इसका मानो ब्रह्मा आत्मा है,** 'आत्मा प्राणं ब्रह्मे' यह सब उद्‌गाता कहलाते है।" मेरे पुत्रो! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया, उन्होंने कहा–"प्रभु! हम गम्भीरता से उसको साक्षात्कार दृष्टिपात् करना चाहते हैं।"

## उद्दालक के यन्त्रों में चित्रावलोकन

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ से भ्रमण करना प्रारम्भ किया तो शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज अपने आश्रम में ले गये। उनके यहाँ ऐसी-ऐसी चित्रावलियाँ थीं, ऐसे-ऐसे वैज्ञानिक यन्त्र थे कि उन्होंने कहा–"प्रभु! यह मेरा यन्त्र है, और जब हम याग करते हैं तो याग के

पश्चात् हम मानो जो तरंगे हैं, देखो चित्रों के सहित जो तरंगें हैं, उन तरंगों को हम एकत्रित कर लेते हैं, यन्त्रों में लाने का प्रयास करते हैं और यन्त्रों में ला करके उसके ऊपर अन्वेषण करते हैं। मानो देखो, जो इस प्रकार का अन्वेषण होता है, हम जब अपने में उस अन्वेषण को चिन्तन में चिन्तन का विषय बनाते हैं तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात् आता है कि इसमें चित्र दृष्टिपात् आते हैं मानो चित्रों का दर्शन होता है तो इसीलिए हमने यन्त्रों का निर्माण किया और यन्त्रों में उन चित्रों का मानो चित्रीकरण होने लगा है। यह दृष्टिपात् करोगे यह मेरे पिता हैं, महापिता हैं, परमपिता हैं और हम उन परमपिताओं के जो क्रियाकलाप हैं, जो हैं नहीं संसार में परन्तु उनके जो क्रियाकलाप हैं, वह जो वाणी से उद्गीत गा रहे हैं और वाणी में जो चित्रण हो रहा है, वह चित्र उसमें मुनिवरो! प्रायः दृष्टिपात् आ रहा है, यह दृष्टिपात् करो।'' तो यन्त्रों में जब बेटा! दृष्टिपात् आने लगा तो दृष्टिपात् करके उनका हृदय मग्न हो गया, उन्होंने कहा—''धन्य है, प्रभु!''

मेरे प्यारे! उन्होंने पिता-महापिता नहीं, पच्चीसवें महापिता के यन्त्रों का दिग्दर्शन कराया। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने सौंवे महापिता तक का दर्शन कराया यन्त्रों के द्वारा। मानो देखो, यन्त्रों में उनके सौवें महापिता का चित्र आ रहा है, उसी में रत्त हो रहे हैं। विचार आता है, बेटा! विज्ञान की पराकाष्ठा और विज्ञान अपने में कितना पूर्णता का दर्शन करा रहा है! मेरे प्यारे! देखो वेद के ऋषि ने यह कहा, 'आचार्य ब्रह्मः' विभाण्डक ने कहा कि—''हे प्रभु! यह 'यागां ब्रह्मः', तुम्हारे महापिताओं का जो क्रियाकलाप आ रहा है, उनका क्रोध भी आ रहा है, उनका मधुरपन भी आ रहा है, उनका विज्ञान भी आ रहा है, ब्रह्म-विज्ञान

भी आ रहा है, ब्रह्मवेत्तापन में मानो उनकी उपदेश-मञ्जरी भी आ रही है।''

## शब्द की तीन गतियाँ

**मेरे प्यारे! देखो यह विज्ञान सर्वत्र तरंगों में ओत-प्रोत रहता है। इसीलिए वेद के आचार्यों ने कहा कि शब्द की तीन प्रकार की गतियाँ होती हैं, एक मानो भुः, भुवः और स्वः। मानो स्वः लोक में जो सात्विक शब्द होता है, मार्मिक होता है, मानो देखो वह गुणों से उपरामता को प्राप्त होता है, वह द्यौ है और वह कुछ शब्द ऐसे हैं, जो प्रकृतिवादी हैं, जो 'अमृतं संबृहे' मानो देखो वह रजोगुणी हैं राष्ट्र से जिसका सम्बन्ध रहता है और वह जो तमोगुणी शब्द हैं उनमें मुनिवरो! देखो 'ब्रहे' वह यहीं रमण कर जाते हैं।** तो विचार आता रहता है। वह 'शब्दं ब्रह्मः रजोगुणं ब्रव्वा शब्दं वस्मस्सतं ब्रह्मे', यह शब्द यदी सतोगुणी है तो मानो वह द्यौ में हैं, रजोगुणी जो शब्द है वह अन्तरिक्ष में, मुनिवरो! देखो वह भुवः में है और जो तमोगुणी है वह भूः में, पृथ्वी की तलहटियों में गमन कर जाता है।

बेटा! मैं विज्ञान में नहीं ले जा रहा हूँ तुम्हें, केवल विचार-विनिमय यह कि ऋषि-मुनियों का विज्ञान अथवा उनका वैदिक साहित्य अपने में पूर्णता को प्राप्त होता रहा है। मेरे प्यारे! देखो ब्रह्मचारी जब अपने विद्यालय में प्रवेश करता है तो आचार्य अपनी आचार-संहिता को उनके समीप लाते रहे हैं और आचार-संहिता को ला करके अपने विद्यालय के आसन को पवित्र बनाते हैं। मेरे प्यारे! देखो मुझे बहुत सा काल स्मरण

है, मुनिवरो! देखो एक यन्त्र का उन्होंने दिग्दर्शन कराया और कहा, ''देखो यह मेरे पचासवें महापिता हैं, और मेरे महापिता देखो याग कर रहे हैं, याग करते-करते उनकी रजोगुणी-तमोगुणी प्रवृत्ति बन गई है। यह देखो यन्त्र में रजोगुणी और तमोगुणी प्रवृत्ति के चित्र आ रहे हैं, मानो इनके क्रियाकलाप आ रहे हैं''। तो मेरे प्यारे! देखो यन्त्रों में उनके चित्र दर्शाएं जा रहे हैं। **वह तमोगुण-रजोगुण भाव देखो जो है, वह याग को मानो देखो व्रीत कर देता है। वह याग पृथ्वी की तलहटियों में विश्राम को प्राप्त हो जाता है। तो इसीलिए मुनिवरो! देखो याग में प्रायः देखो रजोगुण-तमोगुण नहीं आना चाहिए।** मेरे प्यारे! देखो विचार आता है, मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट नहीं करने आया हूँ, विचार केवल यह, मुनिवरो! देखो, उन्होंने सर्वत्र अपनी यज्ञशाला में यह चित्रण कराया कि मेरे यहाँ नाना प्रकार का याग होता है, चित्रों में दर्शन होता रहता है।

## ब्रह्म-हत्या

मेरे प्यारे! देखो 'द्यौ अमृतम्' और 'द्यौ अम्ब्रह्मे भुवः' और मानो रजोगुण तमोगुण से उपराम हो करके—'बेटा! 'अमृतं ब्रह्मः ब्राह्मण हत्यां भूतम्', वेद का ऋषि कहता है कि ब्रह्म-हत्या न करो। मेरे प्यारे! देखो जो ब्रह्म-हत्या करता है, वह पापाचारी कहलाता है। विचार आता है, बेटा! वेद किसको कहता है, ब्रह्म हत्या के लिए? बेटा! ब्रह्म-हत्या उसे कहा जाता है, **जो ब्रह्मवेत्ता है और मुनिवरो! उसे ब्राह्मण कहते हैं और ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण की मृत्यु को न होने दो, उसकी हत्या न करो।** मेरे प्यारे! वह ब्राह्मण कौन है, जिसकी हत्या से पाप लगता है? जो ब्रह्मवेत्ता है, आत्मा का चिन्तन करने वाला है, न प्रतीत उसकी

भावना से, उसके आत्मबल से आत्मा के प्रभाव से कितने प्राणियों का मानो देखो सत्य से प्राणन्त हो सके।

मेरे पुत्रो! देखो, वास्तव में ब्रह्महत्या एक और है, **जो अपनी अन्तरात्मा से भावना का जन्म होता है और अन्तरात्मा से ब्रह्म-प्रेरणा आई है, और वह परमात्मा की प्रेरणा को जो नहीं स्वीकार करता उसके अनुरूप क्रियाकलाप नहीं करता तो वह ब्रह्म-हत्या कहलाती है।** मेरे प्यारे! देखो, उस प्रेरणा को जो देखो स्वीकार नहीं करता है तो वह ब्रह्म-हत्या में परिणित हो रहा है। मेरे प्यारे! वेद का ऋषि कहता है, कि हे ब्राह्मण! तू ब्रह्म-हत्या न कर। हे यज्ञमान! तू ब्रह्म-हत्या न कर। **वेद का जो ज्ञान है, वह ब्रह्म है। वेद का जो ज्ञान है, वह सदैव नवीन बना रहता है, और नवीन जो ज्ञान है मानो वह प्रेरणादायक है, इस प्रेरणा को तू स्वीकार कर और यदि स्वीकार नहीं करेगा तो तू ब्रह्म हत्यारा है और ब्रह्म-हत्या मानो तेरे जीवन में एक पापाचार का मूल बनती चली जायेगी।**

मेरे पुत्रो! देखो मैंने तुम्हें इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं प्रगट करनी है, विचार-विनिमय यह कि मुनिवरो! शिकामकेतु उद्दालक ने जब यह अपना निर्णय दिया, अपना व्यक्तव्य दिया, तो मुनिवरो! देखो अग्नि की धाराओं पर वह याग करने लगे। परन्तु याग में देखो 'स्वाहा' उच्चारण करते ही वे अग्नि की धाराएं, मेरे प्यारे! देखो वे द्यौ में प्रवेश कर रही थीं। वह अग्नि की धाराओं में रत्त हो करके अपने में अपनेपन का आह्वान कर रहा है और विचार आता रहता है, मुनिवरो! 'अग्नं ब्रह्मः अग्नं दिव्यं भ: वर्णा', **वेद का ऋषि कहता है, तू अग्नि को अपने में धारण कर।**

मेरे प्यारे! देखो शिकामकेतु उद्दालक ने जब अपनी यज्ञशाला में यन्त्रों का दर्शन कराया तो महर्षि प्रवाहण जी उपस्थित हो करके बोले कि—"प्रभु! तुम्हारा जो गोत्र है, वह उद्दालक कहलाता है और उद्दालक गोत्र में मानो सब ब्रह्मवेत्ता हुए हैं, भौतिक विज्ञानवेत्ता नहीं हुए और यह याग की प्रेरणा, भौतिक विज्ञान की तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई?" उद्दालक ने कहा—"हे ऋषिवर! मुझे जो प्रेरणा हुई है, मेरी देवी से हुई है। मेरी पत्नी ने मुझे यह प्रेरणा दी। और, मैं जब मानो विद्यालय में, श्वेतकेतु ऋषि के विद्यालय में पहुँचा तो यह मेरी देवी विद्यालय में अध्ययन करती थी तो याग के ऊपर उनका विचार-विनिमय चल रहा था। मैंने मानो देखो देवी को स्वीकार किया और यह यागों में परायण भी हैं, परन्तु मैं विद्यालयों में परिणित हो गया।" मेरे प्यारे! उन्होंने शिकामकेतु उद्दालक से कहा कि—"प्रभु! तुम्हारा गोत्र उद्दालक है, और यह जो गोत्र तुम्हारा चल रहा है यह मानो देखो तीन हज़ार चालीसवां तुम्हारा वर्ष चल रहा है, तुम्हारा देखो वृत्त चल रहा है और देखो इस उद्दालक गोत्र का जो जन्म है, वह हरिदत्त गोत्रों से हुआ है, और हरिदत्त गोत्रों में देखो एक लाख बावन हजार के लगभग गोत्र चले थे परन्तु वह सब ब्रह्मवेत्ता थे और देखो हरिदत्त गोत्रों का जो निकास है, वह 'अमृतम्' अग्नि गोत्र से हुआ है और अग्नि गोत्र में भी दो लाख वंशलज चले थे परन्तु वे सब ब्रह्मवेत्ता थे और देखो अग्नि ऋषि का जो गोत्र है वह बड़ा विचित्र है, परन्तु देखो उनका जो निकास हुआ, वह ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है, और ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा के भी नाना वंशज हुए हैं, वे सब ब्रह्मवेत्ता होते चले आये। प्रभु! यह प्रेरणा तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई, 'विज्ञानं भूतं ब्रहे'!" मुनिवरो! देखो अपने में धन्य-धन्य कह करके उन्होंने कहा—"प्रभु! मेरा जो सम्भूति है, वह मेरी

देवी है। मानव प्रेरणा का स्रोत्र है, प्रेरणा को प्राप्त करता हुआ अपने ये क्रियाकलाप करता रहता है। अपने में प्रेरित हो करके मानो प्रेरणा का स्रोत बन करके यह अपने जीवन को ऊँचा बना रहा है।''

## यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे

मेरे प्यारे! देखो ऋषिवर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने, बेटा! और भी नाना प्रकार के यन्त्रों का दिग्दर्शन कराया। मुनिवरो! देखो एक-एक शब्द में चित्र हैं और 'विज्ञानां ब्रह्मे' उसमें, बेटा! सर्वत्र विज्ञान विद्यमान होता है। **मेरे प्यारे! देखो एक-एक परमाणु का जगत् है, और जगत् में परमाणु हैं और परमाणु में ब्रह्माण्ड है, मेरे पुत्रो! मेरे प्यारे! देखो जब परमाणु को ध्वस्त किया जाता है तो उस परमाणु ं सर्वत्र संसार निहित हो रहा है।** मुझे, बेटा! स्मरण है, देखो द्दालक गोत्र में सोमकेतु नाम के ऋषि थे उन्होंने एक समय, बेटा! खो परमाणु का विभाजन किया तो विभक्त करके, मुनिवरो! उसमें नाना सृष्टि का जन्म हो गया। मेरे प्यारे! ब्रह्माण्ड का जन्म हो गया। इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में जब शिशु का प्रवेश होता है तो वह भी एक ब्रह्माण्ड होती है। यह ब्रह्माण्ड की प्रतिभा अपने में निहित हो रही है।

यह जो जगत् है, यह परमात्मा का राष्ट्र है, परमात्मा का यह यज्ञोमयी जगत् है। **शरीर भी मानो याग है, यह संसार की नाभि है। जैसे मानव के शरीर का मध्य नाभि है, इसी प्रकार यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की नाभि है, और इसमें जो याग हो रहा है, वह ब्रह्माण्ड की नाभि कहलाता है।** मेरे प्यारे! देखो अपने में नाभ्याम् रूपों में रत्त हो रहा है। तो विचार-विनिमय करने का अभिप्रायः यह कि बेटा! हमें

वैदिक साहित्य को विचारना चाहिए। बेटा! एक-एक मन्त्र हमें बहुत ऊर्ध्वा में गमन करा रहा है। तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे–

**महानन्द जी का प्रवचन**–'ओ३म् देवाः यशस्यं ब्रह्मः वाचन्नमः', मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! मेरे भद्रसमाज! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे अथवा गागर में सागर का भरण कर रहे थे। यह हमारा बडा सौभाग्य रहता है कि हम पूज्यपाद गुरुदेव के मुखारबिन्दु से दार्शनिक विचार अथवा याज्ञिक विचारों को श्रवण करते हैं। क्योंकि जो क्रियात्मक ऋषिमुनियों ने अपने जीवन को उद्‌बुद्ध कराया है वह एक महानता में परिणित होता रहा है। बेटा! विचार तो विचारते रहते हैं परन्तु यह ऋषि-मुनियों का क्रियाकलाप है, उसको उच्चारण करते रहते हैं। मानो देखो जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है, वहाँ एक याग का आयोजन हुआ है और मेरा जो अन्तरात्मा है, मेरा जो विचार है, वह प्रायः यज्ञमान के साथ रहता है और मैं यह कहता रहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे!

## वाममार्गी आधुनिक राष्ट्र

मैं यह कहता रहता हूँ कि यह जो काल है यह वाम-मार्ग का काल है और वाममार्गी उसे कहते हैं जो मानो देखो 'वेदां प्रकाशाम्' जो प्रकाश के विरूद्ध अपने जीवन को ले जा रहा है वह प्रकाश में नहीं रहना चाहता उनकी जितनी चित्रावली है, उनका जितना भी क्रियाकलाप है वह वाम-मार्ग से मानो ओत-प्रोत हो रहा है। जैसे, जहाँ देखो मानव

सुन्दरी और द्रव्य में और देखो सुरा-पान करने में तत्पर हो रहा है, यह मानो देखो आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, वह भी वाम-मार्ग से ओतप्रोत है।

पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी वर्णन कराया कि राजा के राष्ट्र में पुरोहित होने चाहिए जो समाज को ऊँचा बनाने वाले हों। राजा के राष्ट्र में बुद्धिमान विचारक प्राणी होने चाहिए, जिससे राष्ट्र ऊँचा बने और प्रजा में सत्-भावना आ जाये। ऐसा पूज्यपाद उच्चारण कर रहे थे, मैं विपरीत वाक्य उच्चारण कर रहा हूँ कि राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए और राजा को ब्रह्मवेत्ता हो करके राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। **जिस काल में देखो रूढ़ियों का प्रदुर्भाव होता है और ईश्वर के नाम पर रूढ़िवाद बन जाता है, वही रूढ़ी देखो इस राष्ट्र और समाज के विनाश का एक मूल बन जाती है**। तो मैं बहुत पुरातन काल से यह गीत गाता चला आ रहा हूँ कि पूज्यपाद! आधुनिक काल का जो राष्ट्र है वह वाम-मार्ग में सुखी है, क्योंकि उसके यहाँ तो मानो देखो रूढ़िवाद है। जब राजा स्वयं रूढ़िवाद को अपने में धारण करता रहेगा तो अन्धकार में चला जायेगा और जब राजा अन्धकार में चला जायेगा और जब राजा अन्धकार में जाकर उसको वाम-मार्ग कहते हैं और वह अन्धकार मानो देखो रक्तभरी क्रांति के अवशेषों का नृत्य करने लगता है।

## धर्म-परिभाषा

तो विचार आता रहता है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से राष्ट्र के प्रति नहीं केवल धर्म और मानवीयता के ऊपर विचारना चाहिये। और, धर्म किसे कहते हैं? राजा का कर्तव्य है कि धर्म की रक्षा करे। **धर्म**

**कहते हैं कर्तव्य पालन को और जो कर्तव्यवादी प्राणी होता है, वह आत्मा के अनुकूल कर्म कर रहा है।** देखो पुरातन काल में धर्म और देखो ब्रह्म की हत्या राजा नहीं करता था और जो राजा देखो अपनी प्रेरणा को ले करके प्रजा में सत्-भावना देता रहा है, जैसे राजा रघु का जीवन मुझे स्मरण है या देखो महाराजा दिलीप का जीवन स्मरण है पूज्यपाद गुरुदेव देखो विद्यालयों को राष्ट्र में ले जाते हैं तो संरक्षण होता रहता है। जैसे देखो हमारे यहाँ, इस रघुवंश में, देखो पूर्व के काल में महाराजा सगर हुए हैं, असमंजस हुए हैं, असमंजस उनके पुत्र कहलाते थे, उनका जीवन बड़ा भव्यता में मानो देखो कपिल मुनि ने उनकी सेना को उनके क्षत्रियों ने, देखो ब्रह्मचारियों ने नष्ट कर दिया, परन्तु कपिल के चरणों में ओत-प्रोत हो गये और राजा सगर ने यह कहा कि—"प्रभु! यह मेरे राष्ट्र की त्रुटियाँ हैं। मेरे राष्ट्र में अभद्रता है। मैं इसको स्वीकार करता हूँ।" तो राजा जब इस प्रकार के धर्म-कर्तव्य का पालन करता है तो राष्ट्र सदैव ऊँचा बनता है, वह महान् बनता है।

## ब्रह्मवेत्ता निर्माण में मातृ-सहयोग

मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन करा रहा हूँ कि राजा जब तक देखो ब्रह्मवेत्ता नहीं होता, तपस्वी नहीं होता तो राष्ट्र ऊँचा नहीं होता। देखो 'ब्राह्मण स्वनं ब्रह्मः' ब्राह्मण देखो अपने उद्‌गीत गाने वाला, जटापाठ, घनपाठ, माला पाठ में; वेदों का गान गाने वाली मेरी प्यारी माता लोरियों में अपने बाल्य को देखो जटापाठ करने वाली जब नहीं होतीं, राष्ट्र समाज ऊँचा नहीं बनता। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से बारम्बार यह कहा करता हूँ कि मेरी प्यारी पुत्रियों को और माताओं को सदैव अपने बाल्य के श्रोत्रों में देखो वेद-मन्त्रों का उद्‌गीत

गाना चाहिये। और, जब वे उद्गीत गाती हैं और वे यह कहती हैं, 'गायत्राणि छन्दं ब्रह्म कृतम्', हे बाल्य! तू गायत्राणि बन, तू गान गाने वाला बन!

मुझे स्मरण आता रहता है, देखो राजा नल की चर्चाएं आती हैं राजा नल की माता का नाम सुनीता था और वह सुनीता जब लोरियों का पान कराती तो वह गान गाती थी और गान गाते-गाते बाल्य लोरियों को त्याग करके शांत हो जाता था, क्षुधा नहीं होती थी। परन्तु देखो माता का जीवन वास्तव में देखो गायनमय था। वह मल्हार राग मानो देखो वह घन पाठ से वर्णित कर रही है, माला पाठ से देखो गान गा रही है। और, मुनिवरो! देखो बाल्यकाल में उसके संस्कार बन गये, गान उसका अधिकार बन गया। राजा नल का जीवन जिन्होंने दृष्टिपात् किया है या जिन्होंने अध्ययन किया उन्हें प्रतीत है कि वह मध्य-रात्रि में गान गाते तो अपने प्राणों को अपान में प्रवेश करके जब गान गाते तो वे दीप जल जाते थे। इस प्रकार के जो विचार और संस्कार आते हैं, यह मानो देखो एक-दूसरे की प्रेरणा से प्राप्त होता है। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं, केवल यह कि आज जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है, मैं सदैव मानो देखो अपने हृदय से यह कहता रहता हूँ कि, हे यजमान! तेरे जीवन में प्रतिभा बनी रहे, तू विचारक बना रहे और मानो देखो तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे! ऐसी मेरी प्रेरणा रहती है और मैं यह उच्चारण करता रहता हूँ।

## द्रव्य का सदुपयोग और दुरूपयोग

द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिये। उसी द्रव्य का जब दुरुपयोग

होता है तो वह जीवन नरक बन जाता है। इसलिए द्रव्य का जितना सदुपयोग होता है, वह कल्याणकारी होता है। यह याग जो है यह वसु है। क्योंकि पूज्यपाद कहा करते हैं, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी याग की विवेचना कर रहे थे गम्भीर से गम्भीर विवेचना के चित्र कहाँ-कहाँ चले जाते हैं। देखो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के वाक्यों को मंथन करता रहता हूँ, परन्तु जब यह विचार आता है कि 'अमृतं ब्रह्मः' यह विचार अमृतमयी मानो देखो यही द्रव्य देखो देवताओं का मुख बन जाता है, यही द्रव्य देवताओं का मुख बन करके रहता है और इसी द्रव्य का दुरूपयोग करके सुरापान वाले जो प्राणी हैं, वह मानो देखो दैत्य बन करके वायुमण्डल को दूषित कर देते हैं, अपने मानवीय जीवन को दूषित कर देते हैं। इसी प्रकार अब 'द्रव्याम्' द्रव्य का सदुपयोग उसको देवपुरी में पहुंचाता है और वही द्रव्य का दुरुपयोग हो करके दैत्य पुरी में प्रवेश करा देता है।

## याग का वसु रूप

तो विचार आता रहता है, मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं, केवल विचार-विनिमय यह की आज मैं विचार यह देने के लिए आया हूँ कि जहाँ हमारी आकाशवाणी जा रही है और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना करते रहते हैं। इतने गम्भीर शब्दों में यह जाने क्या-क्या उच्चारण कर जाते हैं। मैं इनकी प्रशंसा करने नहीं आया हूँ, केवल अपना विचार देने के लिए आया हूँ, कि 'सम्भूतं ब्रह्म वृत्तं वेदाः' देखो **वेद का जो गम्भीरतम रहस्य है उसके ऊपर विचार-विनिमय किया जाये और हमें अपने में याज्ञिक बनना चाहिये। क्योंकि याग वसु है, यह वसाता रहता है। 'यागां भूतम्'**

**देखो जितना कर्म है, जो आत्मीय कर्म है, आत्मा का प्रेरणादायक क्रियाकलाप करता है, वह बसु है। वह वसाने वाला है।** इसलिए आज का विचार क्या कि हम अपने में देखो बसने वाले बनें। बसें और देखो अपने जीवन में द्रव्य का सदुपयोग करें। यह मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पा रहा हूँ अपने वाक्यों को विराम दे रहा हूँ और राष्ट्र के प्रति यह कि राजा को अपने राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहने देनी चाहिये।

## ईश्वरवाद और धर्म

**ईश्वर के नाम पर जब व्यक्ति की पूजा होती है तो ईश्वर की पूजा समाप्त हो जाती है। तो राजा भी यदि शान्त हो जाता है, तो ब्रह्मवेता मानो देखो नष्ट हो जाता है।** विचार आता रहता है, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन किया है कि राजा को चाहिये यहाँ देखो व्यक्ति को उनमें से दूरी कर दिया जाये। देखो व्यक्ति ईश्वर नहीं हो सकता। 'धर्मं ब्रह्मः' धर्म इन्द्रियों में समाहित रहता है। अरे मानव! तू इन्द्रियों के धर्म को विचार-विनिमय कर, तुझे उनका धर्म दृष्टिपात् करना है। पूज्यपाद कहा करते हैं, ''यदि सुदृष्टि पान करते हो, वह उसका धर्म है, सुशब्द श्रवण करोगे तो वह उसका धर्म है, सुशब्द उच्चारण करोगे, उसका धर्म है, सुविचार प्रकट करोगे तो वही धर्म है।'' देखो जब पूज्यपाद गुरुदेव के इन शब्दों को मैं पुनरूक्ति करता हूँ तो मेरा अन्तरात्मा गद्-गद् हो जाता है।

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, हे मानव। तू धार्मिक बन, रूढ़िवादी मत बन। यदि तू रूढ़ियों में परिणित हो जायेगा तो तेरा विनाश हो जायेगा तू मानवीयता के धर्म का हत्यारा बन जायेगा। मेरे

पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी उच्चारण कर रहे थे मानो देखो **जब इन्द्रियों के धर्म को विचारा जाता है, वही तो धर्म है, वही तो मानवीयता है, वह विज्ञान है, उसकी एक-एक तरंगों को जानते रहो तो विज्ञान में प्रवेश कर जाओगे।** तो इसीलिए वैज्ञानिकता में, मानवीयता में प्रवेश हो जाओ। मेरी प्यारी माता मानो देखो जब वह 'द्रव्यं ब्रह्मणे वृत्तम्' जब मेरी प्यारी माता लक्ष्मी बन करके और मानो देखो अपने में देवत्व को धारण करे तो यह पुनः देवत्त्व को प्राप्त हो जाता है। अब मैं अपने 'अमृतम् ब्रहे' पूज्यपाद गुरुदेव से विश्राम पाता हूँ।

**पूज्यपाद गुरुदेव**—मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी-अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने विचार दिये। इनके विचारों में बड़ी भव्यता और मानवीयता के चित्रण निहित हैं। इसीलिए प्रत्येक मानव को अपने इन चित्रों को चित्रण करना चाहिये। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ याज्ञिक अपनी विचारधारा और रूढ़ियों के त्याग के ऊपर बल देते रहते हैं। राजा को चाहिये कि धर्म के नाम पर, ईश्वर के नाम पर कोई रूढ़ि नहीं रहनी चाहिये। धर्म के नाम पर तो कोई रूढ़ि होती ही नहीं। रूढ़ि होती है ईश्वर के नाम पर और ईश्वर का नाम ले-ले करके मानो रक्त भरी क्रान्ति को संचालित कर देते हैं। यह राजा राम के काल में भी हुआ, द्वापर के काल में भी हुआ, ईश्वरवाद को रूढ़ियों में परिणित कर देते हैं। यह नहीं होना चाहिये। आज का विचार समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

श्री राजपाल त्यागी,<br>पञ्चशील, गढ़ रोड, मेरठ<br>३०-१२-६१

# याग और राष्ट्रवाद

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, जो यज्ञोमयी स्वरूप है और याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और वह प्रायः उसी में वास करने वाला है। आज कहीं से मुझे यह प्रेरणा आ रही है कि याग के ऊपर कुछ विचार-विनिमय दिया जाये, परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र भी याग के लिए हमें प्रेरित कर रहा है।

## संसार रूपी यज्ञशाला

**हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन होता रहा है और परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है, क्योंकि वह उसी में निहित रहने वाला है।** जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ अथवा सृजन हुआ तो परमपिता परमात्मा ने इस संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया और यज्ञशाला का निर्माण करने के पश्चात् वही उसका नियमन कर रहा है अथवा इसको गतिवान बना रहा है। मानो एक तो यह ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया, जिसमें नाना लोक-लोकान्तरों में जो प्राणी मात्र है अथवा जो पिण्ड रूपों में नाना प्रकार का लोक-लोकान्तर दृष्टिपात् आ रहा है, यह एक-दूसरे में याज्ञिक बना हुआ है। मानो लोक, लोक की सहायता में

परिणित हो रहा है। जैसा हमने इससे पूर्व काल में तुम्हें प्रकट कराया था कि **एक-दूसरे को मानो सहायता करना अथवा उसको सहयोग देने का नाम भी यज्ञमयी स्वरूप माना गया है**। इसीलिए परमपिता परमात्मा इस संसार का सृजन करते हैं और सृजन के पश्चात् ब्रह्मा रूप में इसका नियमन, और इसको गति देते हैं और इसको चलायमान करते हुए 'अमृतं ब्रह्मः वर्णस्सुतम्' मानो उसका नाम एक यज्ञमयी स्वरूप माना गया है।

## मानव-शरीर रूपी यज्ञशाला

यह मानव का जो शरीर है, इसी प्रकार यह भी एक प्रकार की यज्ञशाला है। इस यज्ञशाला में मानो देखो यह आत्मा ही इसका संचालन करने वाला है, जैसे परमपिता-परमात्मा इस ब्रह्माण्ड का प्रवर्तक है, संचालन करने वाला है और देखो उस विशाल यज्ञशाला का वह परमपिता परमात्मा ब्रह्मा है, आत्मा यज्ञमान है और यह पञ्चमहाभूतों में से, बेटा! कोई होता है, कोई उद्‌गीत गा रहा है और मानो कोई अध्वर्यु बन करके मानो पुरोहित बन करके याग को सम्पन्न कर रहा है। इस संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण करने वाला प्रभु है और वह स्वयं ब्रह्मा बन करके इसकी अध्यक्षता कर रहे हैं। इसी प्रकार यह जो 'आत्मा मानं ब्रह्म शरीरां ब्रह्मे', **यह जो हमारा मानवीय शरीर है, इसमें आत्मा ब्रह्मा है और पञ्चमहाभूत जो अमृत हैं, मानो इसका संचालन कर रहे हैं**। कोई उनमें से उद्‌गाता है, अध्वर्यु है और पुरोहित बन करके, बेटा! यह याग चल रहा है। गीत गाने वाला उद्‌गीत गा रहा है; अध्वर्यु मानो देखो अपने द्रव्य का स्वामी बना हुआ है, पुरोहित बन करके देखो प्रेरित कर रहा है; आत्मा देखो, मेरे प्यारे! अध्यक्ष रूप में विद्यमान है।

प्राण देखो गति दे रहा है और मन, मुनिवरो! देखो, उसकी विभक्त-क्रिया में निहित हो रहा है। तो वह परमपिता परमात्मा कितना विज्ञानवेत्ता है!

## सङ्गतिकरण और सहयोग

आज हम जब, बेटा! परमपिता-परमात्मा के यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन करते हैं, उसके ब्रह्माण्ड के ऊपर कल्पना करते हैं अथवा अपने में चिन्तन करने लगते हैं तो यह विशाल ब्रह्माण्ड अपने में दृष्टिपात् आता रहा है। तो इसीलिये वेद का ऋषि कहता है, 'यज्ञनं ब्रह्मण्डं ब्रहे कृतम्', ब्रह्माण्ड एक प्रकार की यज्ञशाला है। मानो यह नियमन हो रहा है और चारों प्रकार की जो सृष्टि है, जैसे जंगम, उद्भिज और, मुनिवरो! देखो, स्थावर, 'अमृतं ब्रह्मः वर्णनम्', अण्डज, **यह चारों प्रकार की सृष्टि एक-दूसरे की सहयोगी बनी हुई है अथवा यह सहयोगी बन करके, मेरे पुत्रो! देखो कोई सुगन्ध दे रहा है, कोई मानो देखो सुगन्ध को कहीं प्रसारित कर रहा है, कहीं मानो देखो सुगन्ध को द्यौ में प्रवेश कर रहा है, तो एक प्रकार से मानो देखो परमात्मा का जो ब्रह्माण्ड है, यह एक प्रकार की कैसी भव्य वितरण प्रणाली है, जिसके ऊपर मानव विचार-विनिमय करता रहा है!**

हमारे ऋषि-मुनि एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके इसके ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं अथवा उसके ऊपर विचार-अध्ययन करते हुए अपने में अपनेपन को चिन्तन में लाते रहे हैं, जिससे यह परमपिता परमात्मा, जो हमारा रक्षक है, हमारा जो मानो देखो, 'वितरण ब्रहा', वह वितरण करा रहा है, हमारे जीवन को और ब्रह्माण्ड की आभा में जो निहित रहने वाले हैं, तो इसीलिए हम परमपिता परमात्मा को अपना देव स्वीकार करते हुए उसकी उपासना करते रहें!

## विज्ञानवेत्ता महर्षि मार्कण्डेय

मुनिवरो! देखो, याग के सम्बन्ध में ऋषि-मुनियों ने बड़ी विचित्र अपनी लेखनियाँ बद्ध की हैं। मुनिवरो! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, मार्कण्डेय ऋषि का जीवन। मार्कण्डेय मुनि महाराज, बेटा! एक समय अपने आसन पर विद्यमान थे, क्योंकि महर्षि मार्कण्डेय जहाँ वह मानो ब्रह्मवेत्ता थे, वहाँ विज्ञानवेत्ता भी थे। क्योंकि विज्ञानवेत्ता का यह 'वृत्तम्', क्यों देखो, क्योंकि विज्ञान की आभा में सदैव निहित रहते थे, महाराजा शिव की सहायता से निहित रहते थे। महाराज शिव की सहायता से मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने, बेटा! यन्त्रों का निर्माण किया था, जो चन्द्रमा और देखो 'अमृतम्', पृथ्वी की जहाँ सीमाबद्ध हो करके, वहाँ उनका यान विद्यमान हो जाता, वहाँ वह यन्त्र विद्यमान हो जाता, वहाँ पर विश्राम करते अथवा वहीं से विद्यमान हो करके वह, मेरे प्यारे! नाना प्रकार के विज्ञान के ऊपर विचार-विनिमय करते रहे।

## महर्षि मार्कण्डेय का याज्ञिक-जीवन

महर्षि मार्कण्डेय मुनि महाराज, जहाँ देखो विज्ञानवेत्ता थे, वहाँ वह 'यागां भवितं ब्रह्मे वर्णः' वह अपने में, बेटा! देखो याग में विद्यमान हो करके याग की क्रिया को ऊंचा बनाते थे और उनका यह कथन रहा है कि याग अपने में एक विचित्र धारा को अपनाने वाला है। क्योंकि उन्होंने जब, बेटा! देखो याज्ञिक सूत्रों का वर्णन किया और सूत्रों का वर्णन करके उन्होंने कहा कि **यह जो जगत् है, यह सर्वत्र ही मानो एक प्रकार का याग है।** क्योंकि विज्ञान में जाओ, तो वहाँ भी तुम्हें याग ही दृष्टिपात् आता है, क्योंकि विज्ञान में भी सुगन्ध की आवश्यकता

रहती है। विज्ञान में भी, बेटा! देखो अपने यान, अपनी परिनिधियों में विद्यमान हो करके प्रायः वह विचार-विनिमय करते रहे हैं।

## तृतीय यज्ञशाला की अवधारणा

**आध्यात्मिकवाद के लिए जब वह (साधक) गमन करता है तो, बेटा! देखो वहाँ याग की आवश्यकता है, क्योंकि उससे वायुमण्डल पवित्र होता है। ऋषि-मुनि जब भी साधना में प्रवेश होते रहे हैं, तो, बेटा! वह याग करते हैं।** माता-पिता जब यह विचारते हैं कि हम पुत्र-याग करेंगे तो वह भी अपने गृह में सुगन्ध करते हैं अथवा याग करते हैं। देखो, वेद-मन्त्रों में इस प्रकार के विचार आते हैं, जिनके ऊपर विचार-विनिमय करना बहुत अनिवार्य है और वह यज्ञमान वाक्य उच्चारण करता है याग के द्वारा 'यजनं पुत्र ब्रहा कृतं देवाः अस्सुतं प्राणं वरणं ब्रह्मः स्वाहा' कह करके वह स्वाहा देता है, जिससे, मुनिवरो! उनका गृह पवित्रता में परिणित हो गया अथवा परमाणुवाद (सजातीय हो गया)।

## कर्मकाण्डीय सजातीयता

**उसी प्रकार का साकल्य हो, उसी प्रकार के वेद-मन्त्र, बेटा! उद्गीत गाने वाले हों और उसी प्रकार का विचारक, बेटा! उद्गाता उदगीत गाता है, तो मेरे प्यारे! देखो इस प्रकार और, मुनिवरो! देखो, जब साधक अपनी साधना में प्रवेश होता है तो वह यह विचारता है कि मेरा याग, मानो वायुमण्डल मेरा पवित्र हो तो मेरा आध्यात्मिक याग सम्पन्नता को प्राप्त होगा।**

## महर्षि कागभुषुण्ड का यागानुष्ठान

मेरे प्यारे! मुझे देखो महाराजा कागभुषुण्ड जी का जीवन स्मरण आता रहता है। मैंने कई कालों में तुम्हें चर्चाएं की हैं। महर्षि कागभुषुण्ड जी, महर्षि लोमश मुनि से एक समय बोले कि—"हे भगवन्! मैं मानो साधना में प्रवेश करना चाहता हूँ और जब मेरी प्यारी माता और पितर, वे जब दोनों साधना करते थे तो वे मानो साधना के लिये याग करते रहे हैं। उनमें देखो भिन्न-भिन्न प्रकार की समिधा हो, भिन्न-भिन्न प्रकार का चरू हो और चरू के द्वारा ही, मुनिवरो! देखो परमाणुवाद को, वायुमण्डल में प्रभावित करते रहे हैं। इसी प्रकार, देखो मैं भी, भगवन्! ऐसा ही करना चाहता हूँ, अनुष्ठान करना चाहता हूँ।" मेरे प्यारे! लोमश जी ने कहा, "बहुत प्रिय!" तो उन्होंने बारह वर्ष का एक अनुष्ठान किया और बारह वर्ष का अनुष्ठान करके, बेटा! भयंकर वनों से वह समिधा लाते और चरू को एकत्रित करके, मुनिवरो! देखो, उन्हें एक गो प्राप्त हुई थी, महाराजा इन्द्र के वहाँ से। उसके गो-दुग्ध के द्वारा, घृत के द्वारा, मुनिवरो! देखो वह याग करते थे। **याग में, मुनिवरो! देखो भावना की जब पुट लग जाती है अथवा वह भावना दी जाती है, तो मेरे प्यारे! तरंगों में वह परमाणु तरंगित हो जाते हैं।**

## महर्षि कागभुषुण्ड और श्वेतकेतु

तो विचार आता है, बेटा! एक समय कागभुषुण्ड जी जब अपने याग में लगे हुए थे प्रातःकालीन, तो महर्षि, श्वेतकेतु अपने विद्यालय में विद्यमान थे और वह विद्यालय में ब्रह्मचारियों को जब शिक्षा देते तो

उनसे कुछ मानो दोषारोपण हो गया और दोषारोपण हो करके ब्रह्मचारियों को उन्होंने दण्डित किया तो रजोमयी प्रवृत्ति बन गयी, रजोमयी प्रवृत्ति बन करके मानो देखो अगले दिवस भी वह रजोमयी प्रवृत्ति बनी रही। वह, मुनिवरो! देखो ब्रह्मचारियों को दण्डित करके अगले दिवस भी वह वहाँ से गमन करते हैं और भ्रमण करके, मुनिवरो! देखो वह कजली बनों में, जहाँ महर्षि कागभुषुण्ड जी याग कर रहे थे पहुंचे, तो उनके याग में वह सम्मलित हो गये और जब वह याग करने लगे तो, मुनिवरो! देखो याग में जैसे ही स्वाहा उच्चारण किया तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड जी जब 'स्वाहा' के ऊपर अन्वेषण करने लगे तो उन्होंने उनके दूषित विचार अथवा तमोगुणी विचार, मुनिवरो! देखो वह रजोगुणी विचार, वह अन्तरिक्ष में, बेटा! परमाणुवाद में प्रसारित हो गये। तो उस समय देखो कागभुषुण्ड जी ने कहा—"भगवन्! यह तुम क्या कर रहे हो? मेरे याग को दूषित क्यों कर रहे हो? यह मेरा याग दूषित हो जायेगा।"

## याग का सम्बन्ध आत्मा से

मेरे प्यारे! देखो क्योंकि याग का जो सम्बन्ध है, वह आत्मा से है। आत्मा का सम्बन्ध देखो प्राणों और मन से है और जब यह मन और प्राण एक-एक सूत्र में सूत्रित हो जाते हैं और देखो परमाणुओं को ले करके वायुमण्डल को पवित्र बनाते हैं तो मन भी उससे पवित्र बनता है।

मुनिवरो! देखो कागभुपुण्ड जी ने जब नमः हो करके और ऋषि से यह कहा तो व्रेतकेतु ऋषि महाराज अपने में मौन हो गये। गार्गे गोत्र में उनका जन्म हुआ था। उन्होंने कहा—"प्रभु! वास्तव में मेरा जो मन-मस्तिष्क है, वह मानो तमोगुण में प्रवेश कर गया है।" उन्होंने

कहा—"तो देखो मेरे याग को भ्रष्ट न करो, इसको तमोगुणी न बनाओ, क्योंकि मैं सतोगुणी बना करके उससे भी उपरामता को जाना चाहता हूँ।" मेरे प्यारे! देखो उन्होंने अपना याग समाप्त कर दिया और समाप्त करने के पश्चात् वृत्तिका ब्रह्मचारी ने, 'अमृतम्' ऋषि ने कहा—"तो प्रभु! 'अमृतं ब्रह्मे'।" मेरे प्यारे! वह तपस्या करने लगे और देखो वह भी अपने में मनन करने लगे। मेरे प्यारे! देखो बारह दिवस तक उन्होंने उपवास लिया और उपवास कर करके वायुमण्डल को उन्होंने पुनः से उस प्रकार का बनाने का प्रयास किया।

**मेरे प्यारे! देखो याग अपने में बड़ा सूक्ष्मतम एक रहस्य माना गया है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने याग के सम्बन्ध में जितनी लेखनियाँ बद्ध की हैं अथवा जितना उन्होंने तपस्या की है, उन्होंने, बेटा! बारह-बारह वर्षों के तीन अनुष्ठान किये थे, जिसमें वह शिलस्थ अन्न को प्राप्त करके, बेटा! उन्होंने याज्ञिक कर्मकाण्ड की एक पद्धति निर्धारित की और यह कहा कि कर्मकाण्ड की पद्धति का जो समन्वय है, वह मन-मस्तिष्क और आत्मा से इसका सम्बन्ध रहता है।**

## याग में मन-प्राण का महत्त्व

मेरे प्यारे! आज मैं याग के सम्बन्ध में कोई अपना विशेष गम्भीर तुम्हें चिन्तन नहीं देना चाहता हूँ, केवल विचार-विनिमय यह कि कागभुषुण्ड जी अपने में मौन हो गये और वह अपने में मौन हो करके, मुनिवरो! देखो उन्होंने बाह्य साकल्य को देखो कुछ समय के लिए स्थगित-कर दिया और वह अपनी वाणी से याग करते थे। वह जल को

प्रोक्षण करके याग करने लगे। मेरे प्यारे! देखो अग्नि समिधा के द्वारा मानो उन्होंने 'अप्रतिम् ब्रह्मे' वह विचारक अग्नि में देखो आहुति प्रदान करने लगे। वह कहता है, प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहाः और समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा कह करके, बेटा! व्यानाय कह करके आहुति दे रहा है। मेरे प्यारे! देखो, क्योंकि प्राण ही तो संसार में इसका वितरण, इसका प्रसारण करता रहता है। मन ही तो इसका विभाजन करता रहता है। मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि याग अपने में बड़ा सूक्ष्मतम्-रहस्यतम् एक विषय माना गया है, जिसके ऊपर ऋषि-मुनियों ने, बेटा! अनुसन्धान किया।

## कागभुषुण्ड जी को महर्षि लोमश की मन्त्रणा

मेरे प्यारे! देखो, इतने में जब यह विचार-विनिमय अपना प्रारम्भ कर रहे थे कागभुषुण्ड जी, तो लोमश मुनि भ्रमण करते हुए उनके समीप आ पहुंचे। उन्होंने कहा–"कागभुषुण्ड जी! कैसे शान्त हो रहे हो?" उन्होंने कहा–"प्रभु! वृत्तिका ऋषि ने आ करके मेरे याग को अपनी तमोगुण प्रवृत्ति से, मानो देखो आहुतियों से अवृत्त कर दिया है। मैं उसका प्रायश्चित कर रहा हूँ। मैं उसको मानो देखो अपने से पश्चाताप कर रहा हूँ।" मेरे पुत्रो! देखो ऋषि ने कहा–"बहुत प्रियतम!" महर्षि लोमश मुनि ने पुनः से वेद-मन्त्रों का उद्गीत गाया–'ब्रह्मणं ब्रह्मे प्राणं ब्रहा कृतं देवाः असुतं दिव्यं ब्रह्मे कृतं देवं ब्रह्मः वाचन्नं ब्रह्मे विष्णुः गतं ब्रह्मः वाचो तद्धन्नं ब्रीहि वृत्ताः' ऐसे ही उन्होंने वेद-मन्त्रों का उद्गीत गा करके, मेरे प्यारे! देखो अपने उस वायुमण्डल को पुनः से प्राप्त करने के लिये और याग को उन्होंने पुनः से प्रारम्भ किया।

**यह अग्नि देवताओं का मुख है, ऋषिवर! अग्नि के मुखारबिन्दु में देखो शुद्ध-पवित्र हूत करना चाहिये। अग्नि मानो देखो हमारे मानवीय शरीर में विद्यमान है, यह वाणी बन करके ही तो मानो देखो अग्नि का स्वरूप बनी हुई है। यह अग्नि ही मानो नेत्रों की ज्योति बन करके यह ज्योतिवान हो रही है। वही अग्नि है जो मानो देखो सूर्य की ऊर्ज्वा में निहित रहती है। वही अग्नि है, जो मानो देखो, वह प्राण के साथ में गमन करती है, मानो देखो गतिवान बना रही है, प्रत्येक प्राणी मात्र उससे गतिवान हो रहा है।** तो मेरे पुत्रो! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार उद्‌गीत गाने का प्रयास किया, उद्‌गीत गाया तो मेरे प्यारे! देखो ऋषि अपने में मौन हो गया।

## महर्षि याज्ञवल्क्य का याग-अनुदर्शन

तो विचार आता रहता है, मुनिवरो! देखो याग के ऊपर ऋषि-मुनियों ने बड़े अनुष्ठान किये हैं। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने तो मानो शतपथ ब्राह्मण में ब्राह्मण की विवेचना करते हुए यह कहा कि **ब्राह्मण वही है, जो मानो देखो ब्रह्म-याग में परिणित होता रहता है और 'ब्रह्म यागां ब्रह्मो कृतं देवः' और स्वयं को ब्रह्मयागी बना देता है।** तो वह 'ब्रह्मं ब्रहे' मानो देखो वह ब्रह्मण कहलाता है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने, बेटा! अपनी लोकोक्तियाँ प्रगट करते हुए कहा कि हमें याज्ञिक बनना चाहिये।

## याज्ञिक आत्मा के मन और प्राण की गतियाँ

**याग का सम्बन्ध आत्मा से है, आत्मा का समन्वय मानो मन से है। मन ही देखो आत्मा के प्रकाश में अपने क्रियाकलाप कर**

**रहा है अथवा बुद्धि भी आत्मा के प्रकाश को ले करके देखो आन्तरिक जगत् का निर्माण कर रहा है।** इसी प्रकार, यह जो प्राण है, वह गति दे रहा है। विशेष प्राण आत्मा के साथ में गमन करता है। मेरे प्यारे! देखो दो प्रकार के प्राणों की परम्परागतों से ऋषियों ने अपनी वृत्तियाँ दी है। उन्होंने कहा एक विशेष प्राण होता है, एक सार्वभौम प्राण होता है। सार्वभौम प्राण, बेटा! उसका समन्वय परमपिता परमात्मा से है और विशेष प्राण का जो समन्वय है वह आत्मा से रहता है, मनस्त्व से रहता है। इसीलिए दोनों प्राणों का समन्वय करना ही, मेरे पुत्रो! देखो योगी को अपने व्यापकवाद में प्रवेश होना है।

## यागों का चयन

आओ, मुनिवरो! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं प्रकट करूंगा। विचार-विनिमय क्या? हमारे यहाँ, देखो नाना प्रकार के याग होने चाहिये। नाना प्रकार के यागों का चयन वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे हमारे यहाँ, देखो यह 'विचारं होताम्' याग कहा जाता है।

## अश्वमेध याग

एक मानो देखो याग का नाम अश्वमेध याग है, अश्व नाम राजा का है और मेध नाम प्रजा का है, जो दोनों सम्मिलित हो करके याग को सम्पन्न करते हैं, वह अश्वमेध याग कहलाता है।

## अजामेध याग

अजामेध याग वह है, जो मानो देखो राजा और प्रजा दोनों करते हैं। किसी को अपने 'मनो अवृत्तम्' देखो अपनी इन्द्रियों को विजय

करना है तो वह अजामेध याग करता है। और विजय का नाम ही अजामेध है, क्योंकि इन्द्रियों का नाम भी अजा कहा गया है। इन्द्रियों को ऊँचा बनाना और उनसे अजेयता को प्राप्त करना, मानो देखो 'अमृतां ब्रह्मः' द्वितीयों को हम विजय कर सकें, इस प्रकार के यागों का नाम, बेटा! देखो अजामेध कहा गया है और तृतीय याग हमारे यहाँ पुत्रेष्टि याग होता है।

## पुत्रेष्टि याग

पुत्रेष्टि यागों का अभिप्रायः यह है कि इस प्रकार के मन्त्र होते हैं और 'मन्त्रां ब्रह्मः' देखो ब्रह्मवर्चोसी बन करके मानो देखो यज्ञमान जब यज्ञशाला में चरू बनाता है, उस चरू का पान किया जाता है और 'चरेयं ब्रह्मः वृत्तं देवो पुत्रो शमं ब्रह्मः' मानो देखो वह 'गो घृत्यं, गो दुग्धां पानां भूत प्रव्हे' वह इस प्रकार का देखो उनको पान कराया जाता है और वे तपस्वी, बेटा! जो भयंकर वनों से आते थे, वे अपने हृदय के उद्‌गार वेद-मन्त्रों के साथ उद्‌गीत गा करके देखो पुत्रेष्टि याग किया जाता है। पुत्रेष्टि याग का अभिप्रायः यह है कि हम अपने में 'पुत्रां भूतं ब्रह्मः वर्णस्सुतम्', यज्ञमान यह चाहता है कि मैं अपने में याज्ञिक बनूं और वह, मानो देखो, वह भी याग है, वह भी याग है। याग, 'याग' को ले करके याग को, मुनिवरो! समर्पित करता है।

## कन्या याग

आज, बेटा! मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रकट नहीं करूंगा क्योंकि वह समय बहुत दूरी चला गया है, वह समय मानो देखो अपनी आभा में सदैव रत्त रहता है। तो विचार आता रहता है, बेटा! याग के

ऊपर, ऋषि-मुनियों ने कहीं कन्या-याग का वर्णन किया है। कन्या कहते हैं, बेटा! 'देवां लोकां पुत्रो भवं ब्रह्मः पति-लोकं ब्रह्मा', मेरे प्यारे! देखो यहाँ कन्या-याग का भी वर्णन है। पालना करने का नाम भी याग है।

## अग्निष्टोम याग और वाजपेयी याग

मेरे पुत्रो! यहाँ देवी-याग का वर्णन भी आता रहा है और वाजपेयी याग, अग्निष्टोम यागों का वर्णन भी प्रायः वैदिक साहित्यों में आता रहता है। अग्निष्टोम-याग, मुनिवरो! देखो, राजा करता है, 'अश्वमेधांभूतं ब्रह्मे', जैसे अवश्वमेध होता है। किसी राजा के राष्ट्र में अकाल हो जाता है तो वह वाजपेयी याग करता है; उससे वृष्टि प्रारम्भ होती है। और, एक वृष्टि-याग भी होता है, जो मानो देखो प्रजा और राजा, दोनों सम्मिलित हो करके करते हैं।

बेटा! मैं यागों के कर्मकाण्ड में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ और एक याग वह होता है जो अपने पितरों का दर्शन किया जाता है। मानो देखो जैसे शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ, बेटा! अपने सौवें महापिता तक के दर्शन, मानो देखो, यज्ञ की तरंगों में वह दृष्टिपात् करते थे। बेटा! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ। केवल यह कि हम, मुनिवरो! देखो अपने में याज्ञिक बनें और परमपिता परमात्मा के याग को विचार-विनिमय करते हुए अपने में सार्थक बन करके अपने जीवन को ऊँचा बनायें! अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

## पूज्य महानन्द जी के उद्गार

'ओ३म् देवां भूतं ब्रह्मः वायु संधर वर्णनं ब्रह्मः'

मेरे पूज्यपाद गुरूदेव! अथवा मेरे भद्रऋषिमण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे अथवा गागर में सागर को भरण कर रहे थे। **एक-एक याग के ऊपर जब पुरातन काल में विचार-विनिमय किया जाता, तो समय समाप्त हो जाता, वर्षों लग जाते विचार-विनिमय करते हुए। वाजपेयी याग इत्यादियों का वर्णन और उसके ऊपर तपस्या करना, यह प्रायः इनका कर्त्तव्य बना रहा। पुत्रेष्टि यागों का उन्होंने वर्णन किया। कभी-कभी तो पुत्रेष्टि यागों में एक-एक वर्ष हो जाते वेद-मन्त्रों का उच्चारण करते-करते।** परन्तु मैं उस तपस्या काल में जाना नहीं चाहता हूँ केवल यह कि जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है, वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ है और मैं सदैव यह प्रेरणा देता रहता हूँ, पूज्यपाद गुरुदेव को कि हे भगवन्! आप याग के ऊपर कोई न कोई विचार दीजिये। तो वे याग के ऊपर अपना भव्य विचार देते रहते हैं और सर्वत्र गागर को सागर और सागर को गागर की कल्पना करके अपने विचार देते रहे हैं। इनके विचारों में मानवीयत्व से गुथी हुई इतनी गम्भीरता अथवा ब्रह्माण्ड से परमात्मा से गुथे विचार रहते हैं कि उनको सदैव चिन्तन में जब हम लाने का प्रयास करते हैं, तो वह चिन्तन करते रहते हैं। तरंगों में से तरंगों का प्रादुर्भाव होता रहता है।

## वसु रूप में याग

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि यह जो काल है, (इसमें) मैं अपने यज्ञमान को आशीर्वाद देना चाहता हूँ, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य सदैव अखण्ड बना रहे

और 'अखण्डं ब्रह्मः वृत्त तपः', क्योंकि **देखो यह जो याग है, यह अपने में हमें अपनी पूर्णता का परिचय देता रहता है। वेद-मन्त्रों में इसे वसु और विष्णु के रूप से इसका वर्णन किया जाता है, क्योंकि यह बसाने वाला है। जो मानव, याग में अपने में लगा हुआ प्रत्येक शुभ कार्यों को याग स्वीकार करता है, प्रत्येक क्रियाकलाप को वह अपने याग में लगा हुआ वह संसार में बसता है, उसको इसीलिए वसु कहते हैं।** तो विचार आता है कि, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और मानो तेरे गृह में द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे! क्योंकि आधुनिक यह जो काल चल रहा है, इसे मैं वाम-मार्ग का काल कहता हूँ।

## आधुनिक वाममार्गीय समाज

हे पूज्यपाद! यह वाम-मार्ग का काल है, क्योंकि यहाँ धर्म की उपेक्षा की जाती है। और वह जब धर्म की उपेक्षा की जाती है तो मानव क्या करे? धर्म अपने में पूर्ण होता है। मानवता उसमें है, विज्ञान उसमें है। मैं यह कहता रहता हूँ कि आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है, वह राष्ट्रवाद और प्रजा सब मानो देखो वाम-मार्ग की प्रतिभा में निहित रहते हैं। आधुनिक काल का मानव सुरा और सुन्दरी और देखो द्रव्य में व्यतीत हो रहा है। उसी में वह रत्त रहना चाहता है और वह उसी की कल्पना कर रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहता हूँ कि आधुनिक काल का जो राष्ट्रवाद है, वह ऐसी अशुद्ध कल्पना करता है कि देखो राष्ट्र अपने में रसातल को चला जाये।

मैं राष्ट्र की चर्चा करता रहता हूँ अथवा राष्ट्रों के याग की चर्चा

करता रहता हूँ। मैं यह कहता रहता हूँ कि राजा के राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहनी चाहिये। राजा का कर्तव्य है कि धर्म और देखो मानवीय धर्म मानवीयता में परिवर्तित होता हुआ ईश्वर के नाम पर कोई रूढ़ी नहीं रहनी चाहिये। जिस भी काल में राजा के राष्ट्र में रूढ़ि बलवती हो जाती है, उसी काल में राजा के राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति आ जाती है।

मैंने बहुत पुरातन काल में यह वर्णन करते हुए अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था कि राजा रावण के यहाँ जब नाना प्रकार का देखो यह सम्प्रदायवाद बलवती हो गया, रूढ़िवाद बन गया। जब ईश्वर के नाम पर रूढ़ि बन जाती है, मानो देखो मेघनाथ का और मत है और देखो राक्षस मत रावण का है इसी प्रकार देखो 'रावणं ब्रह्मे रमे तत्वं ब्रहे' इस प्रकार का देखो मत विभीषण का बन रहा है। इस प्रकार देखो जब नाना प्रकार के विभागों में विभक्त विचार बन जाते हैं तो राजा के राष्ट्र में देखो रक्तभरी क्रान्ति के अवशेष उत्पन्न हो जाते हैं। तो इसी लिये मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराना चाहता हूँ कि **आधुनिक वाम मार्ग का जो समाज है, वर्तमान का जो राष्ट्रवाद है, वह राष्ट्र के ऊपर कोई विचार-विनिमय नहीं कर रहा है। वह स्वयं अपने लिये विचार कर रहा है। वह स्वयं अपना जो विचार होता है, अपना जो स्वार्थवाद होता है, वह विचार स्वार्थवाद में परिवर्तित हो करके रक्त में परिवर्तित हो जाता है।**

## रूढ़ि-निवारण

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराते हुए कहा था कि मानवीयता होनी चाहिये, विज्ञान होना चाहिये। जहाँ विज्ञान और मानवीयता स्थिर हो जाये, वहीं राजा देखो पवित्रता को

धारण करता है, क्योंकि राजा को ब्रह्मवेत्ता होना चाहिये। जब राजा ब्रह्मवेत्ता होता है पुरोहितों के द्वारा तो उस समय राजा की मध्यस्थता में मानो जितने भी रूढ़िवाद को यदि नष्ट करना है, नाना प्रकार के सम्प्रंदायों को नष्ट करना है, तो राजा के यहाँ मानो देखो विचार-विनिमय होना चाहिये। नाना सम्प्रदायों के आचार्यों को एकत्रित करके उनका शास्त्रार्थ होना चाहिये। उनका विचार-विनिमय होना चाहिये और देखो ब्रह्म-सूत्रों को ले करके, विष्णु-सुत्रों को ले करके राजा जब उसका अपने में निर्णय देता है, ब्रह्म क्षेत्र से मानो जब उनका निर्णय दिया जाता है विवेक से, तो बेटा! देखो जिसमें मानवीयता और विज्ञान, द्रव्यवाद मानो स्थिर हो जाये उस विचार को स्वीकार कर लेना चाहिये। यदि प्रजा को ऊँचा बनाना है, राष्ट्रवाद को ऊंचा बनाना है, तो इस प्रकार के विचारों को ले करके देखो राष्ट्र और समाज ऊँचा बनता हैं। आज कोई मानव देखो यह उच्चारण करे कि मैं स्वार्थवाद में राष्ट्रवाद को ले जाऊं, तो एक समय वह राष्ट्र की प्रणाली नष्ट हो जाती है।

## योग्य राजा के निर्माण में जितेन्द्रियता

जब यह विचार देता रहता हूँ, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से उच्चारण करता रहता हूँ कि जब तक राजा विजय न होगा अपनी इन्द्रियों में जय नहीं होगा तो देखो राष्ट्र को ऊँचा नहीं बना सकता। 'राजा' अपनी इन्द्रियों पर जय करने वाला होता है। प्रत्येक इन्द्रियों का जो स्वाभाविक याग चल रहा है, मानो देखो उसके ऊपर चिन्तन-मनन होना चाहिये। तो राष्ट्र उसी समय ऊँचा बनेगा।

## मातृ-श्रृंगार

आज मैं देखो राष्ट्र की चर्चा नहीं प्रगट करने आया हूँ, केवल अपने पूज्यपाद गुरुदेव को उन्हें अपनी वेदना प्रघट करा रहा हूँ कि आधुनिक काल में जब मेरी प्यारी माताएं श्रृंगार से रहित हो जाती है। और जब उसका श्रृंगार केवल ज्ञान रह जाता है, विवेक रह जाता है, तो अपने गृह को ऊँचा बना सकती है। और, यदि देखो मेरी पुत्रियों, मेरी मातृ शक्ति में जब श्रृंगार की श्रृंगारिता मानो देखो उसके अवृत्त चरणों में आ जायेगी तो उसके चरित्र की प्रतिभा नष्ट हो जायेगी। मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराया। परन्तु वहाँ तो राष्ट्र ऊंचा होना चाहिये, इन्द्रियों पर जय होनी चाहिये।

## राष्ट्र-निर्माण में मातृ-सहयोग

जिन माताओं के गर्भ से देखो राम का जन्म हो, परन्तु देखो राम-राम उच्चारण कर रहा आधुनिक काल का जो यह समाज है, परन्तु देखो माता भी तो कौशल्या होनी चाहिये, जो मानो देखो राष्ट्र के अन्न को भी ग्रहण नहीं करती थी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब मुझे वर्णन कराते हैं, तो मेरा अन्तरात्मा मानो पवित्र बन जाता है और मैं यह कहता रहता हूँ कि पूज्यपाद गुरुदेव की इतनी मानो उपलब्धि है। **जब मानो देखो मेरी प्यारी माताएं शुद्ध पवित्र भोजन जब अपने में परिणित करती हैं, तो मुनिवरो! देखो 'अमृतम्', पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया है, शुद्ध पवित्र सन्तानों का जन्म होगा और जब शुद्ध पवित्र सन्तानों का जन्म होगा तो वह अपने राष्ट्र और समाज को और मानवीयता को, वैदिकता को ऊँचा बना सकते हैं।**

आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि देखो **कौशल्या जी जब अन्न का ग्रहण करती थी तो स्वयं कला कौशल करके वह स्वयं देखो परिश्रम के द्वारा उस अन्न को ग्रहण करती थी और राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करती थी।** राजा दशरथ से यह कहा कि—"हे भगवन! मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी, क्योंकि मैंने अपने पुत्रेष्टि याग में, ऋषि से प्रतिज्ञा-बद्ध हुई मैं कोई भी इस प्रकार का अन्न ग्रहण नहीं करूंगी, जिससे विचार अशुद्ध हो जायें।" तो इस पकार देखो मैं यह उच्चारण कर रहा हूँ, 'हे मंगलं ब्रह्मणे!' देखो हे माता! यदि राम को ऊर्ध्वा में पहुंचाना है, तो मेरी प्यारी माता कौशल्या भी अवश्य होनी चाहिये। यदि माता कौशल्या नहीं होगी, तो राम नहीं होगा।

मानो देखो, आधुनिक काल में, 'अमृतम्', देखो राष्ट्रीय जो प्रतिभा है, यह दुविधा में परिणित हो रही है। जब वेद का एक वाक्य कहता है कि जहाँ राष्ट्रीय स्वार्थ आ जाता है, स्वार्थवाद में जहाँ, उन्हें देखो विचार करके उनके शरीर को अग्रणीय बना करके उनके 'अमृतम्' देखो राष्ट्रवाद को ऊँचा बनाना चाहते हैं तो इस प्रकार राष्ट्र ऊँचा नहीं बनेगा।

## राजा का कर्त्तव्य

**राष्ट्र ऊँचा जब भी बनता है, चरित्र से ऊँचा बनेगा। जब राजा स्वयं अपनी इन्द्रियों पर जय करने वाला हो और देखो महाराजा प्रजापति की भान्ति वह अपने में स्वयं कला कौशल करके अपनी कृषि का उद्गम करके अन्न को ग्रहण करके अपनी इन्द्रियों को चेतनित करके जब राष्ट्र में गति करेगा तो राष्ट्र ऊंचा**

**बनता चला जायेगा।** प्रजा उसी के अनुसार पनपने लगेगी और प्रजा देखो प्रजा के वैभव को राजा अपने में संग्रह करने वाला जिस भी काल में बनेगा देखो वह काल बड़ा भयंकर होगा। वह काल मानो अशुद्ध होता है, तमोगुणी होता है और उसमें रक्तभरी क्रान्ति के संस्कार मानो देखो बन करके रक्तमयी राष्ट्र बन जाता है। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मैं अपनी वेदना यह प्रगट कर रहा हूँ कि देखो जहाँ राजा को ऊँचा बनना है तो यहाँ रूढ़ि नहीं रहनी चाहिये। रूढ़ि में, देखो कोई किसी को मान रहा है, कोई मोहम्मद के मानने वाला है, तो कोई ईशु के मानने वाला है, मानो देखो यहाँ नाना प्रकार की रूढ़ियों में समाज रत्त हो रहा है। अरे, मानव तो मानव रहना चाहिये। **राजा का कर्तव्य है कि मानवीयता का प्रसार करे और चरित्र उनमें होना चाहिये। और, मानवीयता और चरित्र और विज्ञान को देखो जब सार्थकता में परिणित किया जाता है तो राष्ट्र अपने में भव्य और पवित्र बन जाता है।**

विचार आता रहता है, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से निर्णय कराता रहता हूँ कि देखो जहाँ मेरे प्यारी पुत्रियों में ज्ञान होना चाहिये और ज्ञान भी मानो देखो क्या वेद-मन्त्रों का उद्‌गीत होना चाहिये, जिससे वह सन्तान की देखो पालना में सहयोगी बन सकें। ऋषि-मुनि और ऐसे पुरोहित होने चाहिये, जिससे राजा भी मानो देखो उद्‌गीत गाने वाला हो। राष्ट्र कैसे ऊंचा बन सकता है, यहाँ मानो देखो यह प्रश्न न करते हुए केवल यह आधुनिक काल का राष्ट्र यह विचार कर रहा है कि मेरे उदर की पूर्ति कैसे हो सकती है। जब यह विचार रहा है तो राष्ट्र कैसे ऊँचा बनेगा!

**अब मैं अपने विचार विशेष चर्चा में नहीं ले जाऊंगा, केवल यह कि हे मानव! यदि तुझे, हे राष्ट्र! यदि तुझे ऊँचा बनाना है समाज को, तो स्वार्थपरता त्यागनी होगी और अपने राष्ट्र और मानवीयता की रक्षा करते हुए रूढ़िवाद को नष्ट करते हुए अपने को तुझे जय बनाना होगा। मानो देखो इन्द्रियों को 'अमृतम्' इन्द्रियों के ज्ञान में तुझे प्रवेश हो करके अपनी आभा को चिन्तन में लाते हुए इस संसार में ऊँचा बनने की कल्पना होनी चाहिये। यह अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से अपनी आज्ञा पाऊंगा।**

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं अपने यज्ञमान को पुनः से जहाँ यागों का शोधन तो हो रहा है, यह वसु प्रादुर्भाव हुआ है, परन्तु यह वसु जीवित रहना चाहिये। विचार आता रहता है, यह प्रसंग 'वसुन्धरम्' हे यज्ञमान। तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे! जितना द्रव्य का सदुपयोग होगा, उतना ही मानो द्रव्य बलवती हो करके गृह में प्रवेश करता रहेगा। और, जितना द्रव्य का दुरुपयोग होता रहेगा, उतना एक समय यह द्रव्य तुम्हें नारकिक बना देगा। विचार आता रहता है, हे यज्ञमान! 'अमृतम् ब्रह्मः', तू अमृत को ग्रहण करता हुआ, दुरिता को त्याग करके तू अपने जीवन को ऊँचा बना और द्रव्य का तेरे गृह में सदुपयोग होता रहे! इसके साथ ही मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

## पूज्यपाद द्वारा उपसंहार

मेरे प्यारे. ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में जो वेदना है, राष्ट्र में यह जो वेदना जागरूक हो गयी है कि राष्ट्र को विजय होना चाहिये, अपनी इन्द्रियों को जय करना चाहिये। **राजा वास्तव में जब**

तक इन्द्रियों पर जय नहीं करेगा स्वार्थपरता को नहीं त्यागेगा तो राष्ट्र और समाज को ऊंचा नहीं बना सकेगा।

**परम्परा का राष्ट्रवाद**

राष्ट्र का जब निर्माण हुआ है, सबसे प्रथम कालवेत्तर और भगवान मनु ने नौका में विद्यमान हो करके इस राष्ट्रवाद का निर्माण किया और राष्ट्रवाद की पद्धति का निर्माण करते हुए उन्होंने ऐसा कोई विषय नहीं रहा कि वह जो उनकी पद्धति में न हो। सबसे प्रथम, राजा का चरित्र, राजा का मानो देखो जो उसका वास है, सहवास है उसके ऊपर उन्होंने बल दिया। **भगवान मनु ने करोड़ों वर्षों पूर्व बल दिया, आधुनिक काल में भी (यह प्रासांगिक है), परन्तु करोड़ों वर्ष हो गये हैं, जब वह नौका में विद्यमान हो करके कालवेत्तर ऋषि और भगवान मनु ने अपने में यह कहा था कि राजा को प्रातःकालीन् मानो देखो अपने शयन-कक्ष को त्याग करके, अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, अपने उदर के लिए मानो देखो कृषि में कुछ उद्गम करे और उस अन्न को ग्रहण करे देखो जिस अन्न से उसकी बुद्धि पवित्र रहे। और, बुद्धि पवित्र रह करके अपने को जय बना करके, इन्द्रियों के ऊपर संयम करता हुआ और 'देवं ब्रह्मण देवत्वा' के द्वारा मानो देखो वह राष्ट्र की पद्धति और राष्ट्र के लिये अपने जीवन को त्यागने वाला बने। इस प्रकार का राजा हो तो उसको सार्वभौम विचारक, ज्ञानी होना चाहिये, वह वशिष्ठ होना चाहिये पुरुषों में।** और, वशिष्ठ जब भी बनता है, तपस्या से बनता है। यदि तपस्या नहीं होगी तो वशिष्ठ नहीं बनेगा। इसलिए राजा वशिष्ठ वही कहलाता है, जो तपस्वी होता है।

मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में जो वेदना है, यह बड़ी भव्यतम् इनके हृदय में गमन करती रही है। मैं यह चाहता रहता हूँ कि प्रभु इनकी वेदना को, मानो पूर्णता को, पूर्णता में ले जाये। और ईश्वरवाद के ऊपर जो रूढ़ियाँ है, वह राजा का कर्तव्य है, कि वह उन्हें नष्ट करे। क्योंकि राजा जब ज्ञानी होगा ब्रह्मज्ञानी होगा, वह यह जानने लगेगा कि रूढ़ियों से विनाश होता है तो स्वयं उन रूढ़ियों को नष्ट करेगा। **यह परम्परा से रूढ़ि नहीं है। रूढ़ि जब भी प्रारम्भ होती है, वह अज्ञानता से होती है। उन इन्द्रियों को जय न होने से देखो रूढ़ियों का जन्म होता है। द्रव्य की लोलुपता के कारण ही देखो रूढ़ियों का जन्म होता है और देखो मान-प्रतिष्ठा के लिए रूढ़ियों का जन्म होता है।** और, जहाँ वेद-मन्त्र यह कहता है कि मान-प्रतिष्ठा में प्राणी को नहीं जाना चाहिये, मान-प्रतिष्ठा को त्याग करके अपने में जय बन करके संसार में गमन करना चाहिये।

तो यह आज का वाक्य अब सम्पन्न होने जा रहा है। **मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में जो राष्ट्रीयता की एक वेदना है, वह परम्परा के राष्ट्र को लाना चाहते हैं। उनका अमृते, और उनके हृदय में जो वेदना है, यह पूर्ण भी किसी काल में अवश्य होगी।** जो वेदना जागरूक रहती है, वायुमण्डल में गमन करती है तो वायुमण्डल उन वेदनाओं से वेदनित हो जाता है। तो आज मेरे 'अमृतं यज्ञनं ब्रहे' इस प्रकार का विचार उन्होंने दिया, अब यह विचार सम्पन्न होने जा रहा है। अब वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन।

श्री लक्ष्मीचन्द (चेयरमैन)
बुढ़ाना, मुजफ्फरनगर
२७–१२–६१

# याग और उद्गाता

देखो, मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस महामना मेरे देव की महिमा का गुण-गान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात् आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात् आ रहा है।

हमारे यहाँ, वैदिक साहित्य में जब हम प्रवेश करते हैं तो यह जो ब्रह्माण्ड दृष्टिपात् आ रहा है, यह दो रूपों में हमें दृष्टिपात् आता रहता है—एक जड़वत् है तो एक चैतन्यवत् कहलाया गया है। मानो जड़ में शून्यता है और पिण्ड रूप माना गया है, मानो उसमें प्रायः हम गति भी स्वीकार करते रहते हैं। उसके पश्चात् भी उनकी प्रतिभा उस प्रकार की हमें दृष्टिपात् नहीं आती है। परन्तु देखो जहाँ चेतना का प्रसंग आता है, चेतना में, बेटा ! गति है, ज्ञान है और प्रयत्न है। यह आत्मा का मौलिक गुण माना गया है। ज्ञान और प्रयत्न, दोनों इसके पूरक और उसका बृही रूप माना गया है, क्योंकि ज्ञान आत्मा का स्वाभाविक गुण है और प्रयत्न भी उसका गुणत्त्व माना गया है। परन्तु उसमें जो गति आती है, वह प्राण के माध्यम से आती है और मनस्त्व, मानो देखो, उस प्रतिरूप में सदैव रत्त रहता है, जो प्राणों से समन्वय हो करके मानो उसके ज्ञान की प्रतिभा का नेतृत्त्व करने वाला है।

आओ, बेटा ! मैं इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ, विचार केवल यह है कि हम अप यारे प्रभु की महिमा का गुणगान गाते रहें। आज का हमारा वेद-मन्त्र, जहाँ नाना प्रकार की उड़ानें उड़ता रहता है, वहाँ वेद के मन्त्र में उस परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। वेद का मन्त्र कहता है– 'यज्ञनब्रहे वृत्तं देवं ब्रह्मः व्राणस्सुतः' वेद का वाक्य कहता है कि वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। मानो याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन माना गया है। तो वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और मानो देखो वह यज्ञोमयी स्वरूप भी है।

## साधना में याग का महत्त्व

आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में मानो याग का बड़ा महत्त्व आ रहा था और हमें कहीं से यह प्रेरणा प्राप्त हो रही है कि याग के सम्बन्ध में कुछ अपना वक्तव्य दिया जाये, अपना विचार दिया जाये। मैंने कई कालों में वर्णन करते हुए भी कहा है, मुनिवरो ! देखो याग के ऊपर तो हमारा सदैव विचार-विनिमय होता ही रहता है, क्योंकि **याग तो मानव की एक मौलिकता कहलाती है याग तो मानव का आध्यात्मिकवादी एक जीवन माना गया है। मानो देखो, आध्यात्मिक और पारलौकिक दोनों याग से ऊँचे बनते हैं।** जैसा मुझे कई कालों में दृष्टिपात् आता रहा है और जैसे हमारे यहाँ महर्षियों की वार्ताएं भी आती रहती हैं कि वे प्रायः अपने जीवन के मुक्ति के मार्ग और पगडण्डी को ग्रहण करने के लिए वे प्रायः यागों में संलग्न रहे हैं, मानो याग करते रहे हैं। उस याग में जो तरंगें हैं, जो चित्रावलियाँ चित्रण करते रहते हैं, मानो देखो उसको अपने में ग्रहण करते हुए और अपनी आभा में सदैव रत्त रह करके, बेटा ! देखो, (वे)

वायुमण्डल को पवित्र बनाते रहे हैं और साधना में रत्त रहे हैं, क्योंकि बिना वायुमण्डल के पवित्र हुए, बेटा ! साधना का स्वरूप हमारे समीप नहीं आ पाता। तो इसीलिए मानव में एक साधना होनी चाहिए और वह साधना अपनी स्थलियों में बड़ी विचित्र रही है। तो आज मैं, बेटा ! इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा न देता हुआ केवल क्या, आज का हमारा 'वेदो ब्रह्मणं ब्रहे मन्त्राः' वेद का मन्त्र, बेटा ! नाना प्रकार का उद्घोष कर रहा है, नाना प्रकार की आभा में रत्त हो रहा है और **वेद-मन्त्र कहता है—'हे मानव ! तू अपने में याज्ञिक बन करके अपनी आभा में सदैव रत्त हो।** क्योंकि अपने में वृत्तियों में रत्त होता हुआ, बेटा ! मुझे स्मरण आता रहता है कि राष्ट्रवेत्ता भी प्रायः अपने राष्ट्र को उन्नत बनाने के लिए प्रायः याग में परिणित रहा है।

## अश्वपति-याग में उद्गाता, अर्द्धभाग

मुझे, बेटा ! वह काल स्मरण आता रहता है, देखो, राजा अश्वपति के यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है और उन भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों के चयन में मानव सदैव रत्त रहा है और राजा अपनी आभा में सदैव निहित हो करके अपनी प्रतिभा का प्रायः प्रदर्शन करता रहा है। आओ, मेरे प्यारे ! आज मैं तुम्हें राजा अश्वपति के यहाँ ले जाना चाहता हूँ, जहाँ, बेटा ! एक समय एक याग हुआ और उस याग में बड़ी विचित्रता रही। बेटा ! उससे पूर्व मैं एक भूमिका बनोना चाहता हूँ। मेरे पुत्रो ! देखो, याग में मानो नाना पात्र होते हैं, उन पात्रों का निर्वाचन होता है और जब निर्वाचन हो जाता है तो याग का मानो प्रारम्भ हो जाता है। मेरे प्यारे ! देखो, यज्ञशाला का निर्माण हो गया और यज्ञशाला के पश्चात्, मानो देखो, ब्रह्मा इत्यादि का निर्वाचन हो गया, एक उद्गाता की

सूक्ष्मता रह गई। मुनिवरो ! देखो, एक समय अकाल पड़ गया था, विशाल अकाल, मानो जिसे हम पण-अकाल कहते हैं। पण-अकाल में सर्वत्र विनाश को प्राप्त हो गया। मुनिवरो ! देखो, महाराजा अर्द्धभाग अपने आसन पर विद्यमान थे और वे 'आसनाति ब्रह्मण' जब पण-अकाल हो गया तो मुनिवरो ! देखो, पत्नी के प्राणान्त होने लगे। इनकी देवी ने कहा—प्रभु ! मेरे प्राणान्त होने वाले हैं अन्यथा मुझे अन्न प्राप्त कराईये। अन्न यदि मुझे प्राप्त नहीं हुआ, तो मेरे प्राणान्त हो जाएंगे। ये 'अन्नदम्ब्रहे' क्योंकि अन्नों में प्राण हैं, प्राणों में ही मानो देखो मनस्त्व है और यह सब देखो अन्न से ही इसका प्रादुर्भाव होता है, तो मेरे पुत्रो ! देखो, महात्मा अर्द्धभाग ने अपनी पत्नी के करूणामयी विचारों, करूणामयी शब्दों को ग्रहण करके वहाँ से गमन किया।

## पर्याप्त-भाव और अभाव में कर्त्तव्यवाद

भ्रमण करते हुए उन्हें कहीं अन्न जब प्राप्त नहीं हुआ तो एक हाथीवान, मानो देखो, 'माह' का पान कर रहा था, वह 'माह-पान' कर रहा था, इसे हम उड़द के रूप में मानो वर्णित करते हैं। वह उड़दों का पान कर रहा था। महर्षि अर्द्धभाग ने कहा—'भिक्षामहि देही !', उन्होंने, बेटा ! देखो अपने संग्रह से, बेटा ! देखो, उड़दों का पान किया और कहा—लीजिए, भगवन् ! मेरे प्यारे ! जब उन्होंने स्वीकार कर लिया तो हाथीवान ने कहा—प्रभु ! मैं जल भी लाऊं ? उन्होंने कहा—तुम शूद्र हो ! अब, मुनिवरो ! देखो हाथीवान ने कहा—प्रभु ! यह जो मेरे झूठे उड़द हैं इनमें तो मैं शूद्र हूँ नहीं परन्तु देखो मैं जल को लाने से कैसे शूद्र हो जाऊंगा ? तो मुनिवरो, देखो, महर्षि अर्द्धभाग ने उसका उत्तर देते हुए कहा,—हे हाथीवान ! देखो, जल बहुत पर्याप्त है और जल का मैं तुम्हारा आश्रित

क्यों हो जाऊँ ? क्योंकि अन्न नहीं है, अन्न से प्राणों की रक्षा होती है और जब प्राणों की रक्षा का प्रसंग आता है, वहाँ झूठन नहीं हुआ करता है, क्योंकि प्राण की गति एक ही गतिवान है, आत्म-चेतना में वही ज्ञान व प्रयत्न, मानो देखो, सर्वत्रता में ओत-प्रोत हैं। आज मैंने इस वाक्य से इसलिए शूद्र कहा है कि मैं तुम्हारा आश्रित क्यों हो जाऊं, क्योंकि जल बहुतायत में है इसलिए मैं ला सकता हूँ, उसका अभाव नहीं है और अन्न का अभाव है। अभाव में मैंने यह स्वीकार किया है। 'अभावां ब्रह्मे', जिसका अभाव होता है, मानो देखो, उसको अमृत के समान पान कर लेना चाहिए। मेरे प्यारे ! महात्मा अर्द्धभाग यह कह करके (चल पड़े) और हाथीवान ने उस वाक्य को स्वीकार कर लिया।

**मेरे पुत्रो ! इसका अभिप्रायः यह है कि मानव को जहाँ तक उसे कोई वस्तु प्राप्त होती है तो दूसरों का आश्रित नहीं रहना चाहिए, उसे अपने में स्वतन्त्र रूपों से गमन करना चाहिए अन्यथा उसकी प्रतिक्रिया में मानो नाना प्रकार का भेदन हो जाता है, अशुद्धवाद आ जाता है।** मुनिवरो ! देखो, महात्मा अर्द्धभाग ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए वह अपनी पत्नी के समीप पहुँचे तो पत्नी का मानो देखो कोई-कोई श्वास गति कर रहा था। जब उन्होंने अन्न का पान कराया तो पान कराके, बेटा ! देखो प्राणों की स्थापना हो गई।

## साधना-प्रवृत्ति में पवित्रान्न-अपेक्षा

'प्राणाम् ब्रह्मे वृत्तम् अन्नानां ब्रही वृताः' मेरे प्यारे ! देखो अन्न में ही प्राण होते हैं। यह प्राण, प्राण ही, मुनिवरो ! देखो, अन्नाद से ऊँचा बनता है। जब यह अन्न पवित्रता में परिणित होता है तो मानव साधना के क्षेत्र

में गमन करता है। **वही मानव साधक बन सकता है, जो अन्न के ऊपर, अन्न की पवित्रता के ऊपर विचार-विनिमय करता है, क्योंकि अन्न जितना भी पवित्र होता है, अन्न जितना भी महाजन होता है, उतनी मानव की प्रवृतियाँ ऊँची बनी रहती हैं और जितनी प्रवृत्ति ऊँची बनती है, उतना ही मानव का अन्तःकरण पवित्र होता है। अन्तःकरण के पवित्र होने पर मानव, बेटा ! भिन्न-भिन्न प्रकार की साधना में परमपिता परमात्मा को जानने के लिए, बेटा ! वह सदैव तत्पर रहता है**

मेरे प्यारे ! देखो महात्मा अर्द्धभाग ने पत्नी को अपने में प्राणों की वृत्तियाँ प्रदान करके कहा—देवी ! मुझे एक निमन्त्रण आया है। महाराजा अश्वपति के यहाँ मानो एक याग हो रहा है, 'वाजपेयी याग'। उस वाजपेयी याग में मेरा गमन होगा और मैं उसमें उद्‌गाता बनूँगा, उद्‌गान गाने वाला। मेरे प्यारे ! देखो, स्वीवृत्ता प्रसन्न हो गई। मानो देखो, अगला दिवस आया महर्षि अर्द्धभाग ने अपने गृह को त्यागा और वह महाराजा अश्वपति के यहाँ जो याग सम्पन्न होने जा रहा था, उसमें (कोई) उद्‌गाता नहीं था, उन्होंने उद्‌गाता के आसन को ग्रहण किया।

## यज्ञ के पात्र

यज्ञ में चार पात्र विशेष होते हैं। बेटा ! सबसे प्रथम ब्रह्मा, उद्‌गाता, अध्वर्यु और यज्ञमान—ये मानो चार पात्र होते हैं। होताजन पांचवा पात्र है। पुरोहित मानो छठा पात्र कहलाता है। मेरे प्यारे ! देखो, इनके भिन्न-भिन्न क्रियाकलाप माने गये हैं। ब्रह्मा तो मानो देखो, याग का संरक्षण करने वाला है और उद्‌गाता, उद्‌गीत गाता है, वेदों का गान गाने वाला है। वह गान गाता ही रहता है।

## अध्वर्यु

अध्वर्यु, मेरे पुत्रो ! देखो, द्रव्य का स्वामी होता है, जो अग्नि के मुखार-बिन्दु का स्वामी होता है। जो अग्नि के मुखारबिन्दु में द्रव्य दिया जाता है, साकल्य प्रदान किया जाता है, वह उसे दृष्टिपात् करता है। अध्वर्यु उसे कहते हैं, जो मानो देखो हिंसा से रहित होता है, जिसके मन-कर्म-वचन में हिंसा नहीं होती। मेरे प्यारे ! वह द्रव्य का स्वामित्व करने वाला है, क्योंकि अग्नि, देवताओं का मुख है और अग्नि के मुखार-बिन्दु में वह साकल्य जाना है, उससे देवताजन मानो तृप्त होते हैं, जो हमारे मानव शरीर में भी देवता हैं, अथवा ब्राह्य-जगत् में भी देवता है वह उससे प्रसन्नचित हुआ करते हैं। उसी से मानो देखो वायुमण्डल और देखो नाना प्रकार की वृत्तियाँ, समाज में उत्पन्न हो जाती हैं।

## उद्‌गाता

मेरे प्यारे ! देखो, जब उद्‌गाता ने अपने आसन को ग्रहण कर लिया तो 'आसन ब्रह्मे' वह आसन् पर जैसे ही विद्यमान हुआ, राजा ने कहा–प्रभु ! आप कौन हैं? उन्होंने कहा–प्रभु ! मैं उद्‌गाता हूँ। उस राजा ने कहा–उद्‌गाता कौन होता है ? उन्होंने कहा–उद्‌गाता वह होता है, जो उद्‌गीत गाता है, वेद-मन्त्रों का गान गाता है और वेद-मन्त्रों के ज्ञान से विशुद्ध रूप से मानो देखो अग्नि में साकल्य प्रदान कराता है। मेरे पुत्रो ! उन्होंने कहा–प्रियतम ! मुनिवरो ! देखो, उत्तर राजा को प्राप्त हो गया। परन्तु पुनः यह प्रश्न किया–उद्‌गाता कौन होता है ? उन्होंने कहा–उद्‌गाता, जैसे मानो ऊर्ज्वा (ऊर्जा) देने वाला सूर्य है और सूर्य को हमारे यहाँ देखो उद्‌गाता के रूप में वर्णित किया गया है, वह उद्‌गाता कहलाता है। वह, मानो देखो उद्‌गाता, अपने में उद्‌गीत गाता रहता है और वह, मुनिवरो !

देखो जैसे इस पृथ्वी-मंडल का स्वामित्व करने वाला उद्गाता यह सूर्य कहलाता है, और इसीलिये इस यज्ञशाला में उद्गाता के आसन को हमने ग्रहण किया है।

मेरे पुत्रो ! राजा बड़े प्रसन्न हुए। राजा ने पुनः प्रश्न किया–यह उद्गाता कौन है ? उन्होंने कहा–जो हृदय से गाता रहता है, जैसे मानो देखो, माता का पुत्र गान गाने वाला ही, मानो देखो, 'अध्वर्यु उद्गम ब्रह्मे' उद्गाता कहलाता है। माता प्रसन्न होती रहती है, मानो देखो लोरियों का पान कराती रहती है। तो माता एक प्रकार की यज्ञोमयी देवी है और उसका उद्गाता, गान गाने वाला, उसका पुत्र कहलाता है। इसीप्रकार जिस यज्ञशाला में हम सब विद्यमान हैं, हम यज्ञवेदी के पुत्रतुल्य हैं और हम उसका उद्गीत गाने वाले हैं, जिससे देवता उस उद्गीत को श्रवण करके प्रसन्न हो जाते हैं। मेरे पुत्रो ! राजा बड़े प्रसन्न हुए। यज्ञमान ने कहा–धन्य है !

मेरे पुत्रो ! देखो राजा तो मौन हो गये, उन्हें उत्तर प्राप्त हो गया, परन्तु यज्ञमान-देवी ने देखो ऋषि को नमस्कार किया और नमस्कार करके कहा–प्रभु ! आप ने इस आसन को जो ग्रहण किया है, यह आसन तो बड़ा विचित्र है, उद्गीत गाने वाला है; मानो आप उद्गाता हैं ! उद्गाता किसे कहते हैं ? मेरे पुत्रो ! देखो, उन्होंने कहा–हे दिव्यासे ! उद्गाता उसे कहते हैं, जो उद्गीत गाता है, जो मानो देखो ब्रह्म से जिसका समन्वय रहता है और जैसे एक सूत्र में मनकों को पिराने वाला मानो एक माला के सदृश्य अपने जीवन को बना लेता है, वह उद्गीत गाने वाला, उद्गाता कहलाता है।

मेरे प्यारे ! देखो, वह देवी बड़ी प्रसन्न हुई। देवी ने पुनः कहा–हे उद्गाता ! उद्गाता कौन है ? उन्होंने कहा–उद्गाता सूर्य कहलाता है, जो

सूर्य मानो देखो चन्द्रमा को अमृत देता है। उसी अमृतमयी चन्द्रमा का अपनी कान्ति के द्वारा, मानो देखो समुद्रों से समन्वय रहता है। समुद्रों से जलों का उत्थान है, और वही जल अमृत बना करके, मानो देखो माता वसुन्धरा के गर्भ में, इस पृथ्वी के गर्भ में इसे भरण कर देता है, जो अमृतमयी बना करके नाना प्रकार के खाद्य-पदार्थों को उत्पन्न करने वाली है। मेरे प्यारे ! देखो, वह उद्गाता, इस यज्ञ का उद्गाता, सूर्य के सदृश्य 'सूर्य' कहलाता है। हम, मानो देखो जो भी साकल्य या देवता का पठन-पाठन करेंगे, वह देवता मानो उस हमारे साकल्य और संकल्प को ग्रहण करके ही मानो उद्गीत गाता रहता है।

## उद्गाता का आध्यात्मिक याग

मेरे प्यारे ! देखो ऋषि ने जब यह उत्तर दिया तो देवी बड़ी प्रसन्न हुई। देवी ने कहा—यह तो बड़े बुद्धिमान हैं ! उन्होंने पुनः कहा—प्रभु ! यह उद्गाता कौन है, उद्गीत कौन गाता है ? उन्होंने कहा—उद्गीत वह गाता है, जो अपने हृदय को, मानो देखो देवता से उसका समन्वय रहता है, जैसे नेत्रों की जो ज्योति है, वह रूप को लाता है हृदय में परिणित कर देता है और घ्राण से सुगन्ध लाता है, मन्द-सुगन्ध लाता है, वह भी हृदय में प्रविष्ठ हो जाती है; देखो श्रोत्रों से शब्दों को लाता है, वह भी हृदय में प्रविष्ठ हो जाती है, त्वचा से प्रीति लाता है, वह भी हृदय में प्रविष्ठ हो जाती है, मानो इसी प्रकार देखो वाणी, नाना प्रकार के वाक्य को ला करके और हृदय में उसकी स्थिति हो जाती है। इसी प्रकार यज्ञमान का जो हृदय है, वह यज्ञशाला है। और, **उद्गाता वह कहलाता है, जो हृदय से गान गा करके और मानो देखो सर्वत्रता को, अपनी आभा को याग में परिणित कर देता है। उद्गाता के रूप में ही जैसे आध्यात्मिक**

**विज्ञानवेत्ता रूप-रस-गन्ध को ले करके अपनी अन्तरात्मा में ज्ञानरूपी अग्नि में याग करते हैं। ज्ञान रूपी अग्नि में जब याग करते हैं तो 'यागां ब्रह्मे व्रतां', मेरे प्यारे ! देखो वह याग हो रहा है। आध्यात्मिक-प्रवृत्तियों में मानो अपने प्रभु को जानने के लिए तत्पर हो रहा है।**

## भौतिक याग से आध्यात्मिक गति

मेरे पुत्रो ! जब ऋषि ने इस प्रकार उत्तर दिया तो देवी बड़ी प्रसन्न हुई। देवी ने कहा—धन्य है, प्रभु ! मैं आध्यात्मिक विज्ञान को भी जान गई हूँ; आध्यात्मिक याग का भी आप ने मुझे वर्णन कराया, परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ कि आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान का और आध्यात्मिक और भौतिक याग का इनका परस्पर क्या समन्वय रहता है? मेरे पुत्रो ! देखो ऋषि ने उद्गीत गाते हुए कहा कि वेद में, नौदा में मन्त्र यह उच्चारण करते हैं।हे दिव्यासे ! **देखो जब हमारा भौतिक याग पवित्र बन जाता है, भौतिकवाद में मानो प्रतिष्ठा हो जाती है, अग्नि देवताओं का मुख बन करके, देवत्त्व इस भौतिक-जगत् का निर्माण कर देते हैं तो यही हमारा आध्यात्मिकवाद बन करके हम परब्रह्म परमात्मा के प्रति मानो देखो हृदय अपने में हृदयग्राही बना करके परमात्मा को अपने अन्तर्हृदय में धारण कर लेते हैं।** मानो देखो वह आध्यात्मिक और भौतिकवाद, दोनों हमारे सफलवत् को प्राप्त हो जाते हैं।

## सूर्य का याग से समन्वय

मेरे पुत्रो ! देखो, दिव्या ने, राजलक्ष्मी ने ऋषि का आदर किया और ऋषि से कहा—धन्य है, प्रभु ! आपकी जो ज्ञानमयी धारा है, वह बड़ी

विचित्र है। परन्तु मेरा एक प्रश्न और रह गया है, इस यज्ञ का सूर्य से क्या समन्वय रहता है? उन्होंने कहा—सूर्य की नाना प्रकार की जो उर्ज्वा है, मानो नाना जो किरणें हैं, उन किरणों का समन्वय मानो पृथ्वी से होता है और पृथ्वीतल पर यह यज्ञशाला है मानो नाना प्रकार का जो साकल्य प्रदान करते हैं और होताजन 'स्वाहा' उच्चारण करते हैं मानो उनका चित्र बन करके वह द्यौ-लोक को जाता है। चित्र बन करके सूर्य की किरणों के साथ, सूर्य की कान्ति के साथ में मानो देखो, उसका समन्वय इस ब्रह्माण्ड से होता है। और, देखो उसी ऊर्ज्वा को ले करके द्यौ से उसका समन्वय होता है और वह जो द्यौ है मानो देखो वही इस संसार के वायुमण्डल की प्रतिभाषिता कहलाती है।

मेरे प्यारे ! देखो वह बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा—यह सूर्य ही मानो 'यज्ञोमयी श्रेष्ठतम विष्णु' कहलाता है। मेरे प्यारे ! देखो, जब यह उत्तर उन्हें प्राप्त हो गया, देवी ने कहा—आईये, भगवन् ! पधारिये ! क्योंकि हमारे यहाँ परम्परागतों से ही मातृ-शक्ति अपने में बड़ी बुद्धिमान और चातुर्यता में, मानो देखो, उसकी प्रतिभाषिता रही है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जहाँ दिव्या से अपने में मानव, देखो गुणगान और दर्शनों का अध्ययन करके अपने जीवन में महानता को सदैव प्राप्त होता रहा है।

मेरे पुत्रो ! देखो, उद्गाता का जब निश्चय हो गया तो याग प्रारम्भ हो गया। उद्गीत गाने लगे। वेदों का उद्गीत गाने वाले को ही उद्गाता कहते हैं। जो, बेटा ! स्वरों से उद्गीत गाता रहता है, गायन रूप में। देखो, राष्ट्रपिता के यहाँ भी उद्गाता होने चाहिए, क्योंकि उद्गाता ही राष्ट्र को ऊँचा बनाते हैं, मानो उद्गाता ही बुद्धि दे करके समाज को ऊँचा बनाते हैं। राष्ट्र को ऊँचा बना करके राष्ट्र की प्रतिभा महानता में गमन करने

लगती है। तो मेरे प्यारे ! देखो, याग चलता रहा, परन्तु सायंकाल को याग देखो जब उपरामता को प्राप्त हुआ तो महात्मा अर्द्धभाग ने मानो कुच्छ साकल्य, द्रव्य ले करके अपनी पत्नी के लिए वह गमन करके अपने गृह में आ गये।

मेरे पुत्रो ! देखो, 'वृर्णं ब्रह्मे वाचा' तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, वेद का मन्त्र यह कहता है कि 'यज्ञं भवितां ब्रहे, लोकाम्' हे यज्ञो ! तू यज्ञमान की 'भावनाम् ब्रहे'। देखो, यज्ञशाला में यज्ञ होता हुआ अपने में उद्‌गीत गाने वाला उद्‌गीत गाता रहता है। अध्वर्यु उसे कहते हैं जो मानो देखो अहिंसा में परिणित रहने वाला हो। यज्ञमान उसे कहते हैं, जिसकी वाणी को होताजन पवित्र बनाते हैं। तो मेरे प्यारे ! देखो, मैं इस विचार में न जाता हुआ अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

**महानन्द जी**—'ओ३म् दिव्यां गतं वाया विश्वं ब्रह्मणं देवाः'

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ! मेरे भद्र ऋषिमण्डल ! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मानो गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे। जब यह विचार आता रहता है गागर में सागर की कल्पना का, तो प्रायः मुझे बहुत से वाक्य स्मरण आने लगते हैं। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को मानो एक प्रेरणा दे रहा था और वह प्रेरणा का स्रोत्र, केवल याग के सम्बन्ध में अपना प्रायः विचार-विनिमय हो रहा था। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी याग को कहीं हृदय से समन्वय करा रहे थे, कहीं मानो सूर्य से और द्यौ से उसका समन्वय हो रहा था, कहीं मानो वेद-मन्त्रों की ध्वनियों में ध्वनित होता हुआ वह दृष्टिपात् आ रहा है। आज, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी अपना गम्भीर विचार प्रकट किया। मैं तो कोई विशेष विवेचना देने नहीं आया

हूँ, केवल मेरा तो एक ही उद्देश्य रहता है कि देखो, हमारा जो वाक्य है, हमारी जो वाणी है, यह मृतमण्डल में मानो यह आकाशवाणी जा रही है, इसमें मैं आज देखो एक याग का अपने में 'ध्यान' और अपने में याग को दृष्टिपात् कर रहा था। मेरा अन्तरात्मा याग को दृष्टिपात् करके बड़ा प्रसन्न होता रहता है, क्योंकि अपने में जो आयु को महान् और वृद्ध बनाना चाहते हैं और वह याग में परिणित हो जाते हैं।

आधुनिक जो जगत् है, इसे मैं वाममार्ग का काल कहता रहता हूँ। कई समय हो गये, जब मैं वाम-मार्ग का काल कह रहा हूँ। परन्तु देखो अपने यज्ञमान के लिये मेरा हृदय से हृदय का समन्वय रहता है। मैं अपने यज्ञमान को आशीर्वाद के रूप में तो नहीं, परन्तु मैं केवल अपने उद्गार प्रकट किया करता हूँ—हे यज्ञमान ! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे ! क्योंकि 'यागं ब्रह्मे', ऐसे काल में, जहाँ वाम-मार्ग का काल है, जहाँ सुरा-सुन्दरी का एक काल बनता जा रहा है, द्रव्य का काल बन रहा है और उसमें मुझे, मानो देखो, ऐसा दृष्टिपात् आता रहता है कि वह वाम-मार्ग-काल है, जहाँ हिंसा बलवती हो रही है, मानव का ब्रह्मचर्यत्त्व, छात्र और छात्रियों का 'समाप्तं ब्रहे' उसमें गतियाँ हो रही हैं तो वह अपने में अपनी वृत्तियों में रत्त रह रहा है। तो विचार आता रहता है, हे यज्ञमान ! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे ! अपने गृह में द्रव्य का सदुपयोग करना मानो तेरी महानता है ! विचार आता रहता है कि जिस प्राणी के गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है और वह भी याग और देवता और अग्नि के मुखार-बिन्दु में, जिससे मानो अग्नि प्रसन्न हो करके अपनी आभा में अपने मुखार-बिन्दु में सूक्ष्म और विभक्त करके परमाणुओं को मानो वायुमण्डल में प्रसारण कर रही है।

## दूषित वायुमण्डल का पवित्रीकरण

आधुनिक काल का विज्ञानवेत्ता इस आभा में लगा हुआ है, इन विचारों में लगा हुआ है कि किसी प्रकार मानो देखो इस दूषित-वायुमण्डल को पवित्र बनाया जाये। तो कुछ वैज्ञानिकजन याग में परिणित हो रहे हैं और कहते हैं कि गौ-घृत में ऐसे परमाणु हैं, परन्तु याग के कर्म-काण्ड को न जान करके वह अग्नि में देखो घृत को परिणित करके और वायुमण्डल को ऊँचा बनाना चाहते हैं। ऐसी आधुनिक काल के विज्ञान की एक धारणा बन रही है और शनैः शनैः वह धारणा एक उग्रता का रूप धारण करने वाली है। तो आज मैं विशेषता में नहीं, अपने यज्ञमान के साथ मेरा अन्तरात्मा गमन करता रहता है और मैं कहता हूँ—हे यज्ञमान ! तेरे जीवन की प्रतिभा महान् बनी रहे !

विचार आता रहता है, मैं अपने में उद्गीत गाता रहता हूँ और पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराता रहता हूँ कि यह संसार किस आभा में रत्त हो गया है। देखो, जहाँ राम का जीवन, कृष्ण का जीवन, यहाँ ऋषि-मुनि प्रायः देखो याग करते रहते थे। **प्रातःकालीन जब राम अपनी स्थलियों से पृथक् होते तो प्रातःकालीन वह याग करते रहते थे।** आधुनिक काल जो वर्तमान का काल है, यहाँ राष्ट्र में राजा जब अपने आसन से देखो जागरूक होता है तो नाना प्राणियों के रसों को अग्नि में तपा करके पान करता है। तो विचार आता रहता है कि ऐसा वाम-मार्ग जो राष्ट्र-वृत्तियों में रत्त हो गया है, यह नहीं होना चाहिए। परन्तु देखो राजा, 'वशिष्ठ' और 'पवित्र' होना चाहिये, जिससे समाज में पवित्रता आ जाये। जैसे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी वर्णन कर रहे थे, महाराजा अश्वपति के राष्ट्र की चर्चा। महाराजा अश्वपति प्रातःकालीन् पृथ्वी में देखो परिश्रम कर रहा है और

देखो वह उद्‌गम करता हुआ उस अन्न को पान करके देखो राष्ट्र की प्रतिभा को ऊँचा बनाता है। आधुनिक काल, जो वर्तमान का काल है, यहाँ राजा प्रजा के द्रव्यों को एकत्रित करके अपने में अधिराज बन करके और अपने को ऊँचा और वह वृत्तियों में ले जाना चाहता है, परन्तु ऐसा मुझे असम्भव प्रतीत होता है। **आधुनिक काल में विज्ञान का दुरूपयोग है, क्योंकि विज्ञान में देखो यह कहा है कि नाना प्रकार के ऋषि-मुनियों की पवित्रता और चित्रता उसमें दृष्टिपात् आ जाए, परन्तु देखो जहाँ मेरी पुत्रियों का देखो नृत्य होता हुआ दृष्टिपात् आता है, तो वह राष्ट्र, वह समाज मानो देखो अन्धकार में चला जाता है।**

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई काल में अन्धकार की चर्चा कर रहे थे और प्रकाश की भी। प्रकाश को लाना अन्धकार को समाप्त करना, यह मेरे पूज्यपाद गुरुदेव प्रकट कराते रहते हैं। परन्तु विचार आता है कि 'अन्धकारं ब्रहे' यह राष्ट्रवेत्ता अपने को अन्धकार में और प्रजा को अन्धकार में पहुँचा रहे हैं। उस अन्धकार का परिणाम न प्रतीत क्या होगा ! आगे भविष्य तो प्रभु ही जानता है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अग्नि के काण्ड, अग्नि प्रतिवृत्तियों में रत्त हो जायेगी। राजा का जो कर्त्तव्य है, क्या वह नाना प्रकार की जो रूढ़िवादिता है उसको राजा को नष्ट करना चाहिए, क्योंकि नाना प्रकार की जो ईश्वरवाद पर रूढ़ियाँ हैं, वह रूढ़ियाँ ही राष्ट्र और समाज के लिए विनाशवत् कहलाई जाती हैं। इसीलिए यह विनाश नहीं होना चाहिए।

मैं आज कोई विशेष चर्चा तो प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ संसार की वार्ताएं प्रकट कराता रहता हूँ और यज्ञमान अपने जीवन में सदैव देखो द्रव्य का सदुपयोग करता रहे और अपने

में महानता की प्रतिभा में रत्त हो करके और वह अपने सौभाग्य की प्रतिभा में सदैव रत्त रहे, ऐसा मेरा विचार रहता है।

आज का विचार यह क्या कह रहा है, मैं कोई विचार देने नहीं आया हूँ, विचार तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव दिया करते हैं। उनका विचार बड़ा मार्मिक और गम्भीर होता है। उनके विचारों में, रूढ़िवाद को नष्ट करना और मानवीयता में मानव दर्शन को एक प्रतियों में,मानो दर्शन की चर्चा करते रहते हैं। अन्धकार को नष्ट करने के लिए,प्रकाश को लाने के लिए,सदैव उनकी एक मनोनीत कामना होती है। तो आज का विचार, मैं यह देने आया हूँ कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अपना विचार दिया, बड़ा प्रियतम है ! महाभारत काल के पश्चात् बहुत सी कुरीतियाँ और मानो देखो बहुत सा ह्रास हुआ है, उस ह्रासता को पुनः से देखो कैसे नष्ट किया जाये, इसके ऊपर हम अपना विचार-विनिमय देते रहते हैं। **रूढ़िवाद को नष्ट करना, धर्म और मानवता का प्रसार करना,यह मानवीयता का कर्त्तव्य होना चाहिए।** आज मैं अपने विचारो को यहीं विराम देता हूँ।

**पूज्यपाद द्वारा उपसंहार**—मेरे प्यारे महानन्द जी ने अभी-अभी अपने विचारों को व्यक्त किया। इनके विचारों में बड़ी माधुर्यता और मानो एक कल्पना क्या, ऐसा इनके हृदय में एक दाह रहता है कि राष्ट्र किसी भी प्रकार उन्नत और पवित्र हो जाये। द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे। प्रत्येक गृह में द्रव्य का सदुपयोग हो। दुरूपयोग गृह को नरक बना देता है और सदुपयोग गृह को स्वर्ग बना देता है। तो यह है, आज का विचार।

आज के विचार हमारे देने का अभिप्रायः क्या है, आज मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में जो दाह है, उन्होंने यह वाक्य प्रकट किये। आज याग का विषय चल रहा था, 'यागाम् रूद्रो भागाम्' मानो देखो, याग होना,

याग में उद्गाता का कैसा पवित्र स्थान है, उद्गाता कितना बुद्धिमान,मानो देखो प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में अपनी आभा को प्रकट करने वाला, एक-एक वेद-मन्त्र पर उसका अन्वेषण, यह आज का विचार प्रारम्भ हो रहा था। तो आज का विचार अब समाप्त होने जा रहा है। विचारों का हमारा अभिप्रायः यह है कि यह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप कहलाता है। याग उसका आयतन व गृह है, उसका सदन है। वह उसी में ओत-प्रोत रहता है। **यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है, इसमें प्रत्येक मानव को अपने में विचारों का याग करना है। मानव को कर्त्तव्य का पालन करते हुए याग में रत्त होना है।** जितने भी सुक्रियाकलाप हैं, वे सर्वत्र एक याग के रूप में रहते हैं।

## राष्ट्र-निर्माण और ब्रह्मज्ञान

आज का विचार, मेरे प्यारे महानन्द जी ने कुछ राष्ट्र की चर्चाएं की हैं। राजा को चाहिए कि राजा अपने राष्ट्र में महानता और महापुरुषों की क्रियाओं को ऊँचा बनाने वाला हो, प्रातःकालीन याग में अपनी क्रियाओं में रत्त रह करके और ब्रह्मवेत्ता होना चाहिये, क्योंकि बिना ब्रह्मवेत्ता के राजा को अभिमान आ जाता है। बिना क्रियाकलाप के राजा को देखो एक वृत्तियां बन जाती हैं। राजा जब ब्रह्मवेत्ता नहीं होगा तो राष्ट्र को ऊँचा नहीं बना सकेगा, क्योंकि बिना ब्रह्मज्ञान के राष्ट्र ऊंचा इसलिए नहीं बनता,क्योंकि राजा के राष्ट्र में जब ब्रह्मवेत्ता नहीं होगा तो यह जो द्रव्य है, यह मानव की मानो देखो बुद्धि को नष्ट कर देता है और जब बुद्धि नष्ट हो जाती है, तो मानव अकर्त्तव्यवाद में चला जाता है, हिंसा में परिणित हो जाता है।

## राष्ट्र-निर्माण और याग

**यदि राजा को अहिंसामय बनना है तो वह वेदों का अध्ययन और याग में अपने सुविचारों में संलग्न हो जाये, जिससे राष्ट्र उन्नत हो जाये और राजा के राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी, वेदों के ज्ञान गाने वाले उद्गाता रूप में गान होने चाहिए। राजा को अश्वमेध-याग, अजामेध-याग, देखो अग्निष्टोम-याग, भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों में संलग्न रहना चाहिए, जिससे प्रजा के विचारों का और राजा के विचारों का नवीनीकरण हो जाये,** क्योंकि विचारों का नवीनीकरण केवल 'अश्वमेध यागों' से हुआ करता है। पुरातन काल में, मुझे बहुत सा काल स्मरण है, मैंने अपने प्यारे महानन्द जी को यह प्रकट भी कराया था कि यह समाज मानो देखो राजा व प्रजा, दोनों मिल करके जब याग में परिणित हो जाते हैं, अश्वमेध-याग में, देखो जब लग्नता हो जाती है, अग्निष्टोम-याग में संलग्नता आ जाती है, तो मानो देखो राजा में पवित्रता आ जाती है; समाज उसी के अनुसार बरतने लगता है। समाज और प्रजा में एक महानता की ज्योति जागरूक हो करके, वही महानता की ज्योति कहलाती है। तो आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की महत्ती को सदैव विचार में लाते हुये अपने मानवत्त्व को ऊँचा बनायें, ज्ञान और विज्ञान में रत्त हो जायें ! यह आज का विचार समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

**जयदेव पार्क,**
**नयी दिल्ली,**
**१०-१-८८**

# यज्ञमान का द्यौ-गामी रथ

देखो, मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में, उस महामना, जो इस संसार का नियंता है अथवा निर्माण करने वाला है, उस परमपिता परमात्मा की महती और उसकी अनुपमता का वर्णन आ रहा था, क्योंकि प्रत्येक वेद-मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है और वह इस प्रकार की गाथा है जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही अपना-अपना मन्तव्य और अपनी अन्तरात्मा की जो निर्द्वन्द्व अनुपम धारा है, उसे उद्गीत गाता रहा है और विचारता रहा है कि मैं उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानने वाला बनूँ।

## प्रकाश की इच्छा

प्रत्येक मानव यह चाहता है और उसके मन की एक प्रबल इच्छा यह रहती है कि मैं अपने जीवन को अन्धकार में नहीं ले जाऊँ, वह सदैव प्रकाश चाहता है। तो **प्रत्येक मानव के हृदय में प्रकाश की इच्छा रहती है मानो उसे किसी भी रूप में वह प्राप्त हो जाये, परन्तु प्रबलता यही रहती है कि मैं अन्धकार से दूर ही रहूँ और प्रकाश में मैं रत्त हो जाऊँ।** उसी प्रकाश के लिए मानव नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है और नाना प्रकार के विचारों में रत्त रहता है, परन्तु वह आनन्द की पिपासा में ही अपने जीवन को भी न्यौछावर कर देता है। परन्तु जब यह विचार

आता है कि वैदिक साहित्य इस सम्बन्ध में क्या कह रहा है? **वैदिकता यह कहती है कि प्रकाश में रत्त होने के लिए मानव की प्रबल इच्छा तो रहती ही है, परन्तु उसका प्रयास भी करना चाहिये।** और, वह प्रयास ऐसे रूप में चला जाता है, जहाँ मानव को प्रकाश के आसन पर अन्धकार प्राप्त हो जाता है। तो मानो देखो ऐसे क्रियाकलापों में मानव को रत्त नहीं रहना चाहिये।

## भौतिक-आध्यात्मिक अनुशासन

बहुत से विचार स्मरण आते रहते हैं। राष्ट्रवेत्ता भी अपने में यह चाहता है कि मेरी प्रजा में आनन्दवत बना रहे। इसीलिए हमारे यहाँ राष्ट्र का निर्माण होता है। राष्ट्र की जो निर्माण-पद्धति का निर्माण हुआ, वह इसी वाक्य को ले करके हुआ कि मानव, मानववत् बन जाये; हमारा अनुशासन बना रहे। मानव के द्वारा दो प्रकार का अनुशासन कहलाता है। एक अनुशासन भौतिक है और एक अनुशासन आध्यात्मिकवाद कहलाता है। **भौतिक अनुशासन में मानव को अपनी वाणी पर संयमी बनना है, अपने नेत्रों पर संयमी बनना है, श्रोत्रों पर भी। परन्तु दूसरा जो अनुशासन है, वह आत्म-कल्याण के लिये यौगिक अनुशासन कहलाता है। यौगिक अनुशासन वह है कि जो मानव के पाँच-ज्ञानेन्द्रियों से तरंगों का प्रादुर्भाव होता है, इन तरंगों को, इन्द्रियों की तरंगों को संग्रह करना और संग्रह करके उन्हें ज्ञानयुक्त और विवेक में परिणित होना है।** मानो जैसे हमारे नेत्रों ने इस संसार को दृष्टिपात् किया, परन्तु दृष्टिपात् करता रहता है, तो विचारना यह है कि कुदृष्टिपात् करना उसका धर्म उसकी मानवीयता नहीं है। 'सु' को हमें पान करना है और जब सुसज्जित इन्द्रियाँ हो जाती हैं तो इन्द्रियों का वह साकल्य बनाता है, जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान

अपने साकल्य को ले करके अग्न्याधान करता है और अग्नि के मुखारबिन्दु में वह साकल्य प्रदान करके भौतिक वायुमण्डल को वह ऊर्ध्वा में ले जाने का प्रयास करता है या यूँ उच्चारण कीजिए, परन्तु इसकी भी कोई सीमा नहीं है।

## याग द्वारा ऊर्ध्वा में वायुमण्डल-निर्माण

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिसमें महर्षि कागभुषुण्ड जी अपने में याग करते रहते थे। परन्तु एक समय वह याग कर रहे थे, उन्होंने बारह वर्ष का अनुष्ठान किया और वह यह चाहते थे कि मेरे अंग-संग रहने वाला जो वायुमण्डल है, वह पवित्र बन जाये और वह पवित्र बनेगा मेरी वाणी से, मेरे साकल्य से। जब अग्न्याधान करते हैं, तो अग्नि ही मानो विभक्त क्रिया से उसका शोधन कर देगी। तो एक समय कागभुषुण्ड जी याग कर रहे थे, परन्तु व्रेतकेतु ऋषिवर अपने विद्यालय में अध्ययन करा रहे थे, ब्रह्मचारियों को। परन्तु देखो, ब्रह्मचारी के अध्ययन न करने पर व्रेतकेतु मुनि को क्रोधाग्नि जागरूक हो गई और वह ब्रह्मचारी को दण्डित करने के पश्चात्, परन्तु संकल्प और विकल्प इतने विशाल, प्रबल हो गये कि वह ऋषि को अपनी वृत्तियों में ऐसा अशुद्ध वायुमण्डल छा गया कि वह अपने को ऊर्ध्वा में नहीं पहुँचा सके। व्रेतकेतु ने वहाँ से विद्यालय त्याग दिया कि मुझे आत्म-शान्ति कहीं प्राप्त हो जाये।

मेरे पुत्रो ! देखो, एक आसन पर, दण्डक वनों में, महर्षि कागभुषुण्ड जी बड़े महान् तपस्वी, क्योंकि वह अनुष्ठान करते रहते थे, वह याग कर रहे थे, प्रातःकालीन, और यह विचारधारा दे रहे थे कि हमें इस वायुमण्डल को पवित्र बनाना है, क्योंकि हमें अनुष्ठान करना है और हमें अपनी अन्तरात्मा को यौगिक वायुमण्डल में ले जाना है, तो इस विचारधारा से

वह याग कर रहे थे। और मानो देखो, व्रेतकेतु महर्षि भी याग करने लगे। देखो उनके यहाँ जैसे वह 'स्वाहा' उच्चारण कर रहे थे, इसी प्रकार वह भी 'स्वाहा' उच्चारण कर रहे थे। कागभुषुण्ड जी वेद-मन्त्र का उद्गीत गाते हुए 'स्वाहा' उच्चारण कर रहे थे, क्योंकि वेदों में प्रत्येक देवता का आह्वान कहलाता है, प्रत्येक देवता की आहुति होती हैं और वह प्रायः उसी को प्राप्त होती है। मानो जब वह आहुति दे रहे थे तो ऋषि को इतना अनुभव हो गया था कि उस यज्ञ की जो तरंगें यज्ञशाला में उपस्थित हो रही थीं, उस यज्ञशाला में जो तरंगें अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके जो गमन करती थीं, उसका अशुद्धवाद और शुद्धिकरण उसके समीप मानो देखो वह क्रांति-जगत् में चित्र बन करके दृष्टिपात् आता था। तो महर्षि कागभुषुण्ड जी जब याग कर रहे थे तो उनका वायुमण्डल मानो देखो उनके संसार में, उनकी अन्तरात्मा में, उनके अन्तर्जगत् में, बेटा ! देखो उनके चित्र अशुद्ध आने लगे और उस वायुमण्डल से 'स्वाहा' की आहुतियाँ मानो देखो अन्तरिक्ष में उनको प्राप्त हो गईं। कागभुषुण्ड जी ने याग समाप्त किया और 'यागां रूद्रं भवितां ब्रह्मे वृत्तः'। आचार्य ने कहा, कागभुषुण्ड जी ने—"तुम यह क्या कर रहे हो, भगवन् ! मानो देखो, मेरा याग तुम अशुद्ध कर रहे हो ! मैं इस याग से अपने वायुमण्डल को पवित्र बनाना चाहता हूँ और तुम वायुमण्डल को अशुद्ध बनाना चाहते हो!" मेरे पुत्रो ! देखो, ऋषि ने इस बात को स्वीकार कर लिया और कहा—"महाराज ! मेरे हृदय में रजोगुण छा रहा है। मैंने ब्रह्मचारी को दण्डित किया उसमें मुझे सतोगुण आना चाहिये था, परन्तु उसमें रजोगुण छा गया है। मैं क्षमा चाहता हूँ।" मेरे प्यारे ! देखो उन्होंने याग समाप्त कर दिया और ऋषि क्षमा पा करके अपने आसन को उन्होंने भ्रमण किया। मेरे प्यारे ! देखो, वही याग ऋषि को प्राप्त होता रहा।

## संसार रूपी यज्ञशाला

विचार यह कि हमारी यह संसाररूपी जो एक प्रकार की यज्ञशाला है, यह परमपिता परमात्मा का निर्माण किया हुआ है। परमपिता परमात्मा ने जब संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया तो मानो उस समय निर्माण करते समय आत्मा यज्ञमान बना और देखो ये पंचमहाभूत, जिनमें अग्नि, मानो देखो, तरलत्व आपो ज्योति, और पृथ्वी, यह सब होता बन करके, बेटा ! आहुति देते हैं। होता का अभिप्रायः यह है कि वह देते हैं, जो मानो 'स्वाहा' दे रहे हैं और यज्ञमान इससे प्रसन्न हो रहा है। मानो देखो चन्द्रमा प्रकाश देता है और सूर्य अपने में प्रकाशवान हो करके चन्द्रमा को भी प्रकाशवान बनाता है। तो बेटा ! देखो, प्रभु की कैसी अनूठी यह संसार रूपी यज्ञशाला है, जो स्वयं परमपिता परमात्मा ब्रह्मा बन करके इस याग का संचालन करा रहा है ! बेटा ! नियमन् हो रहा है। उसमें वह विद्यमान है और प्रत्येक क्रियाकलाप उनका समय पर, मानो देखो समय के अनुकूल और 'अनन्त्यं ब्रह्मः' देखो यह कितना सुन्दर क्रियाकलाप हो रहा है। इस क्रियाकलाप में, बेटा ! देखो, प्रत्येक मानव रत्त रहता है और विचारता रहता है कि यह कितना सुन्दर क्रियाकलाप है। **मेरे पुत्रो ! देखो, विचार यह आता है कि यह संसार एक प्रकार की यज्ञशाला है और इसमें आत्मा यज्ञमान है और परमपिता परमात्मा ब्रह्मा है, पंचमहाभूत इसमें, बेटा ! होता बने हुए हैं।** हमारे यहाँ इसी से विज्ञान की उपलब्धि हुआ करती है।

## भौतिक-विज्ञान की पञ्च-गतियाँ

विज्ञान जिस भी काल में सार्थक बना है, उस विज्ञान में सबसे प्रथम पार्थिव के ऊपर, बेटा ! अनुसन्धान किया और वह अनुसन्धान करते हुए

ऋषि-मुनि, बेटा ! इतनी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाते हैं कि मानो देखो उन पाँचों की पाँच प्रकार की गतियों में, बेटा ! सर्वत्र विज्ञान अपने में नृत्य करता रहता है, अपने में क्रियाशील रहता है। मेरे प्यारे ! प्रसारण है, गति है, ध्रुवा है, ऊर्ध्वा और आंकुचन, इन पांच प्रकार की गतियों में संसार अपने में कटिबद्ध हो रहा है अथवा गतिशील हो रहा है। जब हम इस जगत् को गतिशील दृष्टिपात् करते हैं, इन लोक-लोकान्तरों को दृष्टिपात् करते हैं तो उसमें, बेटा ! पंच-वृत्तियाँ, मानो देखो, विद्यमान रहती हैं।

### मानव-दर्शन

विचार आता है कि वेद का वाक्य क्या कहता है? वेद का ऋषि यह क्या कह रहा है? वेद कहता है कि मानव को अपनी मानवीयता के ऊपर मानव-दर्शन पर अध्ययन करना चाहिये। प्रत्येक मानव जब मानव-दर्शन का अध्ययन करना प्रारम्भ कर देता है तो यह समाज पवित्र बन जाता है। मानव-दर्शन क्या है? जैसे **परमपिता परमात्मा ने इस संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया है, ऐसी यज्ञशाला में मैं भी विद्यमान हूँ और मैं भी स्वतः यज्ञशाला हूँ। परन्तु देखो स्वतः इसी प्रकार का याग हो रहा है। मेरे पुत्रो ! परमपिता परमात्मा को आत्मा के समीप जब दृष्टिपात् करने लगता है तो मानो यह भव्यता उसे दृष्टिपात् आने लगती है। यह मानव-दर्शन कहलाता है।** मैं कौन हूँ? कहाँ से मेरा आगमन हुआ है? मैं क्या हूँ? वह इसके ऊपर चिन्तन करता है और उसमें परमात्मा का दर्शन करता है तो वह मानवीय-दर्शन कहलाता है, मानवत्त्व को उसमें दृष्टिपात् करने लगता है।

## वैशम्पायन का यज्ञ-मन्त्रों पर अनुसन्धान

आओ, मेरे प्यारे ! आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूँ। मैंने कई काल में यह चर्चाएं प्रकट भी की हैं, आज भी मुझे स्मरण आ रही हैं। मेरे पुत्रो ! देखो, आज का हमारा जो यह विचार चल रहा है, मुझे कहीं से यह प्रेरणा आ रही है कि याग के सम्बन्ध में अपना विचार-विनिमय दिया जाये। मेरे पुत्रो ! ऋषि-मुनियों ने अपने में बड़ा अनुसन्धान किया है, बड़ा अन्वेषण किया है। एक-एक वेद-मन्त्र को ले करके उन्होंने अपने में बड़ा चिन्तन और मनन किया है। मेरे पुत्रो ! देखो मुझे स्मरण आता रहता है, महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे। महर्षि वैशम्पायन वृष्टियाग के बड़े विशेषज्ञ थे, मानो देखो, वृष्टियाग में उनकी बड़ी निष्ठा भी रहती थी। एक समय, बेटा ! महाराजा अश्वपति के यहाँ एक वृष्टि याग में पहुँचे। परन्तु वृष्टियाग को कराने के पश्चात् मुनिवरो ! जब वह अपने आश्रम में आये तो सायंकाल को, बेटा ! उन्हें एक वेद-मन्त्र स्मरण आया और वेद-मन्त्र यह कह रहा था—'चित्रं भवितां ब्रवे वाया सन्जनं ब्रहि वर्त्तनि द्यौ-लोकां वस्तुतं यज्ञमानः' बेटा ! वेद का मन्त्र यह कह रहा था कि नाना प्रकार के चित्र बनते रहते हैं और उन चित्रों में देखो यज्ञमान का चित्र बन करके प्रायः द्यौ-लोक को जाता रहता है। ऐसा वेद-मन्त्र मानो उद्‌घोष कर रहा है। वेद के आचार्य ने यह विचारा कि वेद का मन्त्र जो कहता है, वह तो यथार्थ है। वेद का मन्त्र मिथ्या नहीं हो सकता। परन्तु वेद-मन्त्र जो कहता है, इसके ऊपर हमें विचार-विनिमय करना चाहिये।

मेरे प्यारे ! ऋषि विचार में चिन्तन करते-करते देखो निद्रा की गोद में चले गये। मध्य रात्रि के पश्चात् उन्हें वही वेदमन्त्र स्मरण आते रहे, क्योंकि

जो मानव वेदों का उद्घोष करता है; वेदों के अनुसार अपने विचारों को लेकर मानवीयता में निहित हो जाता है, तो वेद-मन्त्र उन्हें स्वप्न में आने प्रारम्भ हो जाते हैं। मानो देखो, मेधा में आ जाते हैं और वह वेद-मन्त्र जब मेधा में आते हैं तो उसका 'स्वरूप' मानो उन्हें दृष्टिपात् आने लगता है। तो वेद का आचार्य जब चिन्तन करने लगा कि यज्ञमान का रथ बन करके 'द्यौ-लोक' में कैसे जाता है? मैं उस रथ को साकार रूप में दृष्टिपात् कैसे करूँ? तो मेरे पुत्रो ! देखो, महर्षि वैशम्पायन इसी चिन्तन में लगे रहे। रात्रि समाप्त हो गई। प्रातःकाल हो गया। प्रातःकाल इसी चिन्तन में वह मग्न रहे, परन्तु अपने में वह कोई निपटारा नहीं कर सके।

## वैशम्पायन-आश्रम में जिज्ञासु ऋषि-मण्डल

मेरे पुत्रो ! निकटतम आसन महर्षि विभाण्डक मुनि का था। महर्षि विभाण्डक मुनि ने विचारा कि आज तो ऋषि ने (वैशम्पायन ने) अपने आसन को नहीं त्यागा है, इसके मूल में कोई न कोई रहस्य है! मेरे पुत्रो ! देखो, वह अपने आसन को त्याग करके ऋषि के आसन पर आये। ऋषि से कहा—"भगवन् ! आज आप शून्यता में क्यों हैं? आपका मनोनीत हृदय मानो किस विचार में, वृत्तियों में रत्त है? हमें जानकारी कराईये।" ऋषि ने कहा, वैशम्पायन ने—"महाराज ! वेद-मन्त्र यह कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ-लोक में जाता है और मैं उस द्यौ-लोक वाले रथ को दृष्टिपात् करना चाहता हूँ।" मेरे पुत्रो ! देखो, ऋषि ने जब यह श्रवण किया वह भी वेद-मन्त्र के ऊपर मनन करने लगे। जब चिन्तन होने लगा, तो मुनिवरो ! देखो, कहीं से ऋषि- मुनियों का एक समाज, महर्षि विभाण्डक मुनि के आश्रम में पहुँचा और वहाँ से वृत्तियों को ले करके, वे इसके पश्चात् वैशम्पायन के यहाँ पहुँचे, जिसमें महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलभ और दालभ्य,

महर्षि सोमकेतु और महर्षि दद्दड़, व्रेतकेतु, मेरे पुत्रो ! देखो नाना ऋषि-मुनियों का समूह, जिसमें कुछ ब्रह्मचारी भी थे। ब्रह्मचारियों में, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कबन्धी, यज्ञदत्त और, मुनिवरो ! देखो उसमें व्रेतकेतु इत्यादि विद्यमान थे। मेरे प्यारे ! वह ऋषि-मुनियों का समूह भ्रमण करते हुए वैशम्पायन के द्वार पर पहुँचा। वैशम्पायन ने अपनी गाथा ऋषि-मुनियों को वर्णन कराई और उन्होंने कहा–"प्रभु! वेद-मन्त्र 'यह' कहता है। मैं इसी वेद-मन्त्र में लगा हुआ हूँ।" तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने कहा–"बहुत प्रियतम !" 'अप्रतिं ब्रह्मः वाच प्रवाहं ब्रहे वृत्तम्'।

## याग-अनुसन्धान के लिये अयोध्या-प्रयाण

आओ, प्यारे मुनिवरो ! देखो वे अपने में अनुसन्धान करने लगे। इन वाक्यों का परन्तु निपटारा नहीं हुआ। देखो मध्य दिवस हो गया। मध्य दिवस में सोमवृत्तिका मुनि ने कहा–"हे प्रभु ! हमारी इच्छा यह है कि याग होना चाहिये। चलो अयोध्या में गमन करते हैं। अयोध्या में राम के द्वारा एक याग हो ओर याग के द्वारा यह सब 'वृत्तं ब्रह्मे' सिद्ध हो जायेगा।" महर्षि वैशम्पायन ने वह स्वीकार कर लिया। महर्षि विभाण्डक ने भी वह वाक्य स्वीकार कर लिया। विश्वश्रवा उद्दालक ने भी इसी वाक्य को स्वीकार करके वहाँ से गमन किया।

## शंकातीत महर्षि वर्तेन्तु

मेरे पुत्रो ! महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज की अध्यक्षता वाला वह समाज भ्रमण करते हुए, बेटा! कहीं उन्हें रात्रि छा गई। रात्रि में, बेटा! देखो, महर्षि प्रसवानन्द ऋषि महाराज के यहाँ, वरतेन्तु के यहाँ उनका आगमन हुआ। देखो उन्होंने उनका बड़ा स्वागत किया। ऋषि-मुनियों का स्वागत

करना, यह तो मानवीयता कहलाती है। मानो देखो, वरतेन्तु ने उनका जब स्वागत किया, उन्होंने कहा—'धन्यं ब्रवे'! वार्ता प्रकट कराई। मेरे प्यारे ! देखो, वरतेन्तु अपने में बड़े तार्किक वृद्ध, तपस्वी वृद्ध थे। उनकी तीन सौ पिच्चासी वर्ष की उस समय आयु थी। मेरे प्यारे ! देखो वहाँ से वह गमन करते हुए उन्होंने कहा—''भगवन् ! आपके समीप कौन-सी ऐसी शंका है?'' वैशम्पायन ने कहा—''प्रभु ! 'यह' वेद-मन्त्र कह रहा है।'' उन्होंने न्योदा में से वेद-मन्त्र का उच्चारण किया। अब उन्होंने कहा—''प्रियतम ! तुम याग कराओ राम के द्वारा।'' मानो देखो, उन्होंने कहा—''प्रभु ! आपका भी आगमन होना चाहिये, क्योंकि आप तो देखो, राम के चौथे महापिता चले गये हैं परन्तु देखो उसके समय भी आप ने देखो जब रघु ने याग कराया था तो वरतेन्तु ने भिक्षा प्राप्त की थी, अपने गुरु आचार्य को प्रदान करने के लिए।'' उन्होंने कहा—''यह तो यथार्थ है, परन्तु मैं इस योग्य नहीं, मैं भु का चिन्तन कर रहा हूँ। मैं इस मानो शंकाओं में जाना नहीं चाहता, **शंका तो मानव का मौलिक गुण है, क्योंकि यह संसार का एक नृत्त्य कहा जाता है और जब संसार को मानव जान लेता है तो वह शंका से रहित हो जाता है।''** मेरे प्यारे ! वरतेन्तु यह वाक्य उच्चारण करके मौन हो गये और प्रातःकाल होते ही उन्होंने वहाँ से गमन किया, भ्रमण करते हुए।

## यज्ञशाला में राम-उपदेश

बेटा! देखो भगवान् राम के यहाँ प्रातःकालीन याग होता था। उस यज्ञशाला में आसन लगे हुए थे। ब्रह्मवेताओं के आसन भिन्न हैं, ब्रह्मव्रर्चोसी के भिन्न आसन हैं और ब्रह्मचारियों के आसन भिन्न हैं। मेरे प्यारे ! देखो प्रातःकालीन याग के पश्चात्, भगवान् राम की उपदेश-मञ्जरी प्रारम्भ हो

रही थी। अपने-अपने आसनों पर वे ऋषि-मुनि विद्यमान हो गये। उन्होंने राम को कोई सम्बोधित नहीं किया, क्योंकि उस समय उपदेश चल रहा था। राम उच्चारण कर रहे थे। राम देखो अपने राष्ट्रवेत्ताओं से यह प्रार्थना के रूप में वर्णन कर रहे थे कि हमें अपने अयोध्या के राष्ट्र को ऊँचा बनाना है। अयोध्या-राष्ट्र ऊँचा जब बनेगा, जब प्रजा ऊँची होगी, प्रजा में अहिंसामयी विचार बने रहेंगे। जब देखो प्रजा में हिंसक विचार बन जाते हैं तो राष्ट्र भ्रष्ट हो जाता है।

## दो सुगन्धियों का समन्वय

मेरे प्यारे ! देखो यह विचार भगवान् राम ने अपने राष्ट्रवेत्ताओं से वर्णन करते हुए कहा—"देखो, हमारा राष्ट्र, अयोध्या उस काल में ऊँचा बनेगा जब कि प्रत्येक गृह सुगन्धित हो जायेगा, प्रत्येक गृह मानो एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहेगा।" मुनिवरो ! देखो, राम का यह कथन था कि प्रातःकालीन देखो, बाल्य-बालिका, माता-पिता के प्रत्येक गृह से सुगन्धि आनी चाहिये। और सुगन्धि दो प्रकार की उन्होंने वर्णित की—**एक सुगन्धि है, जो विचारों की है; एक सुगन्धि है, जो साकल्य की सुगन्धि है। मानो साकल्य और विचारों की सुगन्धि का, दोनों का समावेश हो जाना चाहिये।** जब मानव की अन्तर्हृदय की विचारधारा सुगन्धि में परिणित हो जाती है अथवा यह परिवर्तित हो जाती है, मेरे पुत्रो! देखो साकल्य की सुगन्धि से जिसका मिलान हो जाता है, मेरे पुत्रो! देखो वह गृह सुगन्धित बन करके वह देवताओं का गृह बन जाता है और वह राष्ट्र भी देवताओं का बन जाता है

## राष्ट्रवाद की अवधारणा

राष्ट्र की जो प्रणाली है, राष्ट्र का जो निर्वाचन है, वह होता ही इसलिए है कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव-कन्या, प्रत्येक प्राणी अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करने में निहित हो जाये और दर्शनों का अध्ययन मानो देखो उनको कराया जाये। राजा के राष्ट्र में जितने बुद्धिजीवी प्राणी होते हैं, उतना ही चरित्र बलवती होता है और जितना चरित्र ऊँचा होता है, उतना ही राजा के राष्ट्र में सुगन्धि उत्पन्न हुआ करती है। मेरे प्यारे ! देखो, 'ऋषि' ने जब यह वाक्य वर्णन किया, **'वर्णनं बह्मे' देखो राम भी एक प्रकार के अनुपम ऋषि कहलाते थे। मेरे प्यारे ! देखो, उनका उपदेश यही कि "हमारा अयोध्या राष्ट्र उस काल में ऊँचा बनेगा, जिस काल में प्रत्येक गृह में याग की, वेद-मन्त्रों की मानो ध्वनि से देखो गृह ध्वनित होता रहेगा और जब वह ध्वनित होगा तो यह अयोध्या राष्ट्र ऊर्ध्वा को गमन करता ही रहेगा।**

भगवान मनु ने, हमारे पूर्वज मनु ने इस राष्ट्र का और अयोध्या राष्ट्र का निर्माण किया, इक्ष्वाकु मनु ने इस अयोध्या का निर्माण किया था और उसी समय राष्ट्र की प्रणाली का मानो वर्णन आया। क्योंकि राष्ट्र उस काल में निर्वाचित होता है जब प्रजा में मानो देखो दो प्रकार के विचारवेत्ता होते हैं—एक ऐसा विचार है जो मानवीय है और एक ऐसा जो मानो देखो कर्त्तव्य-विहीनवादी बन जाता है। और, जब कर्त्तव्यविहीन बन जाता है तो उस काल में, बेटा ! देखो राष्ट्र की आवश्यकता होती है, अनुशासन की आवश्यकता होती है। और जब अनुशासनहीनता आ जाती है और प्रत्येक मानव जब अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करता है तो वहाँ कर्त्तव्यहीनता के लिए अनुशासन है, राष्ट्र का निर्माण है और राष्ट्रीय-प्रणाली का निर्माण हुआ करता है।"

मेरे प्यारे ! देखो, भगवान् राम का यह उपदेश चल रहा था—"हे राष्ट्रवेताओ ! हमारे राष्ट्र में, प्रत्येक गृह में, याग की सुगन्धि, प्रत्येक गृह में चरित्र की सुगन्धि, प्रत्येक गृह में मानवीय-दर्शन की सुगन्धि आनी चाहिये, जिससे राजा का राष्ट्र, हमारा अयोध्या राष्ट्र ऊँचा बने।"

## विष्णु-राष्ट्र

मेरे प्यारे ! देखो, यह उपदेश चल रहा था। इसी उपदेश के साथ, उन्होंने यह कहा कि "हमारा राष्ट्र, 'विष्णु-राष्ट्र' होना चाहिये।" क्योंकि राम ने ही 'विष्णु-राष्ट्र' की स्थापना की थी और उन्होंने यही कहा था कि विष्णु उसे कहते हैं, जो रक्षक होता है। जब प्रत्येक (मानव) अपनी-अपनी स्थितियों पर रक्षा की जब प्रवृत्ति वाला बन जाता है और रक्षा के नियम और उस प्रणाली को जान लेता है तो विष्णु-राष्ट्र रूप बनता है। रक्षक कौन होता है? मानो देखो जो रक्षा करने वाला होता है। रक्षा कैसे होती है? जो सूर्य के उन विष्णु-तत्त्वों को, विचारों को अपने में मन्थन करता है। कुछ मानो प्रातः काल से मन्थन करता है, कुछ मध्य से मन्थन करता हुआ वह मानो प्रत्येक आभा में रक्षा हो रही है। तो वैसा विष्णु रूप बन करके और राष्ट्रवेत्ता बन करके अपने में विष्णु-राष्ट्र की स्थापना होनी चाहिये।

**विष्णु राजा के राष्ट्र में प्रत्येक मेरी पुत्री, प्रत्येक मानव अपने में मानो अपनेपन का दर्शन करता रहता है; अन्तरात्मा की वार्त्ता, अन्तरात्मा की प्रेरणा का साकार रूप बनाता रहता है। मेरे पुत्रो! वही तो विष्णु-राष्ट्र कहलाता है। राजा स्वतः अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल क्रियाकलापों में परिणित हो जाता है।** मेरे पुत्रो! देखो यह वाक्य चल रहे थे। उन्होंने अपने वाक्यों में यह घोषणा करके कहा कि

"यह राष्ट्रीय घोषणा हो जाये कि प्रत्येक गृह में याग हो, सुगन्धि हो।" तो मुनिवरो! राम जैसे ही अपने विचारों को विश्राम देने लगे, मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने, राम ने कहा—मुझे इतना ही विचार देना है।

मेरे प्यारे! देखो (राम ने) दृष्टिपात् किया कि पक्तियों में महर्षि वैशम्पायन, महर्षि विभाण्डक और देखो उद्दालक गोत्रीय विश्वश्रवा और भृङ्गी, वृत्तान्त ऋषि, सोमकेतु, प्रवाहण, दालभ्य और शिलभ पंक्ति में विद्यमान हैं। कुछ ब्रह्मचारी भी विद्यमान हैं। राम ने, बेटा! उनके चरणों की वन्दना की और चरणों की वन्दना करके उन्होंने कहा—"प्रभु! हम कैसे अभागे हैं, जो ऐसे ऋषि-मुनियों का आगमन हुआ है, परन्तु उस आगमन के साथ हमें मानो सूचना नहीं दे सके! आप यदि सूचना दे देते तो, हे प्रभु! मैं आपको वाहनों में अयोध्या में लाता।" राम के वाक्यों को पान करके ऋषि-मुनि प्रसन्न हो गये। उन्होंने कहा—"धन्य है, प्रभु!" राम ने प्रार्थना की—"प्रभु! ऐसा क्या कारण था, जो इस प्रकार बिना सूचना के ब्रह्मवेत्ताओं का आगमन मेरे राष्ट्र, मेरे आसन पर, यज्ञशाला में हुआ?" वैशम्पायन और महर्षि विभाण्डक दोनों ने एक स्वरों में कहा—"यह न्योदा का मन्त्र है, मानो देखो हम यह चाहते हैं, हे राम ! तुम्हारे यहाँ एक याग होना चाहिये।" उन्होंने कहा—"बहुत प्रियतम! हे प्रभु ! मैं ऋषि-मुनियों की आज्ञा का पालन करूंगा।"

मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है जैसे आज हम राम की उस यज्ञशाला में विद्यमान हैं। ऐसा मुझे अनुभव हो रहा है। उनके विचार, मानो देखो, उन्होंने ऋषि-मुनियों को उनके अपने-अपने कक्षों में मानो विश्राम कराया और कक्षों में देखो उनका आतिथ्य किया और शिल्पकारों को आज्ञा दी कि यज्ञशाला का निर्माण करो और साकल्य एकत्रित किया

जाये। मेरे प्यारे! देखो वह नाना 'ब्रह्मब्रहे' वह अपने में लग गये। शिल्पकारों ने एक यज्ञशाला का निर्माण किया। भव्य यज्ञशाला का जब निर्माण भी हो गया, साकल्य एकत्रित हो गया, मेरे प्यारे! देखो साकल्य-सामग्री जब सब उपस्थित हो गई, तो मुनिवरो! देखो, राम ने जा करके महर्षि वैशम्पायन से कहा—"प्रभु ! आपकी यज्ञशाला का निर्माण हो गया है, साकल्य एकत्रित हो गया है। आप को निमन्त्रण है कि आप यज्ञशाला में पधारें।" मेरे प्यारे! आज्ञा के अनुसार मानो वे यज्ञशाला में पहुँचे।

बेटा! देखो, उस याग का ब्रह्मा, वैशम्पायन को नियुक्त किया गया। महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज को उद्‌गाता के रूप में और, मुनिवरो ! देखो और नाना ऋषियों को, किसी को् बेटा! देखो अध्वर्यु, मानो देखो राम स्वयं यज्ञमान बन करके और याग का प्रारम्भ होने लगा। उन्होंने, सब ऋषि-मुनियों को निमन्त्रित किया और निमन्त्रित करके, बेटा ! जैसे याग का प्रारम्भ करने लगे तो याग में जब अग्निहोत्र हो गया, अग्नि प्रचण्ड हो गई तो वह वेदमन्त्र, बेटा! राम के समीप भी आया। न्योदा के मन्त्रों का उद्‌घोष हो रहा है और वही वेदमन्त्र कि 'यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ-लोक को जा रहा है'—**अग्नं ब्रह्मः अग्नं रुद्रो भागां ब्रहे, चित्रं वृत्तं ब्रह्मः वृत्तं, देवत्यां मंगल ब्रहे, वाचं द्यौ लोकाः'** । **वेद का वाक्य कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है और वह द्यौ-लोक-वृत्तियों में रत्त हो जाता है**। मेरे प्यारे! देखो राम ने प्रार्थना की—"प्रभु! वेद का मन्त्र यह कह रहा है कि यज्ञमान का रथ बन करके और यज्ञशाला का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है। हम उस द्यौ-लोक वाले रथ को दृष्टिपात् करना चाहते हैं। याग जब प्रारम्भ होगा, जबकि मानो देखो उस रथ को हम दृष्टिपात् करेंगे।" मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन, विभाण्डक इत्यादियों ने दर्शनों की मीमांसा करके यह सिद्ध किया कि चित्र

बन करके जाता है। परन्तु राम ने कहा—"नहीं, भगवन्! मैं उसको प्रत्यक्ष दृष्टिपात् करना चाहता हूँ"। मेरे प्यारे! देखो, याग में विचार यही चल रहा था।

## राम-यज्ञशाला में भारद्वाज-आगमन

इतने में ब्रह्मचारिणी शबरी, महर्षि पणपेतु, और वृत्ति मानो देखो यज्ञकृतिका, इन ब्रह्मचारियों के सहित महर्षि भारद्वाज अपने वाहन में मानो देखो यज्ञशाला में आ पधारे। मेरे पुत्रो। देखो महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा—"राम! तुम्हारा याग शान्त क्यों हो रहा है?" उन्होंने कहा—"प्रभु! यह वेद-मन्त्र है और यह कहता है कि यज्ञमान का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है। मैं उस द्यौ-लोक वाले रथ को दृष्टिपात् करना चाहता हूँ।" उन्होंने कहा—"बहुत प्रियतम!" मेरे प्यारे ! देखो, भारद्वाज ने कहा—"राम! तुम ब्रह्मवेत्ताओं का, ब्राह्मण-समाज का अपमान तो नहीं कर रहे हो? क्योंकि ये सब ब्रह्मवेत्ता हैं, कोई ब्रह्मवर्चोसी है।" उन्होंने कहा—"प्रभु! मेरे में इतनी शक्ति नहीं है कि आज जो मैं ऋषियों का अपमान करूँ। मेरा तो अन्तरात्मा यह चाहता है कि मैं विज्ञान के वाङ्मय में उनको दृष्टिपात् करता रहता हूँ। प्रभु! मैं तो उनके चरणों की मानो एक रज हूँ और रज को अपने मस्तिष्क पर आवृत्त करने वाला हूँ।" मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज बड़े मानो देखो विज्ञानवेत्ता थे, उन्होंने ब्रह्मचारिणी शबरी और यज्ञकेतु को कहा "जाओ, अपने कजली वनों में से चित्रावलियों के यन्त्रों को लाया जाये।"

## यन्त्रों में यज्ञमान के रथ-चित्रों का दर्शन

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ से अपने वाहनों में विद्यमान हो करके

गमन किया और कजली वनों से विज्ञान शाला वाली उन वृत्ति-चित्रावलियों को लाया गया। वह चित्रावली मानो देखो विद्युत पर नृत्य कराते हुए महर्षि भारद्वाज ने कहा—"देखो, याग का प्रारम्भ करो।" मेरे प्यारे! जैसे उन्होंने याग का प्रारम्भ किया, यन्त्रों में चित्रावलियों में, मेरे पुत्रो! देखो, जब वे 'स्वाहा' उच्चारण करते थे तो अग्नि की धाराओं पर वे शब्द विद्यमान हो करके, देवता-वेद-मन्त्रों के सहित, मेरे पुत्रो! देखो, उन शब्दों में उनका चित्र, उनका आकार और वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके द्यौ-लोक को जाते हुए, बेटा! यन्त्रों में दृष्टिपात् आने लगा। उन्होंने कहा, भारद्वाज ने—"हे राम ! यह दृष्टिपात् करो। तुम्हारा यज्ञशाला का जितना आकार है, उसका रथ बन करके, जिसमें ब्रह्मा, अध्वर्यु, उद्गाता, यज्ञमान, होतागण विद्यमान हो करके द्यौ-लोक को जा रहे हैं।" मेरे प्यारे! राम के हर्ष की कोई सीमा न रही और महर्षि वैशम्पायन तो अपने आसन पर से ही अपने में मानो इतने हर्ष-ध्वनि करने लगे कि मैं द्यौ-लोक को जा रहा हूँ। मेरे पुत्रो! देखो वैशम्पायन का वह मन्तव्य अपने में साकार रूप बन गया, जैसा वेद-मन्त्र कह रहा था, वेद-मन्त्र का जो अध्ययन हो रहा था।

मेरे प्यारे! देखो राम से कहा, महर्षि भारद्वाज ने—"हे राम! मेरे यहाँ एक यन्त्र ऐसा भी है, जिस यन्त्र में एक रक्त के बिन्दु से, उस मानव का चित्रण आता है, जिस मानव का रक्त का वह बिन्दु है। मानो एक-एक बिन्दु में मानव का दर्शन होता रहता है।" मेरे प्यारे! देखो, राम बड़े प्रसन्न हुए। महर्षि भारद्वाज ने कहा—"हे राम! तुम शबरी को जानते हो? यह शबरी कौन है? महर्षि पणपेतु मुनि महाराज की यह कन्या है। मानो देखो जब तुम्हारा रावण से संग्राम हुआ था, मानो सर्वत्र अस्त्रों-शस्त्रों का जो कोष था वह तुम्हें शबरी ने ही प्रदान किया था।" मेरे प्यारे! देखो, वह राम

ने जान लिया। उन्होंने कहा—"प्रभु मैं तो यह जानता हूँ, ये दिव्यासा हैं।" बेटा! विचार यह कि उनका याग प्रारम्भ रहा। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज याग में विद्यमान रहे। छः माह तक वह याग चलता रहा। छः माह के पश्चात् याग सम्पन्न हो गया। मेरे पुत्रो! ऋषि-मुनि अपनी मुद्राएं ले करके अपने-अपने आसन को उन्होंने गमन किया।

## विज्ञान और मानव-दर्शन का याग से समन्वय

मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ, विचार केवल यह कि मुनिवरो! देखो, **'यज्ञं ब्रह्मः वृत्तम्' यह जो संसार रूपी यज्ञशाला है, यह प्रभु ने ऐसा एक निर्माण किया है कि जिसमें मानो एक-एक मानव-शब्द का चित्र बन करके मानो द्यौ-लोक में चला जाता है और वह 'चित्रं ब्रह्मः वृत्तम्।'** बेटा! वेद-मन्त्रों में, न्योदा में, नाना मन्त्र इस प्रकार के आते रहते है, अन्य-अन्य मन्त्र भी इस प्रकार के हैं, जो चित्रों का दर्शन कराते रहते हैं। तो विचार-विनिमय क्या? मेरे प्यारे! **देखो, विज्ञान और याग का एक-दूसरे से समन्वय रहता है। ये एक-दूसरे से कटिबद्ध रहते हैं। तो इसी प्रकार मानव के विचार, मानवीय-दर्शन और याग का अपने में समन्वय होता रहता है। इसी से, बेटा! आध्यात्मिकवाद और भौतिक-विज्ञान, दोनों का एक-दूसरे में समन्वय होता रहता है।** आओ, प्यारे! मैं इस बारे में विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव अपने में मानवीयता का दर्शन करता रहे! यह है, बेटा! आज का वाक्य।

हमारा आज का विचार क्या कह रहा है? हम उस परमपिता परमात्मा की महत्ती का वर्णन करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, अपने

प्रभु की महिमा का, अपने में महत्त्वदायक उस देव को स्वीकार करते हुए, उसका अपनी अन्तरात्मा में दर्शन करते रहें। एक-एक वेद-मन्त्र परमपिता परमात्मा की गाथा गाता रहता है, अपने में गायन रूप से गाता ही रहता है।

आओ, मेरे पुत्रो! आज का विचार, अब यह समाप्त होने जा रहा है। कल मुझे समय मिलेगा, शेष चर्चाएं कल प्रघट करेंगे। आज का वाक्य यह कि एक-एक वेद-मन्त्र, बेटा! प्रभु की गाथा गा रहा है। उस गाथा वाले वेद-मन्त्र का हम अध्ययन करते हुए हमें अपने में प्रभु की प्रतिभा में रत्त होना है। यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रघट होंगी। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

शिकोरपुर, मेरठ
२८.१.८८

# वसुन्धरा के आयाम

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा प्रतिभाशाली है। मानो जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात् आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव दृष्टिपात् आ रहा है। जितना भी यह संसार मानवीयता में दृष्टिपात् आ रहा है, उसकी महानता प्रत्येक वस्तु में दृष्टिपात् आ रही है। आज का हमारा वेद मन्त्र हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है मानो वह ब्रह्म की गाथा गा रहा है। **जिस प्रकार यह वाणी ब्रह्म की गाथा गा रही है, जिस प्रकार माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है, मानो जैसे यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, इसी प्रकार प्रत्येक वेद-मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है, उसकी महानता को दर्शा रहा है।**

आज का हमारा वेद-मन्त्र उच्चारण कर रहा था, 'वसुन्धरं ब्रह्मे वरणस्सुत प्रवाह', हे माँ! वेद तुझे वसुन्धरा कहता है। मानो वसुन्धरा का अभिप्रायः यह है कि मानव इसमें वशीभूत रहता है। हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द आते रहते हैं, जैसे माता वसुन्धरा। वसुन्धरा नाम माता का है और वसुन्धरा नाम पृथ्वी का है।

वसुन्धरा नाम सूर्य की किरणों का है और वसुन्धरा नाम प्रभु का है। बेटा! यहाँ वसुन्धरा का अभिप्रायः क्या है? क्या जिसके गर्भ-स्थल में हम सभी वशीभूत रहते हैं।

## वसुन्धरा रूप में माता

उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाता है। हे माँ! तुझे वेद वसुन्धरा कह रहा है। मानो जब माता के गर्भस्थल में शिशु होता है तो माता के गर्भस्थल में वह वास करता है मानो वह वस रहा है, इसलिए माता का नाम वसुन्धरा है। बेटा! वहाँ नाना प्रकार की प्रेरणा पाता रहता है और उन्हीं प्रेरणाओं के आधार पर अपने जीवन का निर्माण होता रहता है।

## पृथ्वी का वसुन्धरा रूप

जब यह (मानव) संसार में माता के गर्भस्थल से पृथक हो करके संसार क्षेत्र में आता है तो उस समय यह पृथ्वी माता वसुन्धरा बन जाती है। मानव, बेटा! नाना प्रकार के निर्माण करता रहता है, निर्माणवेत्ता बनता रहता है, परन्तु 'निर्माण' माता के गर्भस्थल में कर रहा है। वेद कहता है कि, हे पृथ्वी! तू वसुन्धरा है तू अपने में हमें बसा रही है। कहीं नाना प्रकार के खाद्य पदार्थ दे रही है, कहीं नाना प्रकार के खनिजों को प्रदान कर रही है। हे माता! तुझे वेद वसुन्धरा कहता है, क्योंकि तू नाना प्रकार के व्यंजनों को उत्पन्न करने वाली है। मेरे प्यारे! वह मेरी प्यारी माँ वसुन्धरा कौन है? वह पृथ्वी जिसके गर्भस्थल में यह संसार अपनी क्रीड़ा कर रहा है, आनन्दवत को प्राप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! उस काल में इसको माता वसुन्धरा कहते हैं। हे वसुन्धरा! तू हमारा कल्याण करने वाली है, तू कल्याणमयी पदार्थों को प्रदान करती हुई, तू हमारे जीवन

को महान् बनाती रहती है। बेटा! जब वैज्ञानिक खनिज के गर्भ में जाते हैं, पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करते हैं तो नाना प्रकार का खनिज पदार्थ उत्पन्न हो जाता है, जिससे राष्ट्र का निर्माण होता है, राष्ट्र का संचालन होता रहता है। परन्तु इसी प्रकार नाना प्रकार के खनिज और खाद्य दोनों ही पृथ्वी से उत्पन्न होते हैं और दोनों से मानव के जीवन का निर्माण होता है। उसी के गर्भ में यह वशीभूत रहता है।

## सूर्य की किरणों में वसुन्धरा-भाव

मेरे प्यारे! उस माता का नाम, पृथ्वी का नाम वसुन्धरा कहा गया है। देखो यह जो नाना प्रकार की सूर्य की किरणे हैं बेटा! यह कैसा जन-जीवन देती हैं। मानो यह प्रातःकाल उदय हो रही हैं, प्राचीदिक् बन करके आ रही हैं, मानव को प्रकाश देती हैं, प्रकाश देती ही चली जाती हैं। **उसी प्रकाश में प्रत्येक मेरी प्यारी माता अपने को जागरूक कर लेती है। मानव जागरूक हो जाता है। उसी की किरणों से उसके जीवन का जीवन पनपने लगता है, महानता को प्राप्त होता है। नाना प्रकार की किरणें धातुओं में, पिपादों को ले करके मानव के जीवन से उसका समन्वय होता है।** बेटा! एक ही प्राणी नहीं है, नाना प्राणी उससे मानो एक मानवीयता को प्राप्त करते रहते हैं। प्राप्त करते हुए उसके पश्चात् जहाँ सूर्य की किरणों को वसुन्धरा कहा जाता है, क्योंकि उसी में हम बस रहे हैं, उसी से हम प्राण-शक्ति को प्राप्त कर रहे हैं, मानो जनजीवन को प्राप्त कर रहे हैं, तो उस समय माता वसुन्धरा कौन है? सूर्य की नाना प्रकार की किरणें वसुन्धरा कहलाती हैं।

## प्रभु का परमवसुन्धरा रूप

मानो देखो इसके पश्चात् माता वसुन्धरा कौन है? बेटा! वह मेरा

प्यारा प्रभु है, जो संसार का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है। वह निर्माणवेत्ता हमें जीवन दे रहा है, आनन्दवत को प्राप्त करा रहा है। तो उस काल में, मेरे प्यारे! देखो वह कौन, वह मेरा प्यारा प्रभु वसुन्धरा बन करके हमारा कल्याण कर रहा है। और, कैसी वह माता वसुन्धरा है? बेटा! यह संसार एक सूत्र में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात् आता है। जब मैं यह विचारने लगता हूँ, मुझे स्मरण आने लगता है। दर्शनों के और वेद-मन्त्रों के तथ्यों के ऊपर विचार-विनिमय करने लगते हैं, तो बेटा! एक-एक शब्द में एक-एक ब्रह्माण्ड निहित हो रहा है। **आओ, मेरे प्यारे! उस मेरी प्यारी माता, इस संसार को जिसने निर्माणित किया है, मानो वह माता कैसी ममत्व को धारण कर रही है! बेटा विष्णु बन करके हमारा कल्याण कर रहा है। मानो इन्द्र बन करके हमें विद्युत दे रहा है। प्राचीदिक बन करके, अग्नि दे रहा है। मानो उदीची बन करके हमें सोम प्रदान कर रहा है, ऊर्ध्वा में हमें मानो जीवन को प्रदान कर रहा है। कैसा वह महान आनन्दमयी प्रभु स्रोत्रोमयी कहलाता है।**

मेरे प्यारे! देखो जब इस पृथ्वी के ऊपर हम विचार करने लगते हैं। अरे, यह पृथ्वी भी किसी में पिरोई हुई है। जैसे माला के मनके हैं, माला को मानव धारण कर रहा है, परन्तु वह एक धागे में पिरोये हुए हैं, मनके पिरोए हुए है, दोनों के समन्वय का नाम माला है। इसी प्रकार, यह मानो देखो, ब्रह्माण्ड किसी में पिरोया हुआ है, मानो वह पिरोया हुआ होने से एक माला के सदृश्य यह ब्रह्माण्ड बेटा! दृष्टिपात् आ रहा है। जैसे माला है, माला में मनके हैं, मानो जैसे वेद-मन्त्र है, वह शब्द पर शब्दों की ध्वनियाँ लगी हुई हैं, किसी में पिरोई हुई हैं, इसी प्रकार, बेटा! यह नाना प्रकार का जो मण्डल है, नाना प्रकार के जो लोक-लोकान्तर

हैं, ये भी मेरे पुत्रो! किसी में पिरोये हुए हैं। मानो कैसे पिरोए हुए हैं? एक-दूसरा, एक-दूसरे का सहायक बना हुआ है। वाह री मेरी प्यारी माँ तू कैसी भोली है! तू कैसी निर्माण करने वाली है! निर्माण कर रही है! मानव के शरीर का निर्माण माता के गर्भ में कर दिया है। लोक-लोकान्तरों का निर्माण, मानो एक आभा में मानो अपनी महान् प्रकृति की आभा से और चेतना को उसमें अर्पित कर दिया है।

वह मेरी प्यारी माँ कैसी निर्माणवेत्ता है। मेरे प्यारे! देखो संसार के चक्र को निर्माणित कर रही है। मानो देखो जब मानव यह विचारता है कि प्रभु क्या है? प्रभु किसे कहते है? तो बेटा! यह ब्रह्माण्ड एक-दूसरे में पिरोया हुआ सा दृष्टिपात् आता है। जैसे यह पृथ्वी है, यह पृथ्वी सूर्य से पिरोई हुई है; सूर्य बृहस्पति में पिरोया हुआ है; बृहस्पति आरूणी-मण्डल में पिरोया हुआ है; आरूणी-मण्डल मानो देखो ध्रुव में पिरोया हुआ है; ध्रुव-मण्डल, मेरे प्यारे! स्वाति-नक्षत्रों में पिरोया हुआ है; स्वाति-नक्षत्र, मूल-नक्षत्रों में पिरोये हुए हैं; मूल-नक्षत्र, मेरे प्यारे! देखो अचंग-लोकों में पिरोये हुए हैं; अचंग-लोक स्वाति-नक्षत्रों में पिरोये हुए हैं; श्वेनकेतु-मण्डलों में, बेटा! यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है। विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! एक-दूसरे से पिरोया हुआ होने से यह ब्रह्माण्ड का चक्र चल रहा है। यह ब्रह्माण्डमयी चक्र कहलाता है। एक-दूसरे में गतिमान होता हुआ यह ब्रह्माण्ड, मेरे प्यारे! हमें दृष्टिपात् आ रहा है। आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें ओत-प्रोत की चर्चा करने नहीं आया हूँ, आज तुम्हें यह माता वसुन्धरा की चर्चा करनी है। वह मेरी प्यारी माता जिस माता के गर्भ में मानव का निर्माण होता है, मानो देखो पृथ्वी के ऊपर मानव वास कर रहा है, वसुन्धरा बना रहा है, इसी प्रकार नाना लोक-लोकान्तर, बेटा! प्रभु के गर्भ में खिलवाड़ कर रहे हैं, मानो ओत-प्रोत हो रहे हैं।

## रेवक-आश्रम में ऋषि-चर्चा

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन् पर ले जाना चाहता हूँ। जो चर्चाएं मैंने तुम्हें कई काल में प्रकट की हैं, आज भी मैं उन चर्चाओं को करता चला जाऊँ। बेटा! वाक्य तो बड़े विचित्र हैं। वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है, परन्तु उसी आधार पर मैं अपने विचारों को एक ऋषि के आसन् पर ले जाना चाहता हूँ, जहां ऋषि-मुनि, बेटा! एकत्रित हो करके नाना प्रकार का विचार-विनिमय करते रहे हैं। नाना प्रकार की विचार-धाराएं व्यक्त करते हुए इस मानव के सम्बन्ध में क्या-क्या चिन्तन होता रहा है। मुझे स्मरण है, बेटा! एक समय एक सभा महर्षि रेवक मुनि महाराज के आश्रम में हुई। रेवक मुनि महाराज, वह गाड़ीवान रेवक थे। उन्हें एक सौ एक वर्ष, मेरे प्यारे! देखो गाड़ी के नीचे तपस्या करते हो गये थे, मेरे पुत्रो! जब वह तपस्वी थे। एक समय, ऋषि के आश्रम में एक सभा हुई, जिसमें बेटा! महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, महर्षि रेवक, महर्षि, सोमकेतु, महर्षि कबन्धी, महर्षि कीर्तिमान, महर्षि पणकेतु, मेरे प्यारे! वैशम्पायन और महर्षि विभाण्डक, महर्षि सोमकेतु दद्दड़ इत्यादि ऋषि-मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ।

## गर्भ-निर्माण-विज्ञान की दर्शन-जिज्ञासा

एकत्रित होने वाले उन ऋषि-मुनियों ने रेवक मुनि महाराज से कुछ प्रश्न किये। और, वह वेद का एक मन्त्र उन्हें स्मरण आया, जो बेटा! आज भी हम उच्चारण कर रहे थे। वह वेद का मन्त्र यह कह रहा था 'गोस्थानं गण्यं माता वर्चस्सुता', वेद की आख्यिका, वेद के शब्द यह कह रहे हैं कि माता के गर्भ-स्थल में जो निर्माण होता है, वह एक बिन्दु

से होता है, परन्तु बिन्दु की इतनी विस्तृत विचारधारा, इतना विस्तृत उसका एक आकार बनता है, मुनिवरो! देखो इसके ऊपर ऋषि-मुनि दर्शनों की आभा में सदैव परिणित होते रहे हैं और विचार-विनिमय होता रहा है। तो वेद के आचार्यों ने, बेटा! नाना प्रकार के महर्षि रेवक मुनि महाराज से प्रश्न किये और रेवक मुनि से कहा कि–''महाराज! हम उन चित्रों को जानना चाहते हैं।'' दर्शनों से तो बेटा! वे घटित होते हैं परन्तु देखो निपटारा अपने में नहीं कर सके। कई दिवस हो गये विचार-विनिमय करते हुए, क्योंकि दर्शनों से कोई वार्ता घटित हो जाती है, परन्तु वे चाहते थे कि हम इसको साक्षात्कार दृष्टिपात् करना चाहते है। अब यह साक्षात्कार कैसे हो? तो मुनिवरो! देखो इसके ऊपर विचार-विनिमय होता रहा, परन्तु कोई समाधि के द्वारा उच्चारण करने लगा, किन्हीं ने कहा कि नहीं वैज्ञानिक तथ्यों और रहस्यों से यह उद्घटित होगा। तो मेरे प्यारे! वह अपने में निपटारा नहीं कर सके। परिणाम यह हुआ, 'असम्भवति ब्रह्मः लोकं हिरण्यं गत प्रमाणं लोकः', वेद के आचार्यों ने यह कहा कि इस सब के लिये मानो किसी वैज्ञानिक के द्वारा चलो। तो मेरे प्यारे! देखो रेवक मुनि महाराज ने कहा–''यहाँ से कुछ ही दूरी पर महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज का आश्रम है।''

## ऋषि-समाज का भारद्वाज-आश्रम में आगमन

मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि आश्रम के लिए उन्होंने गमन किया। भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ गाड़ीवान रेवक, महर्षि प्रवाहण, शिलभ और दालभ्य और, मुनिवरो! देखो ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु और, मुनिवरो! देखो कबन्धी इत्यादि ऋषि-मुनियों ने गमन किया और भ्रमण करे हुए, मेरे पुत्रो! वे महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में जा पहुँचे। भारद्वाज मुनि महाराज ने उनको दृष्टिपात् किया और वह अपने में हर्ष-ध्वनि करने

लगे और विचारने लगे, ''आज क्या कारण है कि आज ब्रह्मवेत्ताओं का मेरे आश्रम में आगमन हो रहा है?''

मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण है मानो भारद्वाज मुनि ने उनका स्वागत किया नाना प्रकार के पदार्थों का पान कराया और यह 'अस्वतम्' उनको आसन् दे करके नतमस्तक हो करके कहा,–''कहो, भगवन्! आज आपने मेरे आसन को कैसे पवित्र किया? मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुमने मेरे आश्रम के लिए मानो मुझे आपने दर्शन दिये हैं। मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूँ, परन्तु मैं जानना चाहता हूँ।'' मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज को ऋषि-मुनियो ने कहा,–'' रेवक मुनि, प्रवाहण और शिलभ और दालम्य ने एक स्वर में कहा कि–''हे ऋषिवर! हम यह जानना चाहते हैं कि हम कुछ वेद-मन्त्रों का अध्ययन करेंगे और उसके सम्बन्ध में कुछ जानना चाहेंगे।'' भारद्वाज मुनि ने कहा–''प्रभु! आप उच्चारण करो और मेरी शक्ति होगी तो मैं उसमें मानो देखो दिग्दर्शन कराऊंगा।'' उन्होंने कहा–''सम्भव प्रमाणं सुते विजनं धनञ्जनन स्तुता विश्वम्ब्रह्मे कृतो देवः अस्माकं ब्रह्मे वर्चः दिव्यं गत प्रव्हेवस्तु सम्भवनितः अग्नं ब्रह्मणा चित्रं रथ प्रव्हा वस्तु धनं ब्रीहि कृत लोकाः।'' मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने जब यह वर्णन कराया, वेद-मन्त्रों को ध्वनि से उच्चारण किया तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि–''महाराज! मैं अवश्य इसका आपको कुछ परिचय दूँगा।'' उन्होंने कहा–''तो परिचय दो।'' मुनिवरो! ''वेद-मन्त्र यह कहते थे, हमने वेदों में अध्ययन किया है कि एक बिन्दु से मानव का निर्माण होता है, एक वाक्य यह कि 'सम्भवा ब्रहे वर्णम्' मानो एक आश्रम में एक मानव रहता है उस मानव के चित्र वायुमण्डल में गति करते रहते हैं।'' 'चित्रं अधिप्रवाह वायु अस्ताम्', मानो देखो चित्र गति करते रहते हैं. वायुमण्डल में। तो मेरे प्यारे! देखो

जब उन्होंने यह वर्णन कराया 'सम्भवा प्रव्हे अस्वताय' जब यह वर्णन कराया तो ऋषियों ने कहा—''महाराज! बहुत धन्य!'' तो मेरे प्यारे। उन्होंने कहा—''तुम हमें अपनी विज्ञानशाला का दृष्टिपात् कराईये।'' तो मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज उस समय, बेटा! देखो इस विज्ञान में परमाणु शक्ति में, अणुशक्ति में उनका बहुत मानो आधिपत्य था।

## भारद्वाज के चित्रावली यन्त्रों में विज्ञान-दर्शन

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने ऋषि-मुनियों को ले करके गमन किया और अपनी विज्ञानशाला में सबसे प्रथम उन यन्त्रों में ले गये, जिन यन्त्रों का मेरे पुत्रो! ऋषि ने निर्माण किया था और यह कहा भारद्वाज ने कि—''महाराज! इस यन्त्र में यह विशेषता है कि एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है, और उस मानव के गमन करने के पश्चात् मानो देखो मेरा यह यन्त्र उस मानव का चित्र ले लेता है''। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा—''धन्य है। ऋषिवर! एक वेद-मन्त्र का, एक वेद-मन्त्र की आख्यिका का मानो समाधान हुआ।'' और उन्होंने यह कहा—''यही मन्त्र कहता है, 'मंगलं ब्रहे स्वस्तप्रव्हा वृत्तो धननम्' मानो देखो उसके चित्र गति करते रहते हैं, तो यह चित्रावलियों में मानो तुमने दृष्टिपात् कराया।'' मेरे प्यारे! ऋषियों ने एक स्वर में हर्ष-ध्वनि की कि—''धन्य है, ऋषिवर!''

## रक्त-बिन्दु में मानव-चित्रों का दर्शन

मेरे प्यारे! देखो द्वितीय विज्ञानशाला में ले गये। उन वैज्ञानिक यन्त्रों में यह विशेषता थी कि मेरे प्यारे! देखो 'बह्मे कृतं ब्रव्हा अस्सुतं बिन्दु वर्णस्सुते आत्यातां लोका विश्वे कर्म ब्रह्मे लोकाः' क्योंकि वह जो परमात्मा विश्वकर्मा है वह एक बिन्दु से ही मानव के शरीर का निर्माण

करता है। तो मेरे प्यारे! उसमें कैसे करता है? भारद्वाज मुनि ने कहा–"आओ, महाराज! ये मेरे यन्त्र विद्यमान हैं, इन यन्त्रों में यह विशेषता है कि एक मानव का रक्त का बिन्दु है और रक्त के बिन्दु को इस यन्त्र में जब प्रवेश किया जाता है तो उस रक्त के बिन्दु से यह जो मेरी चित्रावली है, यन्त्रशाला है, जिस मानव का वह रक्त का बिन्दु है, मानो देखो उस मानव का साक्षात्कार चित्र मेरे यन्त्र में आ जाता है।" मेरे प्यारे एक बिन्दु से ही, मुनिवरो! देखो मानव का चित्र यन्त्रो में आना, यह महर्षि भारद्वाज मुनि ने वर्णन कराया और भारद्वाज मुनि ने कहा कि–"महाराज! तुमने यह दृष्टिपात् किया होगा, जो मैं दृष्टिपात् करा रहा हूँ। मैंने तुम्हें यह गाथा प्रकट करा दी है। एक समय दद्दड़ गोत्रीय सोमकेतु ऋषि महाराज के हृदय में यह आकांक्षा उत्पन्न हुई कि मैं अपने चौथे महापिता का दर्शन करना चाहता हूँ तो मानो एक समय वह अपने चौथे महापिता उससे भी पूर्व जो पूर्वज हुए उनके वस्त्रो को अपनी मानो एक शाला में दृष्टिपात् कर रहे थे। तो कहीं उनके चौथे महापिता थे, उनका कहीं एक वस्त्र उन्हें प्राप्त हो गया और उस वस्त्र पर एक रक्त का बिन्दु मानो लगा हुआ था उस रक्त के बिन्दु वाले उस वस्त्र को ले करके मानो सोमकेतु ऋषि महाराज एक समय मेरे आश्रम में आ पहुंचे।" भारद्वाज ने कहा कि–"महाराज! जब वे आश्रम में आ गये तो जब यन्त्रों में मैंने दृष्टिपात् कराया इसी यन्त्र से उस रक्त के बिन्दु से उसके मानो देखो चौथे महापिता, जिसके मृतक हुए भी मानो देखो लगभग अस्सी वर्ष हो गए थे, उस मानव का उस वस्त्र पर रक्त का बिन्दु और, मुनिवरो! देखो सोमकेतु ऋषि महाराज अपने चौथे महापिता के मानो देखो यन्त्र में दिग्दर्शन कर रहे थे। मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या कि एक रक्त के बिन्दु में इतने परमाणु होते है,

इतने मानो देखो अणु होते है जिससे माता के गर्भस्थल में मानव का निर्माण होता है।

**मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या है? आज जब हम यह विचार-विनिमय करते हैं कि वह मेरा देव कितना विचित्र है, कितना वैज्ञानिक है, जिसने सृष्टि के प्रारम्भ में बेटा! इस परमाणु-विद्या को निहित कर दिया, जिससे निर्माण होता है। माता के शरीर में जब यह रक्त का बिन्दु जाता है, तो बेटा! देखो बहत्तर करोड़ बहत्तर लाख दस हजार दौ सो दौ नाड़ियों का निर्माण हो जाता है। तो मेरे प्यारे! यह कौन कर रहा है? यह माता नहीं कर रही है, पितर नहीं कर रहा है, वह जो मेरा प्यारा विश्वकर्मा है, जो निर्माण करने वाला है जो संसार का निर्माणवेत्ता है, वह निर्माण कर रहा है।**

## चित्रावली विभ्राननी यन्त्र

आओ, मेरे प्यारे! मैं कहा चला गया हूँ, विचार-विनिमय क्या? मुनिवरो! देखो, भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि–"महाराज! यह मेरे यहाँ यन्त्रशाला है, इसको चित्रावली विभ्राननी यन्त्र कहते हैं। मानव का रक्त के बिन्दु से चित्र आता है, मानो देखो इसमें नाना चित्रावलियाँ आती रहती हैं।" उन्होंने और भी नाना चित्रावलियों का दिग्दर्शन कराया। जो शब्द के साथ में चित्र अन्तरिक्ष में जाता है, बेटा! उसका चित्र अन्तरिक्ष में आ रहा था। विचार-विनिमय का जहां लय हो रहा था, द्यौ-लोक में, अन्तरिक्ष और द्यौ-लोक में, बेटा! उनका चित्र उसी प्रकार दृष्टिपात् आ रहा था।

## वरुणास्त्र-विज्ञान

विचार-विनिमय क्या? ऋषि ने भ्रमण कराया और, मेरे प्यारे! वह वरूण-अस्त्रो में ले गये, जहाँ वरूणास्त्रों का निर्माण भारद्वाज मुनि महाराज ने, ब्रह्मचारिणी शबरी ने और देखो राजा रावण के विधाता कुम्भकरण भी उसी विज्ञानशाला में अपना कार्य करते रहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो उस विज्ञान शाला में जहाँ ब्रह्मचारी सुकेता भी अध्ययन करते रहते थे, मेरे प्यारे! देखो उन्होंने वहाँ, उस यन्त्रशाला में ले गये। उन्होंने कहा–"महाराज! मेरे यहाँ एक यन्त्र, मैंने निर्माणित किया है, एक यन्त्र इतना मानो मैंने एक में दोनों शक्ति का प्रतिपादन कर दिया है। यदि किसी भी काल में इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जायेगा, तो पच्चीस राष्ट्रों का यह एक यन्त्र विनाश कर देगा।" मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि महाराज ने अणुशक्ति का उन्हें दिग्दर्शन कराया। उन्होंने कहा कि–"महाराज! यह वरूणास्त्र है, इस वरूणास्त्र में यह है कि मानो यदि इसको वायुमण्डल में त्याग दिया जाये और राष्ट्रों में अग्नि प्रदीप्त हो गई है यन्त्रों से, तो यह वरूणास्त्र मानो उस अग्नि को शान्त कर सकता है। मानो यह शान्त करने वाला है। जैसा मैंने यन्त्र को वायुमण्डल में त्याग दिया और पच्चीसराष्ट्रों का विनाश होने जा रहा है, परन्तु उसके साथ ही यदि मैं वरूणास्त्र को त्यागूंगा तो यह उस अग्नि को अपने में धारण कर लेगा और धारण करके उस अग्नि को नहीं लगने देगा। वह मानो उनकी रक्षा कर सकता है।

## भारद्वाज का लोकान्तर-विमानन-विज्ञान

मेरे प्यारे! उन्होंने आगे दिग्दर्शन कराया कि–"महाराज! मेरे यहाँ यह यन्त्रशाला है। इन यन्त्रों में यह है कि एक-एक यन्त्र वायुमण्डल में

गति कर रहा है, उनकी छाया मेरे यन्त्रों में आ रही है। मानो एक यन्त्र है मेरा, जो सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है, जो बृहस्पति की परिक्रमा कर रहा है, एक यन्त्र है जो मंगल की परिक्रमा करके बुधमण्डल में उसकी स्थिति हो जाती है। मानो देखो, वह यन्त्र और उनकी छाया मेरी इस विज्ञानशाला में आ रही है। यन्त्र आ रहे हैं, उनके क्रियाकलाप आ रहे हैं। किस प्रकार का प्राणी कहाँ-कहाँ वास करता है, कौन-कौन से लोक में किस प्रकार का क्रियाकलाप है, मानो उनके चित्र, मेरे यहाँ आते रहते हैं।

मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि महाराज ने जब यह दिग्दर्शन कराया तो, मुनिवरो! मुझे स्मरण है, मेरे पुत्रो! देखो, सब ऋषि आश्चर्य चकित हो गये और यह कहा—"हे भारद्वाज! तुम्हारा बड़ा 'सौभग्यं ब्रह्मे वर्णः' हम आज बड़े प्रसन्न हैं, क्योंकि तुमने हमें वह दिग्दर्शन कराया जिसको हम वेदों में, दर्शनों में अध्ययन करते रहते हैं और विचारते रहते थे"। तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या, उन्होंने और भी उन्हें दिग्दर्शन कराया, नाना प्रकार के यन्त्रों को दृष्टिपात् कराने लगे|नाना यन्त्रों को दृष्टिपात् कराते हुए उन्होंने कहा—"मेरे यहाँ एक यान ऐसा है, जिस यान में मानव विराजमान हो करके पृथ्वी मण्डल से उड़ान उड़ता है, पृथ्वी से उड़ता है वह मानो देखो चन्द्रमा में चला जाता है, चन्द्रमा से उड़ान उड़ी मंगल में चला गया, मंगल से उड़ान उड़ी बृहस्पति में चला गया, बृहस्पति से उड़ान उड़ी, महेशकेतिमण्डलों में चला गया। वहाँ से उड़ान उड़ी स्वाति-मण्डल में पहुँच गया, स्वाति-मण्डल से उड़ान उड़ी तो रोहिणीमण्डलों में चला गया, रोहिणी-मण्डलों से उड़ान उड़ी शनि की परिक्रमा करके बहत्तर लोको का भ्रमण करके वह यान पुनः मेरे पृथ्वी मण्डल पर आ गया"। तो विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! आज मैं यह

क्या उच्चारण कर रहा हूँ कि यह जो विज्ञान है, बेटा ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में परम्परागतों से, मुनिवरो देखो नृत्य करता रहा है, मानो देखो आभा में परिणित होता रहा है।

## वैज्ञानिक भारद्वाज के निर्माण में वसुन्धरावाद

आओ, मेरे प्यारे! जो मैं उच्चारण करने जा रहा हूँ वह क्या कि जब ऋषि-मुनियों ने बेटा! उस विज्ञान शाला को दृष्टिपात् किया और वह दृष्टिपात् करके, बेटा! मौन हो गये। अणु परमाणु, महापरमाणु, तिस्रेणु इत्यादियों का उन्होंने सर्वत्र दिग्दर्शन किया। दर्शन करने के पश्चात्, मेरे प्यारे! देखो वह शान्त हो गये। तो महर्षि प्रवाहण और महर्षि शिलभ दोनों सभा में उपस्थित हुए और दोनों ने एक स्वर में आ करके भारद्वाज मुनि से एक प्रश्न किया और भारद्वाज से कहा कि–"प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं, हमारी एक प्रवल इच्छा रही है, हम यह जानना चाहते हैं कि यह जो तुम्हारा वंशलज है, यह भारद्वाज कहलाता है और भारद्वाज गोत्रों का जो निकास है वह मानो देखो दद्धड़ीय गोत्रों से हुआ है, दद्धड़ीय गोत्रों का निकास हारिद्रत गोत्रों से हुआ है, हारिद्रत गोत्रों का निकास अंगिरसगोत्रों से हुआ है, अंगिरस गोत्रों का निकास मानो देखो ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है। हम यह जानना और चाहते हैं कि तुम्हारे इस वंशलज में मानो कोई भी ऐसा पुरुष नहीं हुआ जो वैज्ञानिक हुआ हो, जो परमाणु विद्या को जानने वाला हो, परन्तु यह तुम्हारे हृदय में जो प्रेरणा जागरुक हुई है, विज्ञान की, यह कहाँ से जागरुक हुई है? यह कहाँ से हुई?" मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि महाराज क्योंकि उनका नामोकरण श्वेता-श्वेतर भारद्वाज था, श्वेता-श्वेतर भारद्वाज ने कहा–"कि तुम्हारा प्रश्न मानो यह बड़ा विचित्र और कठिन है, परन्तु देखो इसके 'उत्तरां ब्रह्माः परिणगति शुद्राः अग्राणं ब्रह्मः लोकां अश्वतकेतु'।"

उन्होंने कहा—"प्रभु! हम यह जानना और चाहते हैं कि इसका कुछ अनुमोदन कीजिए" मेरे प्यारे! भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि—"यह प्रेरणा जो मुझे प्राप्त हुई है,यह मेरी माता और पिता से यह प्रेरणा मुझे प्राप्त हुई। मेरी माता से मुझे यह मानो भान हुआ है। माता ने और पिता ने मुझे यह वर्णन कराया है कि वास्तव में 'ब्रह्मे क्रतां देवाः हिरण्य रथः' "। वेद के आचार्य ने कहा है, भारद्वाज मुनि ने कहा—"महाराज! यह प्रेरणा मुझे मेरे माता-पिता से प्राप्त हुई।" उन्होंने कहा—"यह कैसे हुई?" तो भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना साहित्य प्रकट करना प्रारम्भ किया।

## पितर याग दृष्टान्त

उन्होंने कहा कि—"एक समय मेरे पिता का नामोकरण तो आप ने श्रवण किया होगा उनका नाम रेंगणी भारद्वाज था। महर्षि रेंगणी भारद्वाज, मेरे पिता और मेरी माता स्वेलता, दोनों एक समय एक स्थान पर विद्यमान थे। माता से कहा—"सम्भवा ब्रह्मे अस्वतं पितरो", उन्होंने कहा कि देवी हमारी इच्छा ऐसी है, कि हम पितरयाग करना चाहते हैं। हमारे पितर याग की हमारे हृदय में प्रेरणा जागरूक हुई है और हमारी इच्छा यह है कि हम पितरयाग करना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देखो उस समय मेरी अवस्था केवल तीन वर्ष और चार दिवस की आयु थी/मानो देखो माता ने जिस समय उन्हें पितरयाग करना था, प्रातःकालीन मेरे उदर की पूर्ति करते हुए माता ने मानो मैं आंगन में क्रीड़ा करने लगा और माता-पिता ने मानो देवयाग किया और पितरयाग के लिए नाना पितर, उनके पिता, महापिता, प्रपिता जो संसार में थे, परन्तु उनको निमन्त्रण दे करके उनका स्वागत किया और स्वागत करने के पश्चात् मानो देखो अपना उन्होंने प्रस्थान किया।

मैं उस समय पिता के आंगन में क्रीड़ा कर रहा था। पिता ने कहा—"हे बालक! तुमने, हे श्वेता-श्वेतर, तुमने अन्न इत्यादि का पान किया अथवा नहीं? परन्तु देखो उस समय मैंने एक वाक्य मिथ्या उच्चारण किया कि मैंने अन्न को नहीं पान किया।" उस समय पिता ने कहा—"हे देवी! तुमने बालक को अन्न-पान नहीं कराया।" माता ने कहा कि—"मैंने इसके उदर की पूर्ति की है, मानो मैंने अन्न को पान कराया है।" तो उस समय माता ने यह कहा—" 'सम्भवो मिथ्यां ब्रह्मे' यह मिथ्या उच्चारण कर रहा है?" परन्तु मेरे पिता ने उस समय यह कहा—"हे बालक! तू दुर्भागी है, हमारे वंशलज में कोई भी मानव मिथ्यावादी नहीं हुआ, मानो एक तू मिथ्या उच्चारण कर रहा है! यह हमारे गृह का बड़ा दुर्भाग्य है!" क्योंकि जिस गृह में मिथ्यावादी पुत्रों का जन्म होता है, वह मानो देखो गृह अपवित्र हो जाता है। जिस राजा के राष्ट्र में राष्ट्र मिथ्यावादी होता है, वह राष्ट्र अपवित्र हो जाता है। समाज मानो देखो असामाजिक हो जाता है। "हे बालक! ब्रह्मे वर्णाः" परन्तु उस समय माता ने कहा—"हे बालक! यह माता के गर्भ का मानो दुर्भाग्य है, जिस माता के गर्भ से मिथ्यावादी पुत्रों का जन्म होता है, वह माता बड़ी दुर्भाग्यशालिनी है! मानो देखो उससे दुर्भागी कौन हो सकता है? उस माता का गर्भाशय अपवित्र हो जाता है। हे बालक! तू मानो मिथ्या उच्चारण कर रहा है"।

तो मुनिवरो! भारद्वाज मुनि कहते हैं कि "हे ऋषियो! उसी समय से मेरे माता-पिता की वह प्रेरणा मानो वह शब्द मेरे अन्तः करण में अंकित हो गये। अंकित हो जाने के पश्चात् मानो कुछ समय के पश्चात् मेरे पितर ने, रेंगणी भारद्वाज ने मेरा प्रवेश महर्षि तत्वमुनि महाराज के आश्रम में कराया और महर्षि तत्व मुनि महाराज के यहाँ जब मैं

अध्ययन करने लगा तो मेरे अध्ययन करने की जो प्रणाली मानो वही रही। परमाणु विद्या के ऊपर मेरा अधिपथ्य होने लगा। जब परीक्षा होती तो मानो कुछ पुनः ब्रह्मचारियों से मैं प्रथम आता रहा कुछ में द्वितीय आता रहा परन्तु देखो जब परीक्षा फल प्राप्त होता मैं प्रथम होता। परन्तु समय व्यतीत होता रहा।"

## भारद्वाज को दीक्षान्त-उपदेश

"समय आया, 'ब्रह्मे वर्णनम्', जब मैंने सर्वत्र विद्या को मानो अध्ययन कर लिया, परमाणु विद्या के ऊपर मेरा आधिपथ्य रहा। मैं परमाणु विद्या में परायण होने लगा। तो उस समय मानो देखो जब मैं विद्यालय को त्यागने लगा पूर्णता को प्राप्त करके, तो उस समय आचार्य ने उस समय दीक्षांत उपदेश दिया, महर्षि तत्व मुनि महाराज दौ सौ चौरासी वर्ष के अखण्ड ब्रह्मचारी थे, 'ब्रह्मे ब्रह्मवर्चोसी ब्रह्मा ब्रह्म लोकां देवः', मुनिवरो! देखो उस समय तत्व मुनि महाराज ने मुझे दीक्षांत उपदेश दिया और दीक्षांत में यह कहा–"हे ब्रह्मचारी! आज तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो मानो तुम्हें कुछ अपना मैं उपदेश देता हूँ। जो मैंने निगली हुई विद्या है उसे मैं वमन करके मानो तुम्हें श्रवण करा रहा हूँ। हे बालक! हे ब्रह्मचारी! देखो अब तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो, यह विद्यालय तुम्हें स्मरण रहे। मस्तिष्क में, तुम्हारे हृदय में इसका स्थान रहे कि मैंने उस विद्यालय में अध्ययन किया है, मुझे उसको विचारना है उसकी उन्नत होने की प्रवृत्ति मेरे हृदय में होनी चाहिए। हे ब्रह्मचारी! सबसे प्रथम, मानो उस भूमि पर जिस भूमि पर तुमने विद्या अध्ययन की है उसका तुम्हारे हृदय में मानो तुम्हारा स्थान होना चाहिए और द्वितीय यह कि तुम ब्रह्मचारी रहो।"

## ब्रह्मचारी और ब्रह्मचरिष्यामि

ब्रह्मचारी कौन होता है? वेद का आचार्य कहता है, मन्त्र कहता है, 'ब्रह्मवर्चोसी दिव्यं लोकः', ब्रह्मचारी कौन है? जो ब्रह्मवर्चोसी बनता है। ब्रह्मवर्चोसी कौन है? जो मानो देखो प्रकृति के तथ्यों को जान करके और देखो ब्रह्म की आभा को जानता है। ब्रह्मचर्य के दो ही शब्द हैं, ब्रह्म और चरि/ब्रह्म कहते हैं, परमात्मा को और चरि कहते हैं, प्रकृति को। मेरे पुत्रो! देखो वह, जो मानव इनको अंगों और उपांगों से जानता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है।

'ब्रह्मचरिष्यामि ब्रह्मः ब्रह्म-लोकां ब्रह्मे' प्रत्येक इन्द्री, बेटा! देखो ब्रह्म में पिरोई हुई जब मानव की होती है, तो बेटा! ब्रह्मवर्चोसी बनता है। वह ब्रह्मचारी बन करके अपने मानवीय जीवन को महान् बनाता है। आचार्य कहता है—"हे ब्रह्मचारी! तुम ब्रह्मचर्य से रहो। परन्तु देखो गृह में, तुम पुत्र कामना भी उत्पन्न हो तो 'पुत्राणं ब्रह्मे वर्णस्सुतः' उस समय देखो तुम्हारा ब्रह्मचर्य केवल उद्देश्य के लिए होना चाहिए।" यह उपदेश दे करके, मेरे पुत्रो! देखो द्वितीय-तृतीय में कहने लगे कि "हे ब्रह्मचारी! तुमने परमाणु-विद्या का अध्ययन किया है, तुम्हें मानो अणुशक्ति के ऊपर अनुसन्धान करना है, तुम्हें अपने जीवन को महान् बनाते हुए तपस्वी बनाते हुए तुम्हें मानो अणु-परमाणु और यन्त्र-शालाओं में पहुंचना है और उनमें प्रवेश करके तुम्हें अन्तरिक्ष की यात्रा करनी है। वेद के मन्त्रों का उपदेश इतना ही है— हे ब्रह्मचारी! तुम मानो विद्या का अध्ययन करते हुए अपने में दुरुपयोग नहीं होना चाहिए, विज्ञान का दुरुपयोग नहीं होना चाहिए।"

मेरे पुत्रो! देखो यह उपदेश महर्षि भारद्वाज मुनि को, मुनिवरो!

देखो तत्त्व मुनि महाराज ने यह दीक्षांत उन्हें उपदेश दिया और दीक्षांत उपदेश दे करके मुनिवरो! ऋषि मौन हो गये। और, मुनिवरो! देखो भारद्वाज कहते है–''मैंने वहाँ से प्रस्थान किया, मैं सोमकृति भानु राजा के समीप जा पहुंचा। सोमकृति भानु मानो देखो 'वाण प्रव्हे', वह अपनी स्थलियों पर विद्यमान थे। जब मैं राष्ट्र में पहुंचा तो सोमकेतु जी ने मानो आसन को त्याग करके कहा–''आओ, ब्रह्मचारी! आओ, आओ, ब्रह्मचारी! पधारो। क्योंकि मेरी ख्याति हो गई थी, तो मैंने उनसे कहा कि– मैं मानो देखो उस परमाणु-शक्ति की और यज्ञशाला का निर्माण करना चाहता हूँ यज्ञशाला के पश्चात् विज्ञानशाला का निर्माण चाहता हूँ, मुझे सहायता दें।'' तो राजा ने मुझे सहायता दी और सहायता का परिणाम यह हुआ कि मैं जिस धातु-पिपाद को जानता हूँ, उसी के ऊपर अनुसन्धान हो जाता है। मैंने इस विद्या को मानो देखो ऋषियों से जाना हैं। मेरे पुत्रो! देखो यह वाक्य उच्चारण करते हुए ऋषि ने कहा कि महाराज! यह जो प्रेरणा है, यह मुझे मेरे माता-पिता से प्राप्त हुई। माता-पिता, यदि माता यह चाहती है **कि मेरा पुत्र महान् बन जाये तो माता अपने गर्भाशय में शिक्षा देना प्रारम्भ कर देती है। मेरे प्यारे! लोरियों का पान कराती रहती है और कहती है 'बुद्धोऽसि, शुद्धोऽसि, निरञ्जनोऽसि'। वह कहती है, आत्मा तू शुद्ध है, निरंजन है, अखण्ड रहने वाली है, तुम मानो देखो इस शरीर में वास कर रही हो, मेरे प्यारे! देखो अज्ञान नहीं भासता उसके द्वारा। विचार क्या है, मुनिवरो! यह संस्कार कौन, माता देती ही रहती है। माता अपने बाल्य को मानो महान् बना देती है। तो मुनिवरो! विचार वेद का वेद का मन्त्र क्या कहता है? वेद का आचार्य कहता है, वह मेरी प्यारी माँ वसुन्धरा कहलाती है जो**

**माता मानो देखो वसुन्धरा अपने को स्वीकार करती है। अपने मानवीय तथ्यो को जानने लगती है**

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया। आज तुम्हें मैं मानो कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, परन्तु देखो यह केवल परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय क्या है कि हम अपने मानव-जीवन को अच्छी प्रकार जानने वाले बनें और ज्ञान और विज्ञान को जानते हुए इस संसार-सागर से जो यह संसार मानो एक सागर की भांति मानो हमें प्रेरणा दे रहा है, उसे हमें अच्छी प्रकार जानना है। जिस को जान करके हम अपनी मानवीयता, आभा में परिणित होते हुए अपने जीवन को महान् बनाते हुए इस संसार की आभाओं से पार हो जायें आओ मेरे प्यारे! ऋषि ने, बेटा! जब यह परिचय दिया तो ऋषि मौन हो गये। उन्होंने कहा—"धन्य है, ऋषिवर! तुम्हें धन्य है! क्योंकि तुम्हारा गोत्र परम्परागतों से एक महान् चला आ रहा है, विचित्रता में परिणित रहा है। मानो आज हमें यह प्रतीत हुआ है कि तुम्हारा जो अध्ययन है, वेद की आभाओं का वह क्रियात्मक है, मेरे प्यारे! मानव को अपने जीवन को क्रियात्मक बनाते हुए इस सागर से पार हो जाना चाहिए। जो यह संसार रूपी सागर है, कहीं मान की तरंगें आ रही है, तो कहीं अपमान की तरंगे आ रही हैं, इस मान और अपमान की तरंगों से मुनिवरो! देखो मानव को उपराम होना है।

(शेष प्रवचन प्राप्त नहीं हुआ)

१६-७-८२

देखो तत्त्व मुनि महाराज ने यह दीक्षांत उन्हें उपदेश दिया और दीक्षांत उपदेश दे करके मुनिवरो! ऋषि मौन हो गये। और, मुनिवरो! देखो भारद्वाज कहते है—"मैंने वहाँ से प्रस्थान किया, मैं सोमकृति भानु राजा के समीप जा पहुंचा। सोमकृति भानु मानो देखो 'वाण प्रव्हे', वह अपनी स्थलियों पर विद्यमान थे। जब मैं राष्ट्र में पहुंचा तो सोमकेतु जी ने मानो आसन को त्याग करके कहा—"आओ, ब्रह्मचारी! आओ, आओ, ब्रह्मचारी! पधारो! क्योंकि मेरी ख्याति हो गई थी, तो मैंने उनसे कहा कि— मैं मानो देखो उस परमाणु-शक्ति की और यज्ञशाला का निर्माण करना चाहता हूँ यज्ञशाला के पश्चात् विज्ञानशाला का निर्माण चाहता हूँ, मुझे सहायता दें।" तो राजा ने मुझे सहायता दी और सहायता का परिणाम यह हुआ कि मैं जिस धातु-पियाद को जानता हूँ, उसी के ऊपर अनुसन्धान हो जाता है। मैंने इस विद्या को मानो देखो ऋषियों से जाना है। मेरे पुत्रो! देखो यह वाक्य उच्चारण करते हुए ऋषि ने कहा कि महाराज! यह जो प्रेरणा है, यह मुझे मेरे माता-पिता से प्राप्त हुई। माता-पिता, यदि माता यह चाहती है **कि मेरा पुत्र महान् बन जाये तो माता अपने गर्भाशय में शिक्षा देना प्रारम्भ कर देती है। मेरे प्यारे! लोरियों का पान कराती रहती है और कहती है 'बुद्धोऽसि, शुद्धोऽसि, निरञ्जनोऽसि'। वह कहती है, आत्मा तू शुद्ध है, निरंजन है, अखण्ड रहने वाली है, तुम मानो देखो इस शरीर में वास कर रही हो, मेरे प्यारे! देखो अज्ञान नहीं भासता उसके द्वारा। विचार क्या है, मुनिवरो! यह संस्कार कौन, माता देती ही रहती है। माता अपने बाल्य को मानो महान् बना देती है। तो मुनिवरो! विचार वेद का वेद का मन्त्र क्या कहता है? वेद का आचार्य कहता है, वह मेरी प्यारी माँ वसुन्धरा कहलाती है जो**

**माता मानो देखो वसुन्धरा अपने को स्वीकार करती है। अपने मानवीय तथ्यो को जानने लगती है**

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया। आज तुम्हें मैं मानो कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, परन्तु देखो यह केवल परिचय देने के लिए आया हूँ और वह परिचय क्या है कि हम अपने मानव-जीवन को अच्छी प्रकार जानने वाले बनें और ज्ञान और विज्ञान को जानते हुए इस संसार-सागर से जो यह संसार मानो एक सागर की भांति मानो हमें प्रेरणा दे रहा है, उसे हमें अच्छी प्रकार जानना है। जिस को जान करके हम अपनी मानवीयता, आभा में परिणित होते हुए अपने जीवन को महान् बनाते हुए इस संसार की आभाओं से पार हो जायें आओ मेरे प्यारे! ऋषि ने, बेटा! जब यह परिचय दिया तो ऋषि मौन हो गये। उन्होंने कहा—"धन्य है, ऋषिवर! तुम्हें धन्य है! क्योंकि तुम्हारा गोत्र परम्परागतों से एक महान् चला आ रहा है, विचित्रता में परिणित रहा है। मानो आज हमें यह प्रतीत हुआ है कि तुम्हारा जो अध्ययन है, वेद की आभाओं का वह क्रियात्मक है, मेरे प्यारे! मानव को अपने जीवन को क्रियात्मक बनाते हुए इस सागर से पार हो जाना चाहिए। जो यह संसार रूपी सागर है, कहीं मान की तरंगें आ रही है, तो कहीं अपमान की तरंगे आ रही हैं, इस मान और अपमान की तरंगों से मुनिवरो! देखो मानव को उपराम होना है।

(शेष प्रवचन प्राप्त नहीं हुआ)

१६-७-८२

# प्राणसत्ता और दीपराग

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है; क्योंकि वह परमपिता परमात्मा प्राणेश्वर कहलाते हैं। मानो उसके नाना प्रकार के नामोकरण हैं और उसकी आभा में मानव सदैव गमन करता रहा है और यह विचारता रहा है कि वह परमपिता परमात्मा जो अनूठा है, मानो जिसका ज्ञान और विज्ञान अनन्तमयी माना गया है और जिसका यह ब्रह्माण्ड, एक-एक परमाणु ब्रह्माण्ड का, उसका वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का गुणवादन और उसकी महत्ती में वह सदैव रत्त हो रहा है।

आओ, मेरे पुत्रो! वह परमपिता परमात्मा जो वेदज्ञ कहलाता है अथवा जो वेद-मन्त्रों की प्रतिभा में मानो निहित रहता है और प्रत्येक वेद-मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है। **आज, बेटा! साधकों के सम्बन्ध में हमारा वेद-मन्त्र हमें प्रेरणा दे रहा है, जो परमपिता परमात्मा ही प्रेरणा देते रहते हैं और उसी प्रेरणा के मूल में मानव अपने में रत्त होता रहा है और गतिवान होता रहा है और यह विचारता रहा है कि मैं उस परमपिता परमात्मा के अमूल्य क्षेत्र में विद्यमान हूँ। जब, मुनिवरो! देखो मानव यह अपने में स्वीकार कर लेता है तो वह उस परमपिता परमात्मा की अनन्तता को अपने में दृष्टिपात् करने लगता है।**

## मन और प्राण

आओ, मेरे पुत्रो ! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं प्रकट करूंगा । केवल यह, मुनिवरो ! देखो हम इससे पूर्व काल में महापुरुषों की चर्चा कर रहे थे और सुनीति इत्यादि ऋषियों की चर्चाएँ, जिनका ज्ञान और विज्ञान बड़ा नितान्त माना गया है । मानव एक-एक वेद-मन्त्र के ऊपर प्रायः अपने में अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मैं उस परमपिता-परमात्मा को प्राप्त करना चाहता हूँ । परन्तु वह परमात्मा को कैसे प्राप्त करना चाहता है? इस सम्बन्ध में नाना प्रकार का अपना एक विचार-विनिमय होता रहा है । **मेरे प्यारे ! देखो, हमारे मानवीयत्त्व में एक मनस्त्व कहलाता है, एक प्राणस्त्व कहलाता है । मानो दोनों का ही तो विभक्त और विभाजन हो रहा है । उसको एक सूत्र में लाने के लिये मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही प्रयत्न करता रहा है और उसे एक सूत्र में लाना चाहता है । परन्तु जब इनका एक सूत्र बन जाता है, तो मानव अपने को अर्वचनीय स्वीकार करने लगता है ।**

## सतोयुगीय प्राण-विद्या-चर्चा

बेटा ! मैं इस सम्बन्ध में आज विशेषता में नहीं, कल हम सुनीति ऋषि की चर्चा कर रहे थे । सुनीति मुनि के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे और उनकी अध्ययन कराने की बड़ी विचित्र शैली रही है । उस शैली के आधार पर वह अपने में ही अपने ब्रह्मचारियों को, साधकों को शिक्षा देते रहते थे । मेरे प्यारे ! देखो, एक तो यह (चर्चा रही) और मैं आज तुम्हें सतोयुग के काल में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ, मुनिवरो ! देखो, इस अयोध्या की प्रतिभा बड़ी विचित्र मानी गई है, क्योंकि अयोध्या का निर्माण

भगवान मनु ने किया था और, मुनिवरो! देखो, इसमें अनन्य राजा हुए हैं, नाना राष्ट्रवेत्ता हुए, परन्तु उन राष्ट्रवेत्ताओं में एक राजा पुष्कर हुआ और उन्हीं का विधाता राजा नल हुआ, तो मुनिवरो! देखो, ये अपने में अयोध्या के राजा बने हैं और देखो 'ब्रह्मणे ब्रहः सम्भवः' ऐसा मुझे स्मरण आ रहा है, ऐसा, मुनिवरो! देखो, अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ कि राजा नल को एक विद्या आती थी और उस विद्या का नाम मानो देखो दीपक राग था। **दीपक एक गायन था। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के गायनों का वर्णन आता रहता है, नाना गायन होते हैं, जैसे खेचरी मुद्रा में गान गाया जाता है, मानो जैसे अप्रति लोकों में गान गाया जाता है, जिससे मानव अपने में मानवीयता को धारण करता रहा है।**

मेरे पुत्रो! देखो 'ब्रह्मणे ब्रहे' राजा नल भी इसी प्रकार जब उनका बाल्यकाल था, ब्रह्मचर्य का काल था, उस समय, मेरे पुत्रो! देखो, महाराजा नल के पिता ने, उस स्वातु ने, बेटा! देखो स्वातु नाम के राजा हुए जो उनके पिता कहलाते थे, तो मुनिवरो! देखो, उन्होंने 'ब्रह्मणे कृतम्' उसका राज तो अपने 'विधाता ब्रहे' दोनों पुत्रों को (प्रदान कर दिया था) मुनिवरो! देखो सौद्रुतक राजा के यहाँ भयंकर वनों में एक मानो देखो ऋषि वास करते थे और उस ऋषि का नाम था कुक्कोट ऋषि महाराज। मेरे प्यारे! देखो वह कुक्कोट ऋषि महाराज थे। राजा रावण के राष्ट्र में भी महात्मा कुक्कुट मुनि हुए हैं, परन्तु यह कुक्कोट मुनि कहलाते थे, जो मेरे प्यारे! देखो, भयंकर वनों में पत्रों-पुष्पों को पान करते थे, नाना वनस्पतियों का अध्ययन करते रहते, उसको पान करते रहते, परन्तु वह अपने में प्राण-विद्या के ऊपर अध्ययन करते रहते।

## कुक्कोट-आश्रम में नल द्वारा दीपरागाध्ययन

मेरे प्यारे! देखो, महात्मा कुक्कोट ऋषि महाराज एक समय अपने आश्रम में अध्ययन कर रहे थे, वेद-मन्त्रों का अध्ययन और यह कि 'प्राणं ब्रह्मणे प्राणस्तुतं लोकाम्', कि **इस प्राण को जानना है, जिससे हमारा जीवन संचालित हो रहा है, जो प्राणसूत्र है देखो जिसमें यह ब्रह्माण्ड पिरोया हुआ है, यह ब्रह्म-सूत्र में अपने में सूत्रित हो रहा है।** मेरे प्यारे! देखो उन्होंने यह गान गाया तो महात्मा कुक्कोट ऋषि महाराज, मेरे पुत्रो! देखो अपने आसन् पर विद्यमान हुए। जब विद्यमान थे तो राजा दोनों ब्रह्मचारियों को ऋषि के आसन् पर ले गये और ऋषि से कहा—"हे प्रभु! ये दोनों मेरे राजकुमार हैं। मैं इनको देखो, प्राण-विद्या और देखो दीपावली के एक राग में मानो देखो इन ब्रह्मचारियों को मैं दृष्टिपात् करना चाहता हूँ।" मेरे प्यारे! उन्होंने कहा—"यह तो हमारा सौभाग्य है।" और भी नाना ब्रह्मचारी उनके यहाँ अध्ययन करते रहते थे। परन्तु जब राजा ने 'अमृतम्' राजा ने, बेटा! देखो 'ब्रीहि' सौनकेतु राजा ने, बेटा! देखो ब्रह्मचारियों को त्याग दिया तो उन्हें, बेटा! देखो 'दीपमालिका' के अध्ययन के लिये, जो वेद-मन्त्रों में गायन रूपों से, बेटा! गान के रूप में वर्णित की गई है, तो मुनिवरो! देखो वे अपने में विद्यमान हो गये, एक पंक्ति में।

## दीपक-राग-विद्या

ऋषि ब्रह्मचारियों को अध्ययन कराते रहते और कहते—"हे ब्रह्मचारियो! आओ, तुम 'ब्रह्मणे कृतम्' देखो प्राणविद्या को पाना चाहते हो।" मेरे प्यारे! देखो, पुष्कर राज तो मानो देखो दूसरे ज्ञान में चले गये, वह तो वृष्टि को प्राण की सत्ता के द्वारा अनावृष्टि के रूप में मानो देखो लाना चाहते थे, तो वह तो उस रूप में चले गये, परन्तु देखो नल अपने

में अध्ययन करते रहते बड़ी कुशलता से और वह, मुनिवरो! 'उस' विद्या का अध्ययन करते रहे। मुनिवरो! देखो, उसके गान गाने से मानो देखो 'दीपावली', दीपकों का प्रकाश हो जाये और गृह और नगर, मुनिवरो! देखो, प्रकाशित हो जायें, ऐसा मानो देखो उनके यहाँ एक विद्या थी। यह विद्या, बेटा! प्राण-विद्या कहलाती है।

**हमारे यहाँ, जब प्राण को अपान में परिणित किया जाता है, तो मुनिवरो! देखो, आन्तरिक जगत् से अग्नि के रूप में, बेटा! देखो प्राण-सता अपने में ब्रोह होने लगती है और वह जो उद्गीत गाने लगती है तो मानो देखो वो उनके समीप जो दीप हैं,** वे प्रकाशित हो जाते हैं और वह दीपमालिका बन जाती है। और दीपमालिका को धारण करने के पश्चात्, मेरे प्यारे! देखो, मानव अपने में अश्वस करने लगता है। इसी प्रकार, महाराजा नल मानो देखो दीप-विद्या को जानते रहे। जानने वाले, बेटा! देखो जान ही लेते है। परन्तु और भी नाना प्रकार की विद्याओं को आचार्यो के समीप विद्यमान हो करके जाना जाता है। तो मुनिवरो! देखो, वह कुक्कोटेश्वर मुनि महाराज अपने में बड़े विचित्र महापुरुष थे, परन्तु देखो प्राण-विद्या को जानते थे, राजकुमारों को प्राण-विद्या देते परन्तु और भी राजकुमारों को ऋषि-परम्परा के आधार पर भी ब्रह्मचारियों को शिक्षा प्रदान करते रहते।

मेरे प्यारे! देखो, यही दीपावली का एक मैं तुम्हें गान रूप में वर्णन कर रहा हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, महाराजा नल देखो विद्या-अध्ययन करने में बड़े पूर्णत्त्व में रहे और उन्होंने प्राण विद्या को जाना। देखो वे, **मध्य रात्रि में, बेटा! जब प्राण को अपान में और अपान को उदान में प्रवेश कर देते तो आन्तरिक अग्नि प्रदीप्त हो जाती और वह प्रदीप्त हो करके वही, मुनिवरो! देखो वाणी की ऐसी तरंगों का जन्म होता,**

**ऐसी धाराओं का मुखारबिन्दु से जन्म होता कि वह, मुनिवरो! देखो दीपमालिका के रूप में प्रदीप्त हो जाती।** मेरे प्यारे! देखो, वे परमाणु अपनी संकल्प शक्ति के द्वारा मानो उद्बुद्ध होते रहे हैं।

## नल की प्राणविद्या-दीक्षा

मेरे पुत्रो! देखो जब 'अमृताम्' ऋषि ने इस विद्या का अध्ययन कराया तो अध्ययन कराने के पश्चात्, मुनिवरो! देखो, जब उन्हें दीक्षा प्रदान की गई तो उनके पिता राजा स्वातु मानो वह विद्यमान थे और उनकी मानो देखो दिव्य माता और, मुनिवरो! देखो, और भी राजा और, मुनिवरो! देखो एक उनका 'ब्रहे' जब उन्होंने, बेटा! देखो, दीपावली एक गान के रूप में गाना प्रारम्भ किया, तो बेटा! देखो दीपमालिका बन गई और दीपमालिका बन करके राजा बड़े हर्षित हुए और पिता ने अपने पुत्र को आशीष दे करके कहा कि—"तुम्हारा कल्याण हो!" और आचार्य ने कहा—"हे ब्रह्मचारी! अब तुम दीक्षित हो गये हो! अब तुम मानो देखो कहीं भी अपने गृह में प्रवेश कर सकते हो।"

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा नल ने उस विद्या को पान किया और वह विद्या, मुनिवरो! देखो अपने में बड़ी अनूठी रही है। प्राण की विद्या को पाना और उसका अध्ययन करना, बेटा! आचार्यों के मध्य में, यह मानो देखो उसके सौभाग्य की एक चुनौती मानी गई है। परन्तु देखो, जब उन्होंने इस विद्या का अध्ययन कर लिया अध्ययन करने के पश्चात् उनका गृह में प्रवेश हो गया। मेरे प्यारे! इस विद्या का अध्ययन करते हुए, मेरे पुत्रो! देखो मुझे स्मरण है, जब उनका संस्कार हो गया और पिता का निधन हो गया, राजा का निधन हो गया और देवी (माता) का भी निधन हो गया तो दोनों विधाता, पुष्कर राज और महाराजा नल, दोनों रह गये।

## नल का वन-प्रयाण

मेरे प्यारे! देखो, दोनों का, एक राज्यता के ऊपर उनका एक मानो संघर्ष हो गया और संघर्ष होने से वे मानो देखो इन्द्र की एक आभा को जानते थे। 'इन्द्र' कहते हैं वायु को और 'इन्द्र' कहते है देखो विद्युत को। यहाँ, मुनिवरो! देखो, इन्द्र के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं। परन्तु देखो इन्द्र जब अपने में द्रोह उन्होंने प्रथम किया तो, बेटा! वृष्टि प्रारम्भ हुई और वह इतनी घनित वृष्टि हुई कि मुनिवरो! देखो, घनिष्ठता में परिणित हो गई। मेरे प्यारे! देखो नल अपने में बड़ा 'हर्षित प्रहे' मेरे प्यारे! देखो उन्होंने अपने विधाता नल को किसी युक्तियों से उसे वन में परिणित कर दिया और यह कहा—"हे नल! तुम बारह वर्ष के लिए वन चले जाओ, अन्यथा मेरे क्रियाकलाप को दृष्टिपात् करो।"

मेरे प्यारे! देखो जब विनाश का समय होता है, तो बुद्धि मानो विपरीत हो जाती है, बुद्धि का मानो देखो, अपना रूप समाप्त हो जाता है, और वह मानव देखो स्वार्थवाद की प्रथा में परिणित हो जाता है। क्योंकि रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण, यह मुनिवरो! देखो परम्परागतों से मानवीयत्त्व में रत्त होते रहे हैं और मुनिवरो! देखो वही रजोगुण है, वही सतोगुण है और वही, मुनिवरो! देखो तमोगुण की प्रतिभा अपने में रत्त होती रहती है। तो मुनिवरो! देखो वह तमोगुण में परिणित हो करके रजोगुण की पुट लग करके दोनों में संघर्ष विशाल हुआ। नल तो मुनिवरो! देखो पराजय को प्राप्त हो गया। तो नल को, मुनिवरो! बारह वर्ष का वन दे दिया। पति-पत्नी दोनों, मेरे पुत्रो! देखो भयंकर वन में जा पहुंचे और भयंकर वनों से राजा नल ने यह कहा—"हे देवी! तुम अपने पिता के गृह में प्रवेश करो और मैं वन में मानो अपनी इस यातना को सहन और अपने में धारण कर सकूंगा।" मेरे प्यारे!

देवी ने वह स्वीकार नहीं किया। स्वीकार न करने से, मुनिवरो! देखो, साथ-साथ रही।

महाराजा नल एक समय मध्यरात्रि में अपनी पत्नी से ओझल हो गये और ओझल होने से, मुनिवरो! वह 'अमृताम्' देखो भयंकर वन में दूरी चले गये। प्रातः काल हुआ तो देवी ने विचारा कि, मेरा स्वामीत्व कहाँ है? मानो स्वामी उसे प्राप्त नहीं हुआ। अन्त में उन्होंने यह विचारा कि मैं 'ब्रहे' जहाँ मेरे बाल्य हैं, वहीं मेरा वास होगा। अपने पिता के गृह में उन्होंने प्रवेश किया। पिता ने कहा, सौनुक पिता ने कहा—"देवी! तुम इस प्रकार क्यों?" उन्होंने कहा—"नल को बारह वर्ष का वन मिल गया है और वह मानो देखो भयंकर वन में चले गये हैं। द्वितीय राष्ट्रों में गमन कर गये हैं।" मेरे प्यारे! देखो पुत्री का वहीं रहना एक ध्रुव-सत्य बन गया।

## प्रभु-आश्रय

मेरे प्यारे! देखो, वह वहाँ वास करने लगी, प्रभु का चिन्तन करते हुए, अपने जीवन को व्यतीत तो करना है—क्योंकि **मानव को या तो परमपिता परमात्मा का आश्रय होता है या समाज का आश्रय होता है। मेरे प्यारे! देखो समाज का आश्रय जब समाप्त हो जाता है, तो प्रभु का आश्रय ले लेना चाहिये और प्रभु के गुणों का गुणवादन करना चाहिये।** और उसके गुणों की जो शैली है धारण करने की, वह बड़ी विचित्र मानी गई। परमात्मा के राष्ट्र पर, परमात्मा का यह जो अनुठा जगत् है, इसके ऊपर दृष्टिगत करने लगें।

## परमात्मा के जगत् का दर्शन

मेरे प्यारे! देखो परमपिता परमात्मा का यह जो जगत् है, यह कैसा

है! इसमें कितने प्रकार की वायु है? कितने प्रकार की अग्नियाँ हैं? कितने प्रकार के मानो देखो इनमें कण विद्यमान रहते हैं? और, देखो जब अनुसन्धान करने वाले भिन्न-भिन्न प्रकार से, मुनिवरो! उसका अनुसन्धान करते हैं, तो परमात्मा का आश्रय एक महान् है। मानो देखो तारा मण्डलों को जब गणना में लाने के लिए मानव तत्पर होता है, तो मुनिवरो! देखो प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, इन पाँचों प्राणों को जान कर ही, मेरे पुत्रो! देखो अपने मानो 'ब्रहे कक्ष्वतं ब्रह्मे' मानो प्राणों से उसका समन्वय हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो यही विद्या, हमारे यहाँ बड़ी अनूठी मानी गई है। जब हम 'उसका' अनुसरण, देखो उसकी सृष्टि को निहारने लगते हैं और, मुनिवरो! देखो प्रत्येक परमाणु को अपने में लाना चाहते हैं तो विज्ञान में रत्त हो जाते हैं और विज्ञान की प्रतिभा में, मुनिवरो! देखो प्रतिष्ठित हो जाते हैं। तो **विचारना क्या है? मेरे प्यारे! हमें यह विचारना है कि हम परमपिता परमात्मा का आश्रय लें।** तो इसी प्रकार देवी दमयन्ती ने, मुनिवरो! देखो अपने में प्रभु का चिन्तन किया और मनन करने लगी। सृष्टि को निहारती रहती।

मेरे प्यारे! देखो महाराजा नल अपने भयंकर वन से गमन करते हुए देखो सोम विक्रम राजा के राष्ट्र में चले गये। उनके यहाँ, मुनिवरो! देखो सेवक के रूप में वह परिणित हो गये। मेरे प्यारे! देखो उसके वाहन को गति देना, उनके यहां, मुनिवरो! देखो जो भिन्न-भिन्न क्रियाकलाप, जो गृह में होते थे, उनको वह करते रहे। मेरे प्यारे! देखो एक समय जब 'राजन् ब्रह्मे' राजा ने अपने गुप्तचर इस राजा के यहां त्याग दिये तो यह विचारा दमयन्ती के पिता ने, सौहत्री ने कहा कि—"जाओ, हे गुप्तचरो! तुम महाराज नल का यह प्रतीत करके 'अमृतम्' अपने में जानकारी करो कि, वह कहाँ रहते हैं?"

## नल-दमयन्ती पुनर्मिलन

मुनिवरो! मानो देखो वह 'अग्रहे' देखो वह 'अप्रतिम्' गुप्तचर रूप में भ्रमण करते हुए जब विक्रम सोम के यहाँ पहुंचे तो वहाँ उन्हें भिन्न-भिन्न रूपों में एक चमत्कार दृष्टिपात् आने लगा और वह चमत्कार क्या था, मानो उनके समीप रहते और वह उनको दृष्टिपात् करके उन गुप्तचरों ने महारानी दमयन्ती से कहा कि तुम्हारे जो स्वामीत्व हैं, राजा से नहीं कहा, परन्तु देखो महारानी दमयन्ती ने एक पत्र सोम विक्रम को लिखा। मुनिवरो! देखो उन्होंने पत्र 'सम्ब्रहे' देखो उन्हें परिणित किया और परिणित करके जब राजा ने यह स्वीकार किया कि दमयन्ती का स्वयंवर होना है, मानो वह 'प्रब्रहे' अपने पति को चुनौती देने वाली है, तो मानो देखो नल कहीं समाप्त हो गया है, ऐसा उन्होंने अपनी लेखनी में बद्ध किया।

मेरे प्यारे! देखो राजा सोम ने क्या कहा--"सेवक ब्रहे! मानो देखो तुम कुछ जानते हो यह पत्रिका है? मैं उस समय तक जा नहीं पाऊंगा।" मेरे प्यारे! उन्होंने कहा--"प्रभु! मैंने राजा नल के वाहन को गति दी है यदि आप समय पर जाना चाहते हैं तो मुझे सारथी बना लेना।" मेरे प्यारे! देखो राजा ने कहा--"बहुत प्रियतम!" मेरे प्यारे! देखो वह वाहन पर विद्यमान हो गये। और वाहन को गति देने वाले राजा, मुनिवरो! देखो अपने में क्रुद्ध बन गये। मेरे पुत्रो! देखो भ्रमण करते हुए वह वाहन गतिवान करते हुए 'अमृतां ब्रह्मे', बेटा! देखो वह चक्रवेश्वर राष्ट्र में पहुंचे, जहाँ, मुनिवरो! राजा को कोई प्रतीत नहीं, यह कौन सा नृत्य हो रहा है, मेरे प्यारे! देखो जब वह नृत्य उस राजा के समीप आया तो वह, मुनिवरो! देखो उन्होंने नगर से बाहर ही अपना स्थान बनाया उसमें विद्यमान हो गये और विद्यमान हो करके, मुनिवरो! देखो 'राजं ब्रहे' और अब वह दमयन्ती उनके दर्शनार्थ के लिए, मेरे प्यारे! देखो उस वाटिका में पहुंची उन्होंने 'ब्रह्मणे' राजा नल

ने कोई वार्ता प्रकट नहीं की। उन्होंने कहा—"हे प्रभु! आप मेरे से वार्ता क्यों नहीं प्रकट कर रहे हैं?" उन्होंने कहा—"मैं, 'ब्रहे कृतं ब्रह्म' देखो तुम स्वयंवर की आभा में हो।" उन्होंने कहा—"प्रभु! कोई स्वयंवर दृष्टिपात् आता है? मेरी इच्छा यह है कि मेरा स्वामीत्व किसी प्रकार मुझे प्राप्त हो जाये।"

## दीपमालिका-यन्त्र

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा—"प्रभु! मेरा स्वामी दीपमालिका जानता है, दीप राग जानता है, दीप राग को मुझे परिणित कराईये।" मेरे प्यारे! देखो नल ने कहा कि—"मेरा मन नहीं कह रहा है।" मेरे प्यारे! देखो रात्रि का समय हो गया और सब अपने-अपने गृह में विश्राम करने लगे। अन्धकार छा गया। मेरे प्यारे! देखो, रात्रि अपनी आभा में परिणित हो गई और उस समय मध्यरात्रि में राजा नल ने, बेटा! वह अपना गान प्रारम्भ किया, प्राण को अपान में मिलाते हुए और अपान को उदान में परिणित करते हुए, बेटा! देखो उन्होंने संकल्पोमयी एक प्राणायाम किया और मुनिवरो! देखो, उससे राजा के राष्ट्र में, राष्ट्र में तो नहीं, परन्तु नगर में प्रत्येक गृह में, बेटा! प्रकाश हो गया। जब प्रकाश हो गया, तो मुनिवरो! देखो 'ब्रह्मणे वृत्ताः' मुनिवरो! देखो उसके उपकरण में उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण कर लिया था और वह यन्त्र मानो देखो बाह्य-प्राण को अपान में लाने के लिए, उन्होंने प्रयास किया था। वह दीपमालिका वैसे तो जानते थे, परन्तु इस प्रकार के यन्त्र का भी उन्होंने निर्माण किया, जो सर्वत्र नगर में, बेटा! देखो वह दीपमालिका बन जाये, तो उसको नल ही जानते थे। मेरे प्यारे! देखो राजा जागरूक हुए राजा ने अपनी देवी से कहा—हे देवी! मुझे प्रतीत होता है, देखो कहीं से राजा नल का आगमन हो गया है। मेरा अन्तरात्मा मानो प्रसन्न हो गया है और यह दीपमालिका बन गई है, मेरे गृह में।"

मुनिवरो! देखो विज्ञान अपने में बड़ा सार्थक बना रहा है और देखो मानव जब प्राण को अपान में मिलान करता है, यही प्राण की प्रतिष्ठा को बाह्य-जगत् में लाने का प्रयास करता है, तो मेरे प्यारे! देखो जहाँ वह प्राण को, मुनिवरो! देखो अपनी अन्तरात्मा में, अर्न्तहृदय में जानते थे वहाँ, मुनिवरो! देखो, उन्होंने बाह्य-जगत् में भी, मुनिवरो! देखो एक यन्त्र का निर्माण किया था। वहाँ भी, मुनिवरो! देखो प्राण और अपान को अपने में मिलान कराने की मानो देखो एक क्षमता उनमें रही।

## नल का पुनः गृह-प्रवेश

विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! देखो उनका जीवन सार्थक हुआ और देवी ने उनके चरणों को स्पर्श किया और स्पर्श करके प्रातः काल होते ही, मेरे प्यारे! अब देखो विक्रम सोम राजा ने नल के चरणों को स्पर्श किया कि "महाराज! आप अज्ञातवास में मेरे यहाँ इतने समय तक रहे, परन्तु मुझे कोई प्रतीत नहीं हुआ! आप इतने विज्ञानवेत्ता हैं, वाहन को भी जानते हैं! हे प्रभु! आप मेरे से ओझल बने रहे, यह मेरा कैसा दुर्भाग्य रहा है! अब मेरे राष्ट्र में हो करके ही तुम्हें अपने राष्ट्र को जाना होगा।" मेरे प्यारे! नल ने कहा कि—"नहीं, भगवन्! अब तो मानो मेरा समय पूर्ण हो गया है। मेरी वृत्तियाँ समाप्त हो गई हैं। मेरे प्यारे! मुझ पर जो आपात्काल था, वह समाप्त हो गया है। अब, भगवन्! अपने गृह में मेरा प्रवेश होगा।"

## आन्तरिक दीपमालिका

मेरे प्यारे! देखो मुझे ऐसा देखो स्मरण आता रहता है, हमारे यहाँ देखो नाना प्रकार का जो अपने में बाह्य-जगत् और आन्तरिक-जगत्, देखो दोनों में विज्ञान बड़ा सार्थक रहा है। मानो एक यन्त्र तो ऐसा है जो प्राण की

सत्ता से जाना जाता है और वही प्राण, मुनिवरो! देखो जो अपने आन्तरिक जगत् से गान रूप में गाया जाता है, तो मुनिवरो! देखो अपनी भी दीपमालिका बन जाती है।

## प्राण से उड़ान-गतियाँ

तो विचार-विनिमय क्या? मेरे पुत्रो! देखो हम प्राण सखा के द्वार पर चले जायें। बेटा! प्राण को कौन जानता था? मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया। यह तो मैंने तुम्हें सतोयुग की वार्ता प्रकट कराई। परन्तु देखो वह 'घटोचन ब्रहे' मेरे प्यारे! देखो वह अमती कुक्कोटेश्वर मुनि महाराज ने उन्हें नाना प्रकार की विद्याएं प्रदान कीं और यही विद्या, बेटा! देखो सुनीति और मुनिवरो! देखो 'महाराज ब्रहे', सुनीति मुनि के यहाँ त्रेता के काल में, बेटा! यह विद्या देखो हनुमान और यही विद्या देखो महाराजा गणेश को देखो उन्होंने प्रदान की। महाराजा गणेश भी इस विद्या को जानते थे। समुद्र के तट पर विद्यमान हो करके हनुमान जी और वे दोनों इस विद्या का अध्ययन करते रहते थे। मेरे प्यारे! देखो अध्ययन की प्रतिक्रिया बड़ी विचित्र बनी रही है, वह प्राण के ही रूप में, बेटा! देखो अपनी 'पार ब्रहे' यन्त्रों का भी निर्माण करते रहते थे और वह मानो यन्त्रों पर विद्यमान हो करके वह नाना प्रकार की उड़ानें उड़ते रहते थे।

**आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें यह उदगीत गाने आया हूँ, यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि हम प्राण सखा के द्वार पर चलें और प्राण को जानने से ही वह जो 'प्रणं ब्रहे', जो प्रणव है, जो मुनिवरो! देखो प्राणेश्वर कहलाता है, उससे हमारा मिलान हो सकता है।** जब, मुनिवरो! देखो साधक अपने में प्राणायाम करता है, कुम्भक प्राणायाम करते हैं, ऋषि-मुनि एकान्त स्थलियों में, बेटा! देखो वह

ऐसे गमन करते हैं जैसे एक यान जा रहा हो, वायुयान जा रहा हो, मुनिवरो! देखो अपने शरीर को कुम्भक प्राण के द्वारा वे, मुनिवरो! देखो कुम्भक और रेचक के द्वारा वह पृथ्वी के गर्भ को जानने वाले रहे हैं और अन्तरिक्ष के विज्ञान को जानने वाले रहे हैं।

## चरणपादुका-यन्त्र

मुनिवरो! देखो हमारे यहाँ हनुमान जी का जीवन, बेटा! भलि-भान्ति स्मरण रहा है। परन्तु देखो अपने देखो चरण-पादुकाओं में, उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया था जो, मुनिवरो! देखो उन्होंने महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ, बेटा! देखो ब्रह्मचारी सुकेता और महाराजा हनुमान और, मुनिवरो! देखो 'ब्रहे' देखो गणेश जी इन तीनों ने अध्ययन किया था। समुद्र के तट पर अध्ययन किया और उन्होंने अध्ययन करके, बेटा! प्राण शक्ति को जाना और जान करके उन्होंने यन्त्र का निर्माण किया जो वायु के 'आसन्नं ब्रीहि', बेटा! वायु के सहयोग से वह गमन करता रहा और वह वायु में और पृथ्वी के गर्भ में, कहीं जल के गर्भ में, मेरे पुत्रो! देखो उसके आश्रित हो करके वह गमन करते थे।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष तुम्हें चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि ये विद्याएँ हमारे मस्तिष्कों में और ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में भी रही हैं और यह विद्या, बेटा! विज्ञान के माध्यम से विज्ञान के वाङ्मय में भी प्रवेश होती रही हैं। आज मैं, बेटा! तुम्हें यह वर्णन करने जा रहा हूँ कि हम इस विद्या को प्रायः जानने वाले बनें। और यह विद्या, मुनिवरो! देखो, मानव के मस्तिष्कों में सदैव नृत्य करती रही है। आज, बेटा! देखो उस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रघट करने नहीं आया हूँ, विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना

करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस पुनीत विद्या को अपने में धारण करते रहें, जिससे, बेटा! देखो इस विद्या को हम अपने में धारयामि बना करके, बेटा! वेद की विद्या को हम ऊर्ध्वा में गमन करा देवें!

## प्राण-सत्ता-दर्शन

वेद में, बेटा! भिन्न-भिन्न मन्त्र इस प्रकार के आते रहे हैं, जिसका अध्ययन आचार्य के कुलों में देखो गान रूप में गाया गया। जैसे, मुनिवरो! देखो यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, बेटा! देखो, अग्न्याधान करता है, अग्नि को प्रदीप्त करता है और अग्नि को प्रदीप्त करके मानो उसके जो काष्ठ में जो अग्नि विद्यमान थी, उस अग्नि को प्राणेश्वर के रूप में दृष्टिपात् करता है—हे अग्नि! तू कैसी देवी अग्नि है! तू देवताओं का मुख कहलाती है! जब देवता मानो तेरे मुख में जो 'अग्नं ब्रह्मणे' देखो जो 'स्वाहा' यज्ञमान दे रहा है, वह मानो देखो अग्नि ब्रह्म अपने में धारण कर लेती है और सर्वत्र जो देवता हैं, वह अग्नि ही, मुनिवरो! देखो उन्हें प्रसाद रूप में परिणित कर देती है। वह 'हवि' कहलाती है। वह हवि जब उन्हें प्रदान की जाती है, तो बेटा! वह देखो वायुमण्डल पवित्र हो जाता है और वह 'प्राणं ब्रह्मे लोकाम्' मेरे प्यारे! देखो वह प्राण-सता को प्रदान करने वाले, वह अग्नि के स्वरूप में ही अपने को ले जा करके नाना प्रकार के व्यञ्जनों को जन्म देते हैं। जब, बेटा! देखो पृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ तप रहा है, वही, मुनिवरो! देखो इस अग्नि के माध्यम से, अग्नि देवताओं का मुखारबिन्दु कहलाता है और वह देवता जब उस मुखारबिन्दु से 'अग्नं ब्रह्मे अन्नादं भूतं ब्रह्मणे लोकाम्', बेटा! जब देखो उस प्राण-सत्ता को प्राप्त कर लेते हैं मुख के द्वारा, तो बेटा! शक्तिशाली बन जाते हैं। जैसे एक मानव क्षुधा से पीड़ित हो

रहा है और वह मानव, मुनिवरो! देखो जब क्षुधा से पीड़ित होता हुआ वह अपने में उसे ग्रहण कर लेता है, वह 'अग्नं ब्रह्मणे लोकाम्', बेटा! अन्न को ग्रहण कर लेता है, उसके मुखारबिन्दु में ही अग्नि है। वह सर्वत्र मानो प्राणों को सत्ता प्राप्त हो जाती है। बेटा! देखो प्रत्येक इन्द्रियाँ अपने क्रियाकलापों में सदैव तत्पर हो जाती हैं और वे इन्द्रियाँ, 'अमृतां ब्रह्मणे', बेटा! शक्तिशाली बन करके अपने क्रियाकलापों में परिणित हो जाती हैं।

तो विचार-विनिमय क्या? **मेरे प्यारे! देखो, यह प्राण-सता बड़ी विचित्र मानी गई है, इसको जानने वाला, इस सागर से पार हो जाता है, इसको जानने वाला, बेटा! देखो इस महामना प्रभु के द्वार पर अपने को ले जाता है और यह प्राण की प्राण-सुधा में ईश्वर को जान करके इस सागर से पार हो जाता है।**

यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएँ तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज, बेटा! मैंने तुम्हें गाथा के रूप में महाराजा नल की विचित्र गाथा तो मैं नहीं गा सका हूँ, परन्तु उनके परिचय के रूप में, बेटा! अपना कुछ वर्णन किया है। यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ, कल प्रघट करूंगा। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

ई-४५,
लाजपतनगर-३, न. दिल्ली
१६-५-८६

# प्राणसत्ता और योग

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुण-गान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुण-गान गाया जाता है; क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात् आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात् आते रहते हैं। तो इसलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महत्ती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते चले जाएँ, क्योंकि वह जो परमपिता परमात्मा जड़ और चेतना में, मानो दोनों में रत्त हो रहा है, दोनों में वह गतिवान है, तो इसीलिए उस देवत्त्व को सदैव सर्वज्ञ, महान और पवित्रत्व हम उसे दृष्टिपात् करते रहते हैं। और जितना भी यह ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात् आ रहा है, चाहे वह ब्रह्माण्ड हमसे ओझल भी क्यों न हो, तो उस सर्वत्रता में वे विद्यमान रहते हैं।

आओ, मुनिवरो! हम उस परमपिता परमात्मा की महत्ती और उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर सदैव विचार-विनिमय करते रहें, क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक नाना प्रकार का अनुसन्धान होता रहा है और नाना विचारक रहे हैं, जिन्होंने, बेटा! देखो भौतिक-विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान के ऊपर बड़ा मनन और चिन्तन किया। तो आज, हम, बेटा! इस आभा में प्रायः विचार देना चाहते हैं कि उस परमपिता परमात्मा का जो अनन्तमयी जगत् है उसको प्रत्येक मानव को जानना

चाहिये और उसके ऊपर अन्वेषण और अनुसन्धान होना चाहिये, जिससे परमपिता परमात्मा की अनन्त-महिमा और उसका ज्ञान और विज्ञान मानव के समीप आ सके।

मुनिवरो! देखो आज का हमारा वेद-मन्त्र हमें कुछ प्रेरित कर रहा है और वह प्रेरित यह कर रहा है—'सम्भवं ब्रह्मे कर्मणम् अस्वां ब्रह्मणः लोकाः' मानो वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी और प्रकृति के एक-एक कण-कण में ओत-प्रोत है। **मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस समय भौतिक-विज्ञानवेत्ताओं ने एक-एक अणु और परमाणु को जानने का प्रयास किया, परन्तु अणु और परमाणु को विभक्त भी किया गया तो एक परमाणु के विभक्त करने से, बेटा! उसमें सर्वत्र ब्रह्माण्ड, ऋषि-मुनियों को दृष्टिपात् आता रहा है और अपने में मानव विज्ञान में ही रत्त होता रहा है।**

आओ, मुनिवरो! देखो, इस विचार में जाते हुए केवल हमें एक वेद-मन्त्र कुछ प्रेरणा दे रहा है, जिस वाक्य को, बेटा! मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में भी वर्णन किया है, आज भी देखो हमारे समीप मानो देखो वह वेद-मन्त्र आता रहता है—'प्रकाशं भवितं ब्रह्मणा लोकाम्', मेरे प्यारे! वह जो परमपिता परमात्मा, वह जो ब्रह्म है और इसके ऊपर परम्परागतों, से बेटा! मानव अन्वेषण और अनुसन्धान करता रहा है। आज मैं तुम्हें, बेटा! ऋषि-मुनियों के उस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जिस क्षेत्र के लिए परम्परागतों से मानव अपने में अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मैं उस परमपिता परमात्मा की महत्ती में रत्त हो जाऊँ।

**प्राण-सखा**

आओ, मेरे पुत्रो! आज मैं तुम्हें कुछ ऋषि-मुनियों के एक क्षेत्र में

ले जाना चाहता हूँ। जहाँ, मुनिवरो! देखो आज का हमारा वेद-मन्त्र यह उद्गीत गा रहा था, 'प्राणं ब्रह्मणं प्राणः वर्चोसि सम्भवं ब्रह्मणे वायुः सर्वतं देवः'। वेद-मन्त्र, बेटा! कुछ हमें प्रेरणा दे रहा है और वेद मन्त्र यह कह रहा है, 'सम्भवं ब्रह्मः' मानो 'प्राणस्वतः प्रह्वे' हम **इस प्राणेश्वर को जानने के लिए सदैव तत्पर हो जायें, जो प्राणों का भी प्राण है जो प्राण सखा कहलाता है, उस परमपिता परमात्मा को मानो प्राणेश्वर स्वीकार करते हुए, हम अपने में सदैव रत्त हो जायें।** ऐसा, मुनिवरो! देखो हमारा वेद-मन्त्र कह रहा है। परन्तु जहाँ वेद-मन्त्र यह उद्गीत गा रहा है, वहाँ यह भी उच्चारण कर रहा है, 'सम्भूति ब्रह्मणं सम्भूति लोकां वायु रथं सलिल प्रवाण वर्णसं ब्रह्मे देवः, बेटा! वेद-मन्त्र यह भी कह रहा है कि 'सम्भूति ब्रह्मणा लोकां' मेरे प्यारे! देखो, प्राण के ऊपर हमारे यहाँ बड़ा अन्वेषण होता रहा है। हमारे यहाँ प्राणायाम् करने वाले बह्मवर्चोसी कहलाये जाते हैं।

## संकल्पोमयी प्राण

मुनिवरो! देखो, प्राण के ऊपर जब अन्वेषण करने वाला अन्वेषण करने लगता है तो वह प्राण के द्वार पर जब जाता है तो कहीं, बेटा! वह मानो देखो प्राण को एक ही अंग में लाने का प्रयास करता है और वही 'प्राणं ब्रह्मे' वह संकल्पोमयी प्राण कहलाता है। परन्तु देखो एक यज्ञशाला में यज्ञमान अपने पुरोहित से कहता है—"हे प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि 'दीपावली' प्राण के आश्रित कैसे बन जाती है?" तो बेटा! देखो यह बड़ा आश्चर्यमयी एक शब्द एक वेद-मन्त्र भी आता है और वेद-मन्त्र कहता है—'सम्ब्रह्मणे कृतः' मानो देखो, वेद-मन्त्र यह कह रहा है कि मुनिवरो! देखो हम प्राण के ऊपर अन्वेषण करें। हमारे यहाँ बहुत से ऋषि-मुनि अपने में प्राण के ऊपर बड़ा अन्वेषण करते रहे हैं। **मेरे प्यारे!**

**देखो, प्राणायाम करने वाला 'दीपावली यज्ञ' में अपने राग के द्वारा 'दीपावली' बना लेता है, मानो वृष्टि में परिणित हो जाता है और संकल्पोमयी प्राणायाम करता हुआ अपनी अन्तरात्मा को जानने लगता है और इसीलिए बेटा! हमारे यहाँ प्राणायाम और प्राण की प्रतिक्रियाओं में रत रहना चाहिये।**

## सुनीति मुनि के आश्रम में प्राण-विद्या

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब, मुनिवरो! देखो सुनीति मुनि महाराज के आश्रम में, बेटा! नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। ब्रह्मचारियों में और भी नाना ब्रह्मचारी थे जो प्राण के ऊपर अन्वेषण कर रहे थे। वह प्राण को एक अंग में लाना, प्राण के द्वारा, मुनिवरो! देखो अपना उत्थान करना और प्राण ही अपने में सखा बन करके, वह प्राण-सखा को जानने वाला, मुनिवरो! देखो, प्राण की प्रतिक्रियाओं में रत्त होता रहा है। मुझे वह काल स्मरण है, जब, बेटा! देखो प्राण के द्वारा 'प्राणं ब्रह्मे कृतम्' महात्मा सुनीति मुनि महाराज के यहाँ, बेटा! जब प्राण की क्रियाएँ होतीं, तो मुनिवरो! देखो, राजा अपने राजकुमारों को ऋषि के आश्रम में प्रवेश कराता।

## अंगद का प्राणाध्ययन

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, कि सुनीति मुनि के आश्रम में, मेरे पुत्रो! देखो, एक समय बाली अपने पुत्र अंगद को ले करके ऋषि के आश्रम में पहुँचे और उन्होंने कहा—"हे प्रभु! मेरा जो पुत्र है इसे प्राण-विद्या प्रदान कराईये।" मेरे प्यारे! देखो, सुनीति ऋषि ने कहा कि—"तुम्हारे हृदय में, राजन! प्राण को जानने की उत्सुकता कैसे जागरूक हुई? मानो प्राण को कैसे अपने राजकुमार को प्रदान कराना चाहते हो?"

उन्होंने कहा कि–"महाराज! मेरी यह मनोनीत इच्छा है कि मानो देखो मेरा जो पुत्र है, यह प्राण को जानने वाला बने, क्योंकि प्राण कई रूपों में जाना जाता है। मानो देखो कहीं प्राणायाम करने वाला शीतली प्राणायाम करता है, कहीं खेचरी मुद्रा में परिणित हो जाता है, मानो कहीं रेचक और कुम्भक और पूरक में लगा रहता है। यह प्राण कई प्रकार से जाना जाता है। **एक प्राण संकल्पोमयी प्राण होता है।** जब, मुनिवरो! देखो, प्राण और अपान दोनों एक सूत्र में सूत्रित हो जाते हैं तो बेटा! वह जो प्राण है, 'अमृतां देवं ब्रह्मे' देखो वह प्राण एकाग्रित हो जाता है और एक अंग में लाना चाहता है, एक पग में, मानो यदि वह अनिमा में लाना चाहता है वहीं प्राण आ जाता है। मस्तिष्क में लाना चाहता है, वहीं आ जाता है।" मेरे प्यारे! देखो, सुनीति मुनि ने कहा–"हे राजन्! मेरी एक हीं इच्छा है कि आप इसे प्रवेश कराईये और मैं इसका अध्ययन करूंगा, यह प्राण को जानने वाला है अथवा नहीं क्योंकि इसकी परीक्षा भी तो होनी चाहिये"।

## सम्भूति प्राण

मेरे प्यारे! देखो अंगद जी ने 'ब्रह्मे' उनके आश्रम में ही प्रवेश कर लिया और वह प्रवेश करके, मुनिवरो! देखो, उन्होंने प्राण के सम्बन्ध में ब्रह्मचारी से कुछ प्रश्न किये। उन्होंने कहा–"हे अंगद! तुम जानते हो, 'सम्भूति प्राण' किसे कहते हैं?" उन्होंने कहा–"प्रभु! मैं जानता हूँ। **'सम्भूति प्राण' उसे कहते हैं, जहाँ दस प्राणों का एक समूह बन करके और किसी भी मानव के अंग में एकत्रित हो जाये। उसी को हम सम्भूति प्राण कहते है।"** मेरे प्यारे! देखो उन्होंने यह जान लिया कि ब्रह्मचारी प्राण-विद्या में मानो देखो कुशल बन जायेगा, इसे अभ्यास कराया जाये। तो महात्मा सुनीति ने, बेटा! देखो उन्हें प्रवेश कराया और

विद्यालय में मुनिवरो! देखो, अध्ययन होने लगा। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही जब भी कोई गुरु-शिष्य की प्रणाली मानो देखो अपने में कृत्य बन करके आती है तो वहाँ एक परीक्षा का और उनकी मानो देखो परीक्षा का एक समूह उनके समीप आ जाता है और वह इसमें मानो देखो उसको नाना प्रकार के प्रश्न और उत्तरों में ले जाते हैं और ले जा करके तब उसे उसके पश्चात् वे शिक्षा प्रदान करते रहें हैं।

## प्राण-विद्या और ब्रह्म-विद्या का सम्बन्ध

मुनिवरो! देखो, महात्मा सुनीति के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे, परन्तु देखो प्रातःकालीन जब ब्रह्मविद्या को वह प्रदान करते तो यंह कहते—"हे ब्रह्मण ब्रहे! मानो यह जो प्राण-विद्या है यहं ब्रह्म-विद्या से सम्बन्धित है अथवा नहीं?" तो ब्रह्मचारियों ने कहा—"प्रभु है।" उन्होंने कहा—"निर्णय करो, किस प्रकार है।" उन्होंने कहा—"यह जो प्राण-विद्या है, यह प्राण जो है यह सखा है, यह गतिवान् है और यह गति है मानो देखो इसमें परमपिता परमात्मा निहित रहते हैं और वह गतिवान हैं।"

## सामान्य और विशेष प्राण

हमारे यहाँ दो प्रकार के प्राणों का विधान किया गया है एक सामान्य प्राण होता है और एक विशेष होता है। तो जो विशेष प्राण विभक्त-क्रिया के द्वारा रहता है वह विशेष है और जो सामान्य प्राण है जो मानो देखो वायु में गतिवान है, अग्नि में गतिवान है, जो अन्तरिक्ष के एक-एक कण-कण को, परमाणु को, सजातीय बना रहा है, वह जो प्राण है देखो वह सर्वत्र प्राण कहलाता है। उस प्राण को हमारे यहाँ देखो एक विशेष और एक सामान्यत्व में रत्त रहने वाला माना गया है।

## नागप्राण-विद्या

बेटा! हमारे यहाँ, प्राण-विद्या में एक प्राण-विद्या नाग फांस के रूप में भी रही है। प्राण-विद्या में एक नाग प्राण होता है। मानव के शरीर में जब एक ही प्राण का दस रूपों में विभाजन हो जाता है, तो एक नाग प्राण भी कहलाता है। **नाग प्राण उसे कहते है, जो अमृत का विष बनाता है और वह मानो देखो क्रोधाग्नि से और उग्रता से उसका समन्वय रहता है।** तो मानो देखो वह प्राण है, अपने में अपनी प्राण-सत्ता को जानना है। तो महात्मा सुनीति ने कहा—"यही विद्या, देखो हमारे आश्रम में, राजा रावण के पुत्र मेघनाद ने भी इस विद्या को प्राप्त किया था। नागप्राण-विद्या का भी देखो हमारे आश्रम में बहुत समय तक चलन रहा है और वह नाग-विद्या भी मानो देखो जो प्राण-वृत्तियों में रत्त करने से मानो देखो उसके रथ को वह 'सम्भवं ब्रहे' अमृत को वह विष बना देता है।" तो मानो देखो इस प्रकार उन्होंने अपनी विद्या की भूमिका का नृत्य कराया। उन्होंने कहा—"हे ब्रह्मचारी! हे अंगद! तुम विद्या को पान करना चाहते हो, तो तुम अध्ययन करो।"

मेरे प्यारे! देखो, प्राण-विद्या के ऊपर अध्ययन होना प्रारम्भ हो गया। उन्होंने, बेटा! प्राण को अपान से समन्वय किया और अपान और देखो प्राण को नाग-प्राण से, देखो उन्होंने सामान्य प्राण से उसका समन्वय किया, मेरे प्यारे! देखो उसका बाह्य-जगत् एक अनूठा बन गया। वह बन जाने के पश्चात्, मुनिवरो! देखो उस विद्या का अध्ययन होने लगा। तो मुनिवरो! देखो वह बाली पुत्र ने, मेरे पुत्रो! देखो अंगद ने उस विद्या को पान किया कि एक प्राण के अनुष्ठान मात्र में ही प्राण एकाग्र, एकत्रित हो जायें। वह बड़ा शक्तिशाली बन जाता है। परन्तु देखो हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में

प्राण-विद्या का बड़ा वर्णन है। ऋषि-मुनियों ने इसके ऊपर अध्ययन किया है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, जिस समय यह प्राण-विद्या को बाली पुत्र ने, बेटा! देखो अपनी क्रिया में लाने का प्रयास किया और वह प्राण-विद्या इतनी शक्तिशाली अपने में बलित हो गयी कि मानो देखो वह बलिष्ठता को प्राप्त होने लगी।

मेरे पुत्रो! ऐसा स्मरण आ रहा है कि त्रेता के काल में जिस समय राम और रावण का संग्राम हुआ था, उस संग्राम में, मुनिवरो! देखो, मेघनाथ भी प्राण-विद्या को जानते थे। परन्तु देखो अंगद को राजदूत के अमृतियों में, मुनिवरो! देखो रावण की सभा में रावण से यह 'अमृताम्' और यह कहा गया, क्योंकि जामवन्त भी प्राण-विद्या के विशेषज्ञ कहलाते थे, परन्तु देखो उन्होंने कहा कि–"जाओ रावण से कहो कि वह अपने में राम और रावण दोनों का देखो एक समीप, मधुपन हो जाये, जिससे देखो यह विवाद, क्या मानव-मानव का संग्राम नहीं होना चाहिये। यह मानव-मानव देखो नष्ट हो जायेगा तो इसमें वर्ण-संकरता आ जाती है, अप्रीति आ जाती है।"

## लंका में अंगद का पग-स्थापन

मेरे प्यारे! देखो जिस समय वह बाली पुत्र देखो, वह तुम्हें अभ्युति वार्त्ता प्रकट करा रहा हूँ, मेरे प्यारे! देखो जिस समय राजा रावण की सभा में पहुँचे तो उन्हें आसन् दिया राजदूत की दृष्टि से जब उन्हें आसन् देकर कहा–'सम्भव ब्रह्मणे वायु रथं ब्रह्मः लोकाम्' मानो देखो 'ब्रह्मणे कृतः', जब उन्होंने कहा कि–"भगवन्! कहो, तुम्हारा कैसे आगमन हुआ है?" उन्होंने देखो वह बालि पुत्र ने कहा, 'मेघ ब्रहे सम्भव प्रवेः', मेरे प्यारे! उन्होंने

कहा—"हे भगवन्! आपने बड़ा पाप किया है, राष्ट्रीय दृष्टि से किसी भी देवी को मानो देखो हनन करके अपने गृह में वास कराया जाये, तो यह बड़ा महापाप है, राष्ट्र की प्रणालियाँ सर्व समाप्त हो जाती हैं और वहाँ रक्त बहाया जाता है, मानव-मानव नष्ट हो जाता है, मेरी इच्छा यह है कि आप माता सीता को राम को प्रदान कर दीजिये और मानो देखो, मेरी इच्छा ऐसी रहती है।" 'सम्भवं ब्रह्मे', बेटा! रावण ने वह वाक्य स्वीकार नहीं किया—उन्होंने कहा—"मेरे यहाँ बहुत से योद्धा हैं, बलिष्ठ हैं, क्षत्रिय हैं और जो राम को देखो नष्ट कर सकते हैं।" मेरे पुत्रो! देखो मुझे स्मरण आता रहता है, 'अंगद ब्रहे' अंगद ने यह कहा—"प्रभु! एक भी बलिष्ठ नहीं है, तुम्हारे यहाँ।" उन्होंने कहा—"कैसे नहीं!" "देखो, मेरे पग को जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर वर्णित कर दे तो मैं माता-सीता को त्याग करके चला जाऊंगा और राम को मैं अपने गृह में क्या पुनः अयोध्या में ले जाऊंगा।" **मेरे प्यारे! देखो, वही प्राण-विद्या उनके समीप थी। वह सर्वत्र प्राण-विद्या उनके पगों में आ गई और जब वह उस पग को दूरी करना चाहते, वह नहीं हो सका।**

वह प्राण-विद्या है, जिस प्राण-विद्या के ऊपर देखो, हमारे यहाँ सर्वत्र यन्त्रवाद 'प्राणम् ब्रहे', देखो यौगिकवाद इसी के आश्रित रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने सर्वत्र बलिष्ठ जब देखो अश्रुति बन गये, मेरे प्यारे! देखो अचित्त हो गये, तब वह देखो उन्होंने 'अमृतं ब्रह्मः' रावण ने कहा—"मैं भी तो इसे दूरी कर सकूंगा।" मेरे प्यारे! जब रावण ने पग के लिए गमन किया तो उन्होंने अपने पग को, अपने स्वतः अपने प्राणों को सर्वत्र अंगों में प्रवेश कराया और उन्होंने कहा—"हे रावण! मैं तो दूत हूँ, भगवन्! मेरे चरणों को क्यों स्पर्श करते हो?" 'अंगां ब्रह्व प्राणं ब्रवीही' मेरे प्यारे! देखो उन्होंने कहा—"तुम राम के चरण-स्पर्श करो।" मुनिवरो! देखो वह अग्नि

में परिणित हो गया। परिणाम क्या, मुनिवरो! देखो मैं इस वाक्य को इसीलिए प्रकट करा रहा हूँ कि हमारे यहाँ वैदिक-साहित्य में यह प्राण-विद्या अपने में बड़ी अद्वितीय बन करके रही है।

## प्राण द्वारा कुण्डलिनी-जागरण

प्राण के द्वारा ही, मेरे प्यारे! देखो, मानव विशाल से विशाल क्रियाकलापों में सदैव परिणित रहा है। और मानव इन प्राणों के द्वारा ही, मेरे प्यारे! देखो अपनी कुण्डलिनी को जागरूक कर देता है। मुझे स्मरण आता रहता है यह तो मैंने तुम्हें राष्ट्रीय, बाह्य-जगत् में प्राण की चर्चा की है, परन्तु एक प्राण की चर्चा वह है जिससे योगेश्वर बन जाता है, जिससे योगी बन जाता है और वह अपने प्राण को जानता-जानता बहुत दूरी चला जाता है। मेरे प्यारे! देखो जब प्राण के द्वारा वह प्राणायाम करता है, खेचरी मुद्रा में मुद्रित हो जाता है, बेटा! देखो उसमें शीतली प्राणायाम है, खेचरी प्राणायाम है, और भी नाना प्रकार के प्राणों का विधान किया गया है, जिसके ऊपर ऋषि-मुनि, परम्परागतों से ही बेटा! अन्वेषण और विचार-विनिमय करते रहे हैं, तो मेरे प्यारे! देखो प्राण को अपान में, अपान को व्यान में और व्यान को समान में प्रवेश कराते रहे हैं। मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में, ऋषि-मुनि अपनी अन्तरात्मा को जानने में तत्पर रहे हैं, अन्तरात्मा को जानने वाला, मेरे प्यारे! देखो, विष्णु-रूप बन जाता है। वह विष्णु-रूप बन करके अपने में ही अपनेपन को विचारता रहता है।

## प्राण पर लोमश-काकभुषुण्ड वार्ता

मेरे प्यारे! देखो मुझे स्मरण है। एक समय कागभुषुण्ड जी के यहाँ,

यह प्रश्न लोमश और कागभुषुण्ड जी के मध्य में उत्पन्न हुआ और यह कहा गया कि—यह प्राण क्या है? तो महर्षि लोमश मुनि ने यह वर्णन किया, उनके प्रश्नों का उत्तर देते हुए कि **प्राण वह है, जो मानव अपने जीवन की दीपावली बना लेता है। प्राण वह है, जो रेचक और कुम्भक प्राणायाम करता रहता है तो देखो अन्तरिक्ष में गमन करने लगता है।** मानो देखो इस प्रकार जब ऋषि ने वर्णन कराया, उन्होंने कहा—"यह प्राण-सखा क्या है?" उन्होंने कहा—"प्राणं ब्रह्मे प्रणं ब्रहा" यह प्राण ही तो खेचरी मुद्रा और संकल्प में परिणित होता हुआ मानो देखो मानव को योगी बना देता है। यही प्राण सखा ऐसा है, जो माता अपने अन्तरात्मा, जो उसके गर्भ में जो आत्मा है, मानो देखो उस आत्मा से वार्ता प्रकट करने लगती है।"

## प्राण द्वारा कौशल्या की गर्भस्थ राम से वार्त्ता

मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जो मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन किया, जब माता कौशल्या, मेरे प्यारे! देखो स्वयं कला-कौशल करके द्रव्यों का पान करती थी तो बेटा! देखो मध्यरात्रि के पश्चात् रात्रि के अन्तिम चरण में मेरे प्यारे! देखो माता एकान्त स्थली में विद्यमान हो जाती और माता कौशल्या, मेरे प्यारे! देखो अपने हृदय में, अपने शरीर में, जो आत्मतत्त्व था, जो शिशु था, उससे वह प्राण और अपान को, दोनों का एक सूत्र बना करके, बेटा! देखो वह अपनी अन्तरात्मा की भावना को, मेरे प्यारे! देखो शिशु के द्वार पर ले जाती और वह उच्चारण करती—"हे बाल्य! हे शिशु, तू जो मेरे गर्भस्थल में विद्यमान है, तेरे आने का मूल कारण क्या है? तूने मेरे गर्भाशय में क्यों वास किया?" मेरे प्यारे! देखो, माता इन वाक्यों के ऊपर चिन्तन और मनन करती रहती। अन्तरात्मा से यह

प्रेरणा आती शिशु से मानो देखो, 'सम्भव ब्रह्मणः वायु रेथं ब्रव्हे वृत्तम्', "मानो देखो मैं सदैव इसलिए संसार में आया हूँ, क्योंकि मैं कुछ करना चाहता हूँ, हे माते सम्भवा!" तो बेटा! देखो माता कहती है–"धन्य है!" **तो बेटा! देखो यह प्राण है, जो प्राण को अपान में समन्वय करते हुए माता अपने 'प्राण ब्रहे' अपने शिशु से वार्ता प्रकट करती रहती।**

## प्राण और यौगिक-क्षेत्र

मेरे प्यारे! देखो इस सन्दर्भ में आगे वर्णन करते हुए ऋषि ने कहा है, आचार्य कहता है, 'सम्भव ब्रहे' मेरे प्यारे! **देखो यह प्राण है, जो 'योगी' बना देता है। यह प्राण को अपान में जब मिलान कराता है और व्यान में प्रवेश करा देता है, तो बेटा! देखो मन इसके ऊपर आश्रित हो जाता है, यह प्राण-सखा मानो देखो अपने में रत हो जाता है।**

## चक्र-गतियाँ

मुनिवरो! देखो सबसे प्रथम, यह आत्मा, देखो मूलाधार में यह प्राण-सखा है, जो मूलाधार में, देखो श्रुति इसकी परिणित हो जाती है, मूलाधार से ले करके नाभि-चक्र में गमन करता है, और नाभि-चक्र में गमन करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो यह हृदय चक्र में गमन करता है। और यह चक्र कैसे हैं? बेटा! देखो अपने में देखो पृथ्वी, वायु और अग्नि, मुनिवरो! देखो यह पृथा है। यह जो हृदय है, यह अग्नि है, अग्नि-तत्त्व माना गया है। मेरे प्यारे? देखो, इसके पश्चात् देखो 'अमृतम्' जब यह हृदय-चक्र से भी दूरी होता है तो कण्ठ-चक्र में प्रवेश करता है और कण्ठ-चक्र से, बेटा! देखो यह स्वाधिष्ठ चक्र में प्रवेश करता है और यह उसके पश्चात त्रिवेणी में स्नान करता है। त्रिवेणी किसे कहते हैं? बेटा! जहाँ इंगला, पिंगला,

सरस्वती, जहाँ देखो इनका तीनों का मिलान होता है, यह मानो देखो त्रिकुटी में इसका मिलन होता है। आगे चल करके, बेटा! देखो तीन कृतिका आती हैं और कृतिका आ करके, बेटा! देखो यह ब्रह्मरंध्र में प्रवेश कर जाता है। मेरे प्यारे! देखो यही ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करके मानो देखो, ऋषि के साथ यह गमन करता हुआ, मुनिवरो! देखो, अन्त में यह कुण्डलिनी के स्वरूप में प्रवेश कर जाता है।

## कुण्डलिनी-विद्या

यह कुण्डलिनी क्या है, जिससे मानव को देखो जब उसका ऊर्ध्वा मुख होता है और मस्तिष्क, ब्रह्मरंध्र से, उसका मिलान होता है, तो बेटा! देखो योगीजन इस ब्रह्माण्ड को साक्षात्कार दृष्टिपात् कर लेते हैं? मेरे प्यारे! देखो ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात् करके, बेटा! नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों की जो माला बनी हुई है, जो नाना पृथ्वियों की माला बनी हुई है और वह एक-दूसरे से माला को धारण कराते चले जाते हैं। वह योगेश्वर, बेटा! मानो देखो रीढ़ के विभाग में गंगा, यमुना, सरस्वती, का दर्शन करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो उसको साक्षात्कार कर लेता है।

## प्राण और चित्त-मण्डल

मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें यौगिक क्षेत्र में ले जाना नहीं चाहता हूँ, विचार केवल यह कि मुनिवरो! देखो एक तो यह प्रतिक्रिया प्राण की मानी गई हैं, एक प्राण की यह प्रतिक्रिया है कि मन प्रकृति का सूक्ष्म तन्तु माना गया है। परन्तु देखो जब यह सूक्ष्मतम तन्तु माना गया है, तो यह जो प्राण है, यह मानो देखो तन्तु में प्रवेश कर जाता है और, मुनिवरो! देखो यह

अनुशासन में प्रवेश करता हुआ चित्त की वृत्तियों को निरोध में लाता हुआ, मेरे प्यारे! देखो 'प्राणं ब्रहे वर्णस्तं ब्रव्हे' यह उदान प्राण में प्रवेश हो करके, व्यान और प्राण दोनों उदान में प्रवेश करके, बेटा! देखो यह चित्त की वृत्तियों को दृष्टिपात् कर लेता है। और चित्त मण्डल, बेटा! देखो, इतना विशाल है, जिसमें करोड़ों-करोड़ों जन्म के संस्कार निहित रहते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, उन संस्कारों को जागरूक करने का प्रयास करता है।

आज, बेटा! मैं अपने विचारों को देता हुआ दूरी न चला जाऊँ। विचार यह प्रारम्भ हो रहा है कि हम, बेटा! देखो प्राण-सखा को जानने वाले बने। हमारे यहाँ, प्राण की एक गाथा बड़ी विचित्र आती रही है, इसकी चर्चाएँ, तो बेटा! मैं कल ही प्रकट करूंगा। आज का विचार हमारा यह कह रहा है कि हम, बेटा! देखो इस प्राण की आभा में रत्त हो जायें, जिससे प्राणेश्वर को हम अपना सखा बना करके सागर से पार हो जायें। **मेरे प्यारे! देखो मुझे स्मरण आता रहता है, जो चित्त के मण्डल को जागरूक करने वाले हैं, वे, बेटा! तपस्या में परिणित हो जाते हैं, वे अपने को उग्रवादी बना करके, प्राण का सखा बन करके, बेटा! देखो! वे प्राण में प्रवेश करते हुए प्राणों की आभा में रत्त हो करके, बेटा! देखो उसको साक्षात्कार दृष्टिपात् करने लगते हैं।**

आओ, मेरे प्यारे! मैं बड़े गम्भीर रहस्यतम् में तुम्हें ले गया हूँ। बेटा! प्राण और अपान की आभा में ले गया हूँ, जिसका अध्ययन, बेटा! पुरातन काल में करते रहे हैं। आज तो इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है। आज हम देखो प्राणों की प्रतिभा में परिणित हो जायें। परन्तु विचार-विनिमय केवल हमारा यह कि हम प्राण-सखा को जान करके इस सागर से पार हो जायें।

## सुनीति मुनि का चित्त-ज्ञानानुष्ठान

मेरे पुत्रो! देखो, सुनीति मुनि ने एक वाक्य अपने ब्रह्मचारियों से कहा था। उन्होंने कहा–"हे ब्रह्मचारियो! जब मैं इस क्षेत्र में, प्राण के क्षेत्र में आया तो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मानो मुझे बड़ा आश्वासन देते रहे और उन्होंने, मुनिवरो! देखो एक समय बारह वर्ष का एक अनुष्ठान किया था और वह चित्त के मण्डल को जानने के लिए। **अनुष्ठान उसे कहते हैं, जहाँ मन को पवित्र बनाया जाता है। अनुष्ठान उसे कहते हैं, जहाँ अपनी अन्तरात्मा और प्राण का और मन-कर्म-विचार को, दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास किया जाता है।** मानो देखो, उन्होंने बारह वर्ष का ऐसा अनुष्ठान किया कि वह मानो मौन रहे, अध्ययन करते रहे और देखो अपना स्वतः चित्त के मण्डल को जानने का प्रयास करते रहे। उन्होंने यह विचारा कि मेरी जो पुरातनता, तीसरे महापिता थे, उन्होंने इक्यासी वर्षों तक अनुष्ठान किया और चित्त के मण्डलों को जानते हुए इक्यासी वर्षो में वह मौन रहे और पत्र-पुष्पों को पान किया परन्तु उन्होंने अपने देखो लाखों जन्मों के जो चित्र थे, वे जो संस्कार थे, उन्हें साक्षात्कार किया और, मुनिवरो! देखो वह ऋषि ने कहा है कि **कोई भी मानव मुक्ति के मार्ग पर जाना चाहता है तो वह उस काल में जाता है जबकि मानो देखो उसके चित्त में, कोई भी संस्कार न हो। चित्त का मण्डल जब संस्कार से विहीन हो जाता है तो वह सबसे प्रथम मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगता है।**

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, परिचय देने के लिए चला आया हूँ। वह परिचय क्या है? क्या, मुनिवरो! देखो हम अपने में साधक बनें और साधक बन

करके प्राण-सत्ता को जानने का प्रयास करें। जैसे प्राण के ऊपर बेटा! ऋषि ने कितना अनुसन्धान किया तो महर्षि, मेरे प्यारे! देखो सुनीति ने इसका निर्णय दिया और वह, मुनिवरो! देखो मेघनाथ इत्यादियों को और यही विद्या सर्प-प्राण की विद्या, देखो राजा रावण के पुत्र मेघनाथ ने भी इस विद्या का अध्ययन सुनीति मुनि के आश्रम में किया था और भारद्वाज मुनि से विज्ञान मे रत्त हो गये थे।

बेटा! इस सम्बन्ध में मैं तुम्हें कोई विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार-सागर से पार हो जायें। आओ, मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार क्या? हम प्राणेश्वर को जानने वाले बनें, जो प्राणों का भी सखा है। प्राण को देने वाला है। प्राण-अभ्युदय होता रहता है, हम उस सखा को जान करके सागर से पार हो जायें।

आओ, मेरे प्यारे! मैं कोई विशेषता में तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ। **विचार केवल यह कि हम परमपिता परमात्मा की महत्ती का गुणगान गाते हुए, इस सागर से पार हो जायें। जो बेटा! मान-अपमान वाला जगत् है, बेटा! इससे हम दूरी चले जायें। मेरे प्यारे! यह विचार है, और परमपिता परमात्मा जो जड़ और चेतनता में रत्त हो रहा है, जड़ और चेतनता को गतिवान बना रहा है, उस सागर में प्रवेश होते हुए परमपिता परमात्मा को जड़ और चेतनता में दृष्टिपात् करते रहें।** मेरे प्यारे! देखो कल मैं तुम्हें मानो देखो एक ऋषि के आश्रम में ले जाऊंगा और देखो जहाँ दीपावली बनाई जाती है। वे दीपक कैसे दीपगान से कैसे निर्माणित हो जाते हैं? ये जो दीप हैं, कैसे दीपमालिका बन करके रहते हैं? ये चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा।

बेटा! आज का विचार क्या? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गा करके इस सागर से पार हो जायें। बेटा! देखो, हम बड़े गम्भीरतम रहस्य में गमन करते रहते हैं। किसी काल में यह प्राण-विद्या, बेटा! हमारे वैदिक साहित्य में आती रही है, **जैसे यज्ञमान, बेटा! देखो अग्नि को प्रदीप्त करता है और अपनी वाणी से 'स्वाहा' कह रहा है, वह भी मानो देखो उसका एक प्राण-सखा है, जो मुनिवरो! देखो जिसका 'स्वाहा' द्यौ-लोक में अग्नि की धारा पर विद्यमान हो करके गमन करता है।**

यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा, शेष चर्चाएं, मैं तुम्हें कल प्रकट करूंगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की महत्ती और अनन्तता में सदैव रत्त होते रहें और उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानते हुए इस सागर से पार हो जायें! यह है, बेटा! आज का हमारा मन्तव्य। क्या, प्राण-सखा कितना विचित्र है। यह चर्चाएँ हम कल भी प्रकट करेंगे। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

ई-४५,
लाजपत नगर-III, न॰ दिल्ली
१८-५-८६

# आत्मा की ऊर्ध्वगति

देखो, मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। हमारे यहाँ, परम्परा से ही उस पवित्र वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जो मानव को विचित्र बनाने वाली है। वह मानव के अन्तःकरण को पवित्र बना देती है। **जब मानव का हृदय, अन्तःकरण पवित्र हो जाता है तो उस मानव के हृदय में एक उज्ज्वल और अनुपम ज्योति उत्पन्न होने लगती है। उसमें ऊर्ध्वगति होती है और वह जो ऊर्ध्वगति होती है, वह परमपिता से मिलान कराने वाली होती है।** क्योंकि वह जो ऊर्ध्वगति है, वह मानव के जीवन का उत्थान कर देती है और जब उस ज्योति से ज्योति का मिलान हो जाता है तो वह एक परमानन्द को प्राप्त हो जाता है। उसी को हमारे आचार्यों ने परम आनन्द कहा है। तो आज हम अपने जीवन को उज्ज्वल बनाते हुए उस परमपिता परमात्मा का गुणगान करते चले जाएं।

## आनन्द की पिपासा

प्रत्येक मानव आनन्द का पिपासु रहता है। मेरी पवित्र माता है, वह भी आनन्द चाहती है, ऋषि मण्डल है वह भी अनुसन्धान करते हुए केवल आनन्द के लिए तपस्या में परिणित होते हैं। एक राष्ट्रपिता बना है कि मैं स्वयं सुखद बन जाऊं और मेरे राष्ट्र में रहने वाली जो प्रजा है उसके लिए भी ऐसा नियम होना चाहिये, जिससे मेरी प्रजा सर्वत्र आनन्द में ओत-प्रोत हो जाये। कौन संसार में आनन्द नहीं चाहता? जिस प्राणी के द्वारा जायेंगे वही आनन्द का पिपासु है। आज तुम मृगराज के समीप पहुंचो, वह भी

आनन्द को चाहता है। नाना योनियों में जाओगे, तुम्हें वहाँ भी आनन्द की पिपासा प्राप्त होगी।

मुनिवरो ! मानव को ऐसी पिपासा क्यों हैं? वह भी तो मानव को विचार-विनिमय करना है। क्योंकि पिपासा-पिपासा में ही नाना द्रव्य को एकत्रित करने का प्रयास प्राणी करता है और भी नाना कार्यों को करने में वह सफलता को प्राप्त होता रहता है। जव वह द्रव्य से ऊव जाता है उस समय वह चाहता है कि द्रव्य को कहीं धर्म कार्य में परिणित करता रहे। धर्म की मीमांसा को जानने की उसकी उत्कट इच्छा रहती है। वह साधक आगे चलता हुआ केवल आनन्द की पिपासा के लिए नाना ऋषि-मुनियों के दर्शनार्थ उनकी मीमांसा को और उनके हृदय के जो उद्गम विचार हैं उनको सुनने की उसकी उत्कट इच्छा रहती है और नाना प्रकार के सुख के लिए प्रत्येक प्राणी इस संसार में सुख की मीमांसा में परिणित रहता है। हमारे यहाँ विद्युत् का प्रकाश परम्परा से एक महत्त्व को प्राप्त होता रहा है। प्राणी विद्युत के प्रकाश में जाता है कि यहाँ मुझे आनन्द प्राप्त होगा। नाना कीट पतंग योनियाँ आ जाती हैं। क्यों आ जाती हैं? यहाँ प्रकाश है, आनन्द प्राप्त होगा। बेटा! वास्तव में वहाँ आनन्द प्राप्त नहीं होता।

## हृदय रूपी गुफा

**मानव को अपनी वास्तविक आनन्द की पिपासा को जानना है तो मानव को अपनी हृदय की गुफा में पहुंच जाना चाहिये। वहाँ जो हृदय रूपी गुफा है, वह जो अपना प्यारा प्रभु है वह हृदय में ही तो ओत-प्रोत है। उस हृदय को जान लेने के पश्चात् मानव की सारी पिपासा शान्त हो जाती है।**

मेरे प्यारे ऋषिवर ! मैं कल के वाक्यों में कुछ आत्मा का विवरण

देता चला जा रहा था कि आत्मा कितना सूक्ष्म है। मैं उसका प्रमाण भी दे रहा था। मेरे आचार्यजनों और भी आदि ऋषि-मुनियों ने इसके सम्बन्ध में नाना विचार दिये हैं। मैं तो केवल उन ऋषियों का उच्चारण किया हुआ, उनका मन्थन किया हुआ जो उपदेश, विचारधारा है उसका नित्यप्रति परिचय दे देता हूँ। प्रत्येक शब्द का परिचय कराता रहता हूँ

## पिपासा और बाधा

प्रत्येक मानव के मस्तिष्क में एक आकांक्षा होती है और वह क्यों होती है? क्योंकि वह आनन्दमय अवस्था से आया है और अल्पज्ञता को परिणित हो गया, अज्ञान में परिणित हो गया। इस नाना प्रकार की माया ने मानव को इतना कटिवद्ध कर लिया, अपने में वशीभूत कर लिया। जब भी इसे कभी छुटकारा प्राप्त होता है, इस माया से दूर होकर उसीकाल में अपने प्यारे प्रभु की पिपासा में कटिवद्ध हो जाता है और इसकी धारा बन जाती है कि मेरी गति ऊर्ध्व बन जाये और मैं अपने प्यारे प्रभु से अपना मिलान करूं।

## मान-अपमान के संस्कार

मानव के द्वारा जो एक महान् संस्कारों का समूह बना हुआ है, संसार में आवागमन की जो एक प्रतिभा बनी हुई है, वे संस्कार मानव को वाध्य करते रहते हैं। कहीं अपमान बाध्य करता है तो कहीं मान करता है। **पिपासा होते हुए भी उस मार्ग को अपना नहीं पाता। इसका मूल कारण है कि प्रकृति से हमारा मन इतना मलिन हो गया है कि हम ऊर्ध्वगति की तथा आनन्द की पिपासा ही पिपासा करते हैं परन्तु उस तक जाने का प्रयास नहीं कर पाते। क्योंकि मान-अपमान में ही हम परिणित हो जाते हैं।**

महर्षि कपिल जी ने बड़े सुन्दर शब्दों में कहा है—"जब मानव की तृष्णा अधिक बलवती हो जाती है, मान-अपमान में इतना कटिबद्ध हो जाता है कि वह मान ही मान चाहता है, अपमान नहीं चाहता।" जिसका मान होता है तो अपमान कौन चाहेगा? अपमान की पिपासा किसे रहेगी? हमारे ऋषिमुनियों ने तो यह कहा है कि मानव का अपमान होना चाहिये। और यदि उस अपमान के अनुसार एक विचारधारा प्रकट कर रहा है कि यह मानव अप्रेत है। परन्तु यह केवल उसका अनुमान मात्र है। यदि वह उन विचारों का बन जाता है तो जानो कि वह नारकिक प्राणी बन गया है और यदि वह मानव उसके अनुसार नहीं है, कल्पना कर रहा है, मिथ्या कल्पना कर रहा है, मान का पाठ उसके द्वारा आ गया है तो वह मानव भी नारकिक हो जाता है।

## चेतना, अग्नि और विद्युत की ऊर्ध्वगति

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें इन वाक्यों पर विचार-विनिमय तो करना ही होगा। आज इस जन्म में तो नहीं, तो द्वितीय जन्म में करना होगा। परन्तु परमात्मा की उस चेतना के ऊपर तो विचार-विनिमय अवश्य करना होगा। उस चेतना का स्वभाव है, ऊर्ध्वगति होने का। जैसे यज्ञशाला में अग्नि प्रदीप्त हो रही है उसका स्वभाव है ऊर्ध्वगति होना। यह ऊर्ध्वगति क्यों बन जाती है? क्योंकि **जितनी विद्युत की गति है, महत्ता है, सूक्ष्म अग्नि की जो चेतना है वह अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत है। सूर्य की किरणों में ओत-प्रोत है, नाना तारा मण्डलों में ओत-प्रोत है इसलिए उसकी ऊर्ध्वगति हो जाती है और उसकी ऊर्ध्वगति होती रही है क्योंकि वायु भी ऊर्ध्वगति को ग्रहण करने लगती है।** और, वह जो ऊर्ध्वगति है, उसमें ही व्यापकवाद होता है। उसमें ही एक महान् प्रसारण-शक्ति होती है। वह जो प्रसारण शक्ति है वह उस मानव के विचारों को

वायुमण्डल में ऐसे प्रसारित कर देती है जैसे यज्ञशाला की अग्नि सुगन्धि को ले करके वायु को दे देती है और वायु उस सुगन्धि को देवताओं को अर्पित करती चली जाती है।

## मृत्यु के पश्चात् आत्मा की गतियाँ

आज मैं अधिक वाक्य प्रकट नहीं करना चाहता हूँ। ये ऐसे विषय हैं, जिन पर विचार-विनिमय करना हमारे लिये बहुत अनिवार्य है। बहुत पूर्वकाल में मैंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि यह जो आत्मा है यह शरीर को त्याग करके कहां चला जाता है? देखो हमारे यहाँ बालक नचिकेता ने यमाचार्य से कहा था कि—"प्रभु! यह आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहाँ चला जाता है?" एक समय अश्विनी कुमारों के मध्य में महर्षि शाण्डिल्य जी विराजमान थे। महर्षि शाण्डिल्य जी से अश्विनी कुमारों ने कहा कि—"प्रभु! यह आत्मा शरीर को त्याग करके कहाँ चला जाता है?" महर्षि शाण्डिल्य जी ने कहा कि—**"आत्मा इस शरीर को त्याग करके यम को प्राप्त हो जाता है। यम वायु को कहते हैं। यम की तीन प्रकार की श्रेणियाँ होती हैं। १. सतोगुणी, २. रजोगुणी और ३. तमोगुणी प्रवृत्ति होती है।** यदि आत्मा रजोगुण में इस शरीर को त्यागता है तो रजोगुणी यम को प्राप्त हो जाती है और यदि आत्मा तमोगुण में शरीर को त्यागता है तो वह तमोगुण को प्राप्त हो जाता है और यदि सतोगुण में त्यागता है तो वह सतोगुण को प्राप्त हो जाता है और जो देवत्त्व को अपना लेता है वह देवत्व को प्राप्त हो जाता है। बेटा! यम की तीन श्रेणियाँ हैं और यम से जो ऊपर का भाग है वायु का उसे देववत् कहते हैं। वहाँ देवताओं की 'देवाम्' नाम की वायु रमण करने वाली है वह इसको अपना लेती है।

## दस द्वार

इस सम्बन्ध में मुझे एक वाक्य स्मरण आता चला आ रहा है। इस मानव-शरीर में, इस 'अयोध्या नगरी' में दस द्वार होते हैं। हमारे दो चक्षु हैं, दो श्रोत्र हैं, दो घ्राण हैं, एक मुखारबिन्दु है, गुदा (गुदा) है औरएक उपस्थ है। ये नौ द्वार माने गये हैं, और दसवां द्वार हमारे यहाँ ब्रह्मरन्ध्र को माना गया है।

## ब्रह्मरन्ध्र, त्रिवेणी और कुण्डलिनी

ब्रह्मरन्ध्र उसको कहते हैं, जो हमारे नाभिचक्र से तीन नाड़ियाँ चलती हैं, जिसको इडा, पिंगला और सुपुम्ना कहा जाता है, वे हृदय के द्वार से होती हुईं, कण्ठचक्र से होती हुईं, घ्राण के स्थान और त्रिवेणी में जा करके तीनों का मिलान हो जाता है। वहाँ, बेटा! यह योगी का आत्मा वहाँ पहुँचकर स्नान करता है। त्रिवेणी उसको कहा जाता है जहाँ गङ्गा, यमुना, सरस्वती, तीनों का मिलान होता है। इडा, पिंगला और सुषुम्ना ही गङ्गा, यमुना, सरस्वती कहलाई गई हैं। जिसको हमारे यहाँ अग्रभाग भी कहा गया है। जो हमारा घ्राण से ऊपर लघु मस्तिष्क है वहाँ जाकर इन तीनों का मिलान होता है। बेटा! वे नाड़ियाँ एक बन करके पांचाङ्ग नाम की नाड़ी कहलाती है। इसका सीधा सम्बन्ध लघु-मस्तिष्क से और ऊर्ध्व-मस्तिष्क दोनों से होकर ब्रह्मरन्ध्र में भी उनका सम्बन्ध होता है। ब्रह्मरन्ध्र में सम्बन्ध होता हुआ रीढ़ के विभाग से होता हुआ, जहाँ कुण्डलिनी नाम की जो नाड़ी है, कुण्डलिनी का जहाँ स्थान होता है वहाँ उस नाड़ी का अन्तिम भाग होता है।

## चक्षु द्वारों से जाने वाली आत्माएं

हमारे ऋषि-मुनियों ने ऐसा कहा है कि चक्षुओं में भी भाग होते हैं।

एक चक्षु को हमारे यहाँ 'विश्वामित्र' कहते हैं एक चक्षु को हमारे यहाँ 'मरेणिति' कहते हैं। जो चक्षुओं का सूर्य-भाग है उसके द्वार पर जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता है तो वह आत्मा सूर्यलोक को प्राप्त हो जाता है। जो 'चन्द्रायण चक्षु' से आत्मा शरीर को त्यागता है तो वह चन्द्रमा को प्राप्त हो जाता है।

## श्रोत्र मार्गों से जाने वाली आत्माएं

इसी प्रकार हमारे श्रोत्रों मेंएक 'भारद्वाज' है और एक 'कश्यप' है। दोनों हमारे श्रोत्र कहलाए गए हैं। यदि 'भारद्वाज' से मानव इस शरीर को त्यागता है, आत्मा इस द्वार से जाता है तो रजोगुणी प्रवृत्ति होती है जिसमें वायु-लोक प्रधान होते हैं उसको प्राप्त हो जाता है और जो 'कश्यप द्वार' से आत्मा त्यागता है वह आत्मा आरूणी लोकों को प्राप्त होता है।

## मुख और घ्राण द्वारों से जाने वाली आत्माएं

मेरे प्यारे ऋषिवर! यदि यह आत्मा शरीर को मुखारबिन्दु से त्यागता है तो उसमें अग्नि के प्रभाव से तेजस्वी होता हुआ रजोगुण को प्राप्त होता है। वह राष्ट्रीय पुरुष बन जाता है। मानव बन जाता है। इस घ्राण के एक सूर्य स्वर है, द्वितीय चन्द्र स्वर कहलाया जाता है। जो आत्मा सूर्य स्वर से जाता है वह प्राण की विशेषता को लेता हुआ वह आत्मा ऊंचे कुलों में जन्म लेकर और उस साधना में परिणित हो जाता है। वह सतोगुणी होता है और जो चन्द्रायण से त्यागता है उसका आत्मा सतोगुण और तमोगुण दोनों से मिश्रित होते हुए अपने कर्त्तव्य में इतना पारंगत नहीं होता। वह कर्म तो शुद्ध पवित्र कर सकता है परन्तु उस पर मानव का विश्वास अधिक नहीं हो पाता।

## उपस्थ और गुदा द्वारों से जाने वाली आत्माएं

इसी प्रकार जो उपस्थ इन्द्रियों से शरीर को त्यागता है वह आत्मा इस संसार में उन योनियों को प्राप्त होता है जो देखो मरने और जीने पर लगी रहती हैं। आज जीवन है, कल मृत्यु है। जो गुदा के द्वारा त्यागता है वह आत्मा इस संसार में नारकिक लोकों को प्राप्त हो जाता है। उसे नारकिक योनियाँ प्राप्त हो जाती हैं। वे जो नारकिक योनियां होती हैं जहाँ उसे अन्धकार ही अन्धकार प्राप्त होता है, प्रकाश का अंकुर भी प्राप्त नहीं हो जाता।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं इस वाक्य को गम्भीरता में न ले जाऊं। यह विषय तो बहुत गम्भीर बन जाएगा। मैं इन वाक्यों को इसलिए प्रकट कर रहा हूँ कि **हे मानव! ऐसा प्रयास कर की तेरा अन्तरात्मा घ्राण से शरीर को त्यागने वाला बने। ऐसा होने पर तू सतोगुणी बनेगा, रजोगुणी इतना नहीं बनेगा। जिसका आत्मा ब्रह्मरन्ध्र के द्वारा जाता है सुषुम्ना और पिंगला के द्वारा जाता है वह आत्मा देवलोक को प्राप्त हो जाता है। वह देवताओं के समाज में चला जाता है।**

## देवता

देवता कौन होते हैं? जो देववत् होते हैं, जो देते हैं। क्या देते हैं? जो उनका परिश्रम होता है। पुरुषार्थ होता है उसे देते चले जाते हैं। आज हमें देवता बनना है, सतोगुणी बनना है, सूर्य लोकों को प्राप्त होना है।

## पाँच तत्त्वों की प्रधानता वाले लोक

संसार में बेटा! पांच तत्त्व हैं, उन पांच तत्त्वों में जितने इस प्रभु के

राष्ट्र में लोक-लोकान्तर हैं, जितने भी मण्डल हैं उनमें कोई न कोई तत्त्व प्रधान होता है। जैसा हमारे यहाँ पृथ्वी मण्डल पर पार्थिव तत्त्व प्रधान होता है ऐसे ही चन्द्रमा में वायु और जल प्रधान है। ऐसे ही सूर्य में अग्नि प्रधान है। इसी प्रकार जिसे हम ध्रुव कहते हैं उसमें वायु प्रधान है और जैसे हमारे यहाँ बृहस्पति है, उसमें जल तत्त्व प्रधान है। पांचों तत्त्वों की प्रधानता के द्वारा सर्वविश्व की रचना हुई है। जिसमें असंख्य लोक-लोकान्तर हैं।

हमारे यहाँ तीन प्रकार के सौर-मण्डल माने गये हैं एक सौर मण्डल का अधिपति सूर्य कहलाया गया है और दूसरे सौर मण्डल का अधिपति बृहस्पति कहलाया गया है और तीसरे सौर मंण्डल का अधिपति ध्रुव कहलाया गया है। इसमें ऐसे-ऐसे असंख्य मण्डल रहते हैं। एक-एक सौर मण्डल में अरबों-खरबों लोक-लोकान्तर होते हैं। ऐसा हमारे यहाँ माना गया है और प्रत्येक सौर मण्डल के आधार पर एक आकाश गङ्गा होती है जिस आकाश गङ्गा में हमारे भौतिक वैज्ञानिकों ने यहीं तक जाना है। वह जो आकाश गङ्गा है उसमें एक नील और अरबों-खरबों के लगभग लोक-लोकान्तर कहलाये गये हैं। उसकी गणना नहीं की जा सकती। यह तो प्रभु का विज्ञान है, मैं इसको अधिक विस्तार नहीं देना चाहता हूँ।

## संस्कार, तत्त्व और योनि-विचार

वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि यह जो आत्मा है इस शरीर को त्याग करके कहां जाता हैं? **जैसा जिसका संस्कार होता है, जैसा जिस आत्मा के जाने का द्वार होता है उसी को वह प्राप्त हो जाता है। जैसे चक्षुओं में सूर्य प्रधान है जिसको अग्नि कहते हैं और हमारे घ्राण में प्राण प्रधान है और मुखारबिन्दु में अग्नि प्रधान है और श्रोत्रों में दिशाएं प्राकृत्तम आकाश प्रधान है। उपस्थ और**

**(गुदा) के द्वारा पार्थिव और नारकिकता दोनों की प्रधानता मानी गई है। जिस द्वार से जो आत्मा जाता है, उन्हीं प्रवृत्तियों को वह आत्मा प्राप्त होती रहती है।**

मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं इस वाक्य को गम्भीर नहीं बनाना चाहता हूँ। केवल वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि आज हम इन वाक्यों पर विचार-विनिमय करते चले जाएं। यह तो एक कर्म का विचार है, यह तो कर्म की एक धारा है जिसको हम अभी-अभी उच्चारण करने चले। परन्तु जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता है, बेटा! सबसे प्रथम यह वायुमण्डल में रमण करता है, वायुमण्डल में नाना प्रकार की श्रेणियां होती हैं। पांच प्रकार की श्रेणियां होती हैं। एक तो जिसमें पार्थिव तत्त्व रमण करते हैं, पार्थिव परमाणुओं का समूह हो और दूसरी श्रेणी वह होती है जिसमें जल परमाणु अधिक रमण करने वाले हों और तृतीय वह जिसमें अग्नि के परमाणु रमण करने वाले हों और चतुर्थ जिसमें प्रकाश-परमाणु अधिक हों और पंचम जिसमें वायु के स्वयं परमाणु अधिक रमण करने वाले हों। उन्हीं को यह आत्मा प्राप्त होता रहता है। **अब जिसका जैसा कर्म होता है उन कर्मों में भी किसी में अग्नि प्रधान है, किसी में पृथ्वी प्रधान है, इसी प्रकार किसी में वायु प्रधान है, जैसी जिसकी प्रधानता मानव की प्रवृत्तियों में होती है, उन्हीं प्रवृत्तियों के आधार पर इस आत्मा का शरीर त्यागने के पश्चात् मन्थन होता है और वैसी योनि इसको प्राप्त होती रहती है। यह वेद का विचार कहता है।**

## आनन्दवादी का विवेकयुक्त क्रियात्मक ज्ञान

विचारना यह है कि हम अपने जीवन में इस संसार का कितना मन्थन कर सकते हैं। संसार में प्रत्येक मानव को पिपासा रहती है आनन्द

की, परन्तु आनन्द उस काल में प्राप्त होता है, जब ज्ञान होता है और ज्ञान के साथ में विवेक होता है। यदि ज्ञान होता है और विवेक नहीं होता, उसके साथ हमारी तपस्या नहीं होती, उसके अनुकूल हम चल नहीं पाते तो हमारा जीवन संसार में निरर्थक होता है। उस मानव का कोई मूल्य नहीं होता।

मेरे प्यारे ऋषिवर ! एक मानव शाब्दिक ज्ञान में रमण कर रहा है, शब्दों का ज्ञान है परन्तु **क्रियात्मक जीवन नहीं है तो मानव आनन्द को प्राप्त नहीं होगा!**

## ब्रह्म-जिज्ञासु की मान-अपमान-उपरामता

जिसे केवल शाब्दिक ज्ञान होता है, तपस्या उसके साथ नहीं होती वह मानव सदैव अपमान में परिणित रहता है। पर मानव सदैव मान चाहता रहता है, वह अपमान नहीं चाहता। मान की पिपासा उसे सदैव लगी रहती है कि मेरा राजा-महाराजाओं के यहाँ मान हो और मेरा आदर सत्कार हो। वह निरादर नहीं चाहता। अरे, बुद्धिमान! जब आदर तू चाहता है ती निरादर कौन चाहेगा इस संसार में? निरादर चाहने वाले व्यक्ति कौन हैं? एक मनव कीड़े के समान है जो अपमान में परिणित ही हो रहा है, उसका तो कर्म ही तुच्छ है। तो हे मानव! जब तू मान का उत्सुक है तो अपमान को कौन सहन करेगा? यह हमें विचार-विनिमय करना है।

जो वैदिक विचारधारा वाले प्राणी होते हैं वे गम्भीरता से विचार-विनिमय करते हैं। विचार क्या है कि जो हम मान में परिणित रहते हैं। हमें ज्ञान है, विवेक है, तो विवेक में मान अपमान नहीं होता। **केवल शाब्दिक ज्ञान में मान-अपमान को सहन करता रहता है और उसमें अपने को बहुत बुद्धिमान स्वीकार करने लगता है। परन्तु जब विवेक होता है, क्रियात्मक जीवन होता है, तपस्या में परिणित होता है, प्रभु का**

**जिज्ञासु होता है** तो बेटा! प्रभु के जिज्ञासु को संसार में न तो निराशा होती है और न आनन्द की पिपासा होती है। प्रभु का जिज्ञासु सदैव अपने को आत्मा में लीन कर लेता है और आत्मा की जो प्रवृत्ति है, वह ब्रह्म की चेतना में परिणित हो जाती है। उसके लिए यह संसार एक अन्धकार के तुल्य हो जाता है तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज का वाक्य क्या कह रहा है? हम अपने विचारों को गम्भीर न बनाते चले जायें। केवल विचारों में एक महत्ता देना चाहते हैं। **हृदय से जो उच्चारण करने वाला शब्द है वह मानव के हृदय को विचित्र बना देता है।**

आज मैं कोई अधिक चर्चा तो करने नहीं आया हूँ। केवल शाण्डिल्य मुनि की चर्चा प्रकट कर रहा था। महर्षि शाण्डिल्य जी ने कहा कि आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहाँ जाता है। मानव शरीर को त्याग करके अपने-अपने कारणों में चला जाता है। उसी परिणाम को प्राप्त होता है जो इसके कर्मों का फल भोग है। महर्षि शाण्डिल्य जी ने यह निर्णय दे दिया, विचार व्यक्त कर दिया कि वास्तव में हम 'उस चेतना' की ही पिपासा में संलग्न रहें। **आज मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि संसार का कर्त्तव्य नहीं करना चाहिये। संसार का जो कर्त्तव्य है, उस कर्त्तव्यवाद में ही चेतना होती है, महत्ता विराजमान होती है, उस महत्ता को जानने का प्रयास होना चाहिये।**

आज हमें देव-लोक को प्राप्त होना चाहिये। बेटा! जो अन्तरिक्ष के परमाणु हैं, जहाँ अन्तरिक्ष तत्त्व प्रधान है, उन लोकों में जब हम रमण करते हैं तो वह एक देवयान मार्ग कहलाया गया है। ये भी दो प्रकार के मार्ग हैं। एक पितृयान होता है और दूसरा देवयान होता है। मैंने इसकी मीमांसा पूर्वकाल में की है। कल मैं इसकी मीमांसा अधिक कर सकूंगा। आज मुझे समय इतना आज्ञा नहीं दे रहा है। आज तो केवल वाक्य उच्चारण करने

का अभिप्रायः यह है कि हम अपने मानवत्व को सुन्दर बनाते चले जाएं और अपनी मानवीय ज्योति को उज्ज्वल बनाते हुए हम अपने कर्मों पर विचार-विनिमय करते चले जायें कि हम कैसा कर्म करें? कैसी हमारी विचित्र धारा होनी चाहिये?

**हे मानव! तू आनन्द और सुख को चाहता है, आनन्द की पिपासा है, तो तू इस संसार में ऊँचे से ऊँचा कर्म कर और अपनी आत्मा को ऊर्ध्वगति के द्वारा इस शरीर को त्यागने का प्रयास कर। ऐसा योगीजन करते आये हैं। जैसी हमारी परम्परा है, प्राण के द्वारा शरीर को त्यागो उस समय तुम ऊर्ध्व सतोगुण में आनन्द को प्राप्त हो जाओगे।** मेरे प्यारे ऋषिवर। आज हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह है कि हम ऊँचे से ऊँचा कर्म करें जिससे हमारा जीवन सुन्दर बने। कल्पना हमारी सुन्दर हो।

## दो चेतनाओं का योग

जैसा मैंने कल के वाक्यों में कल्पवृक्ष की चर्चा प्रकट की थी। इसी प्रकार आज भी हमारा यह वाक्य कह रहा है कि आत्मा इस शरीर को त्याग करके कहाँ जाता है? यह तो बेटा! एक महान् विषय है परन्तु यहाँ कर्म को विचारा जाये। **हम प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को विचारने वाले बनें। उन विषयों को हम सुगठित बनाएं और हृदय रूपी जो यज्ञशाला है जिसमें एक चेतना जागरूक हो रही है, उस चेतना को जागरूक करें और जब वह जागरूक हो जायेगी तो तुम्हारा सम्बन्ध उस बाह्य चेतना से सम्बन्धित हो जायेगा। जब दोनों चेतना एक हो जायेंगी तो वहाँ परम आनन्द प्राप्त हो जाएगा। एक आनन्द की प्राप्ति होने लगेगी।**

यह है, बेटा! आज का हमारा वाक्य। आज मैं कोई चर्चा तो प्रकट करने आया नहीं हूँ। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते रहें। अपने प्यारे प्रभु की महिमा को विचारते रहें। यही हमारे जीवन का उद्देश्य है। यही मानव का उद्देश्य है। बेटा! नाना प्रकार के द्रव्यवेत्ता, राजा-महाराजा सबको त्याग करके बेटा! यज्ञ में आहुति दे देते हैं। हमारे यहाँ राजा रघु का भी ऐसा साहित्य प्राप्त होता है, दृष्टिपात् भी किया गया है कि उन्होंने सर्व द्रव्य को यज्ञ की अग्नि में प्रविष्ठ कर दिया। इसी प्रकार मानव को आन्तरिक और बाह्य शुभ कर्म दोनों करने चाहिये। जिससे हमारे जीवन की प्रतिभा, मानवता, सुन्दरता को प्राप्त हो जाये। वैदिक परम्परा के आधार पर अपने जीवन को क्रियात्मक वनाने का प्रयास करें। यही हमारे जीवन का संसार में आने का लक्ष्य है। यह है आज का हमारा वाक्य। अब कल समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चा कल प्रकट करूंगा।

महानन्द जी–"धन्य हो, भगवन्! गुरुदेव! आज का आपका वाक्य तो हमें बहुत ही प्रिय लगा। परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म रहा।"

पूज्यपाद–(हास्य) बेटा! समय आता रहता है, व्यतीत होता रहता है। उस समय में नाना प्रकार की विचारधाराएं प्रारम्भ हो जाती हैं और वे समाप्त भी हो जाती हैं। बेटा! समय कोई सूक्ष्म नहीं होता।"

महानन्द जी–"जैसी भगवन् आपकी इच्छा।"

पूज्यपाद–तो मुनिवरो! आज के हमारे इन वाक्यों का अभिप्रायः यह कि हम ऊँचे से ऊँचा कर्म करते हुए अपने जीवन को मानवीय, देववत् और विचित्र बनाने का प्रयास करें। यह है, बेटा! आज का हमारा वाक्य। मैं आत्मा के सम्बन्ध में इस वाक्य को और भी गम्भीरता में ले जाने का

प्रयास करता रहूंगा, जब-जब वेदों का पाठ आता रहेगा। यह बहुत गम्भीर और एक महान् विषय है, जिसमें विलम्बता की आवश्यकता रहती है। मानव को विलम्ब ही रहता है क्योंकि आत्मा का इतना गहन विषय होता है।

## मीमांसा-दर्शन

संसार में तीन प्रकार की मीमांसा होती हैं—एक आत्मिक मीमांसा है, एक प्रकृति की मीमांसा है और एक ब्रह्म की मीमांसा है। उन तीनों मीमांसाओं को आचार्यों ने कहा कि इन्हें दो मीमांसाओं में ले जाओ। ऋत् और सत् में ले आओ। ऋत् और सत् की मीमांसा रह जाती है, और भी महापुरुषों से ब्रह्मवेत्ताओं ने कहा कि इन दोनों में से भी सूक्ष्म करो। मानो एक चेतना में आ जाओ। तो अन्त में इसकी एक ही मीमांसा चेतना रह जाती है। मीमांसा प्रारम्भ से तीन चलती हैं, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति और जब मीमांसा करते हुए इनका अन्त होता है तो अन्त में ज्योति आ जाती है और चेतना आ जाती है और 'नेति-नेति' कहकर शान्त कर दिया जाता है।

यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा। इसके पश्चात् हमारी वार्त्ता समाप्त।

सिकन्दराबाद
२८–३–७४

# मृत्युञ्जयी दर्शन

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चैतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात् आ रहा है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात् आ रहा है। हम उस परमपिता परमात्मा की प्रायः महिमा का वर्णन करते रहते हैं, क्योंकि प्रत्येक वेद-मन्त्र के द्वारा हम उस महामना जो हमारा पुरोहित है अथवा हमारा निर्माण करने वाला है और जगत् का नियन्ता है, उस महान् प्रभु की महिमा का गान गाते चले जा रहे थे।

## आपोमयी ज्योति

आज का हमारा वेदमन्त्र उस आपोमयी ज्योति की महिमा का वर्णन कर रहा था, क्योंकि आपोमयी जो ज्योति है यह मानवीयता में सदैव निहित रहती है और प्रत्येक मानव उस आपोमयी ज्योति के आंगन में सदैव निहित रहता है। मानो देखो, आपोमयी एक अनुपम ज्योति है जो ज्योति, मुनिवरो! माता के गर्भस्थल से ले करके और 'देवत्त्वम्' क्या सूर्य और द्यौ-लोक तक वह ज्योति ही बनी रहती है। तो विचार क्या? मानो देखो विज्ञान के वांगमय हमें भी वह प्रायः ज्योति नई बनी रहती है। तो आज का हमारा वेदमन्त्र हमें आपोमयी ज्योति की आभा का प्रायः दिग्दर्शन करा रहा था और यह

हमें प्रेरणा प्राप्त हो रही थी कि महान् वह जो प्रजापति है जो स्वामीत्व है, हम उस महान् देव की महिमा का गुणगान अथवा उसके गुणों की प्रतिभा में हम सदैव रत्त रहें !

## मानवीय ज्योति

जहाँ हमारा वेद-मन्त्र यह कह रहा है, वहाँ वेद का मन्त्र, बेटा! विष्णु की याचना भी कर रहा है। वह विष्णु, जो हमारा कल्याण करने वाला है, जो मानो देखो रक्षक है, हम उस महान् विष्णु को अपने अन्तर्हृदय में धारण करते चले जायें—जिससे, बेटा! हम अपने में मानवीय ज्योति को अपनाते हुए सागर से पार हो जायें।

## आत्म-ज्योति

मेरे प्यारे! देखो, तीसरा विषय 'ब्रह्मण आत्मा लोकं बह्मेक वर्चो देवाः' वह जो आत्मा है वह वर्चोमयी देवत्त्व को प्राप्त होती रहती है जो मानो देखो आत्मा की ज्योति में ज्योतिवान् रहते हैं। और मानो शरीर में जब वह ज्योति नहीं रहती तो मानव एक शून्यता को प्राप्त हो जाता है।

## भौतिक-आध्यात्मिक उड़ान

आओ, मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष विवेचना नहीं करना चाहता हूँ। आज का हमारा वेद-मन्त्र दो प्रकार की आभाएं हमें प्रकट कर रहा था—एक वह मानो देखो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता है और दूसरा भौतिक विज्ञानवेत्ता है, बेटा! जो अपने में भौतिक उड़ानें उड़ते रहते हैं। हमारे यहाँ, उड़ान भी दो ही प्रकार की होती हैं—एक उड़ान को हमारे यहाँ भौतिक विज्ञानमयी कहा जाता है, जिसमें अणु और परमाणु और स्रेणु के ऊपर

प्रायः विचार-विनिमय होता रहता है और द्वितीय मानो आध्यात्मिकवाद है, जिसमें आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता आत्मा के ऊपर प्रायः अपने में चिन्तन करते रहते हैं और यह विचारते रहते हैं कि हम आत्मवत् बन जाएं, हम आत्मामयी ज्योतिवान् बन करके मानो उस परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाएं।

बेटा! एक वह मानव है, एक वह मनस्त्व कहलाते हैं, जो आत्मा के ऊपर आत्मवान बनना चाहते हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें आत्मवेत्ताओं की चर्चा करने के लिए तो नहीं, केवल संक्षिप्त परिचय देने के लिए आया हूँ। **आत्मा ही, बेटा! देखो ज्योतिवान् कहलाता है और यही संसार में मानो प्रकाश का द्यौतक बना हुआ है।** मेरे प्यारे! इससे पूर्व काल में हमने यह वर्णन करते हुए कहा था कि प्रत्येक मानव मृत्यु से मानो दूरी होना चाहता है और अपने अन्तर्हृदय में यह विडम्बना लगी रहती है कि हम मानो देखो आत्मवान बन करके सागर से पार हो जाएं, अन्धकार हमारे समीप न रहे। अन्धकार से वे मानव दूरी होना चाहते हैं।

### जमदग्नि-आश्रम में आत्म-चर्चा

मेरे प्यारे! आओ, आज मैं तुम्हें मानो एक क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ, बेटा! एकान्त स्थलियों में विद्यमान हो करके ऋषि-मुनि, बेटा! आत्मा की प्रायः चर्चा करते रहे हैं और मृत्यु के ऊपर विचार-विनिमय करते रहे हैं। तो मेरे प्यारे! मुझे वह काल स्मरण आ रहा है, जिस काल में, बेटा! देखो महात्मा जमदग्नि के यहाँ ऋषि-मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ जिस समूह में, बेटा! देखो चाक्राणी गार्गी, सोमकेतु ऋषि महाराज, ब्रह्मचारी कबन्धी, ब्रह्मचारी गार्गेपथ्य, और ब्रह्मचारी यज्ञदत्त, देवर्षि नारद और श्वेतकेतु मुनि, महर्षि विभाण्डक, महर्षि वैशम्पायन और महर्षि प्रवाहण,

हो जाना ही मानो देखो अन्धकार और मृत्यु के रूप में वर्णन किया गया है।" परन्तु इसमें श्वेतकेतु मुनि बोले–"हे दिव्या! मानो यह हमारे विचार में नहीं आ रहा है, क्योंकि शरीर और आत्मा तो विच्छेद हैं। यहाँ प्रसंग यह है कि यह मृत्यु क्या है? अन्धकार किसे कहते हैं? जो नाना प्रकार की आभा में सृष्टि के प्रारम्भ से मानव लगा हुआ है, चिन्तन और मनन करता रहता है।" तो मेरे प्यारे! देखो, वह चाक्राणी गार्गी मौन हो गयी।

## मृत्यु पर महर्षि पिप्पलाद का निर्णय

मेरे प्यारे! बहुत समय हो गये, सभा शून्य है। विचारा नहीं जा रहा है। महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज उपस्थित हुए और पिप्पलाद मुनि ने कहा कि–"मेरे विचार में तो यह आता है कि 'मृत्यां ब्रह्मः अभावां ब्रीकि वृत्तं देवाः' और उन्होंने वेद का, न्यौदा में से मन्त्र उच्चारण किया और वह वेद-मन्त्र यह कह रहा था कि यह मृत्यु का अभाव हैं, यह मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं है। मानो देखो मृत्यु का अभाव है। अन्धकार का नाम मृत्यु है।" मेरे प्यारे! देवर्षि नारद-मुनि ने इस वाक्य की सराहना की और देखो इसका उद्घोष किया और उद्गीत गाने लगे कि वास्तव में मृत्यु कोई वस्तु नहीं है।

मेरे प्यारे! इसी विचार को ले करके उन ऋषि-मुनियों में नाना प्रकार के प्रसंग उत्पन्न हुए, परन्तु वह सब दमन होते रहे। मुनिवरो! देखो, विचार होते-होते, मुनिवरो! देखो सायंकाल का समय हो गया, संधिकाल आ गया, संधिकाल में ऋषि-मुनि अपने-अपने कक्षों में जा पहुँचे, परन्तु महर्षि पिप्लाद मुनि को बहुत समय हो गया था आश्रम को त्यागे, परन्तु निकटतम् ही आश्रम था वह, वहाँ से उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए, मनिवरो! देखो, जैसे ही उन्होंने आश्रम में प्रवेश किया तो उनकी पत्नी शकुन्तका

महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, आदि, आदि-ऋषि-मुनियों का, बेटा! इसमें महर्षि पिप्लाद मुनि विद्यमान थे। तो महर्षि पिप्लाद महाराज अपने आसन् पर विद्यमान थे।

## मृत्यु क्या है?

महात्मा जमदग्नि मुनि ने, बेटा! एक मन्त्र उच्चारण किया और वह वेद-मन्त्र कह रहा था 'यशस्वं ब्रह्मः मृत्यु लोकां वाचन्नमं ब्रह्मः वृत्तं लोकः' मेरे प्यारे! 'वृत्तं लोकः' की जब चर्चा आई तो उस समय महात्मा जमदग्नि ने कहा—"हे ब्रह्मवेताओ! हे ब्रह्म निष्ठो! आज तुम इसलिए इस आसन् पर एकत्रित हुए हो, परन्तु एक वेद का मन्त्र यह कहता है हमें मृत्यु से पार होना है और मृत्युञ्जयी बनना है, क्योंकि प्रत्येक मानव मृत्यु का त्रासी रहता है और मृत्यु से भयभीत होता रहता है। प्रत्येक मेरी प्यारी माता अपने पुत्र का जब विच्छेद हो जाता है, तो व्याकुल होती है, परन्तु देखो, अपने में व्याकुल बनी रहती है। तो इसमें विचारना यह है कि, यह मृत्यु क्या है? क्या मानव देखो मृत्यु के आंगन में सदैव रत्त रहता है और नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है, उन अनुष्ठानों में लगा रहता है कि मैं मृत्यु से पार हो जाऊं परन्तु देखो आनन्द की पिपासा में वह सदैव विचरता रहता है।"

मेरे पुत्रो! देखो वेद का आचार्य यह कहता है—यह मृत्यु क्या है? मेरे प्यारे! देखो ऋषि-मुनियों में इस प्रकार का जब विचार आया तो एक-दूसरे के मुखारबिन्दु को दृष्टिपात् करने लगे। तो चाक्राणी गार्गी उपस्थित हुई और चाक्राणी गार्गी ने कहा—"हे ब्रह्मवेत्ताओ! मैं भी दो शब्द उच्चारण कर सकती हूँ?" ऋषि-मुनियों ने कहा—"उच्चारण करो।" गार्गी ने कहा—"मेरे विचार में तो यह आता है कि शरीर और आत्मा का विच्छेद

बड़ी व्याकुल हो रही थी। ऋषि ने कहा—"देवी! तुम व्याकुल क्यों हो रही हो?" उन्होंने कहा—"प्रभु! मेरा एक सात वर्षीय पुत्र था, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया है।" महर्षि पिप्पलाद मुनि बोले—"हे देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि ब्रह्मवेताओं के समाज में से मेरा आगमन हो रहा है, और मैं ब्रह्मवेताओं के आगमन में से मानो यह निर्णय कर चुका हूँ कि मृत्यु अपने में कोई वस्तु नहीं है, यह केवल अभाव और कृताक माना गया है।"

## शरीर क्या है?

मेरे प्यारे! देखो महर्षि पिप्पलाद ने जब यह वाक्य कहा तो देवी ने कहा—"प्रभु! चलो मैंने यह वाक्य स्वीकार कर लिया कि मृत्यु का अभाव स्वीकार करते हैं, परन्तु यह जो मेरा शरीर है, यह क्या है?" ऋषि ने कहा—"देवी! **यह तो परमाणुओं का संघात है, मानो देखो परमाणुवाद है, इसमें यह मानो देखो बलवती होते रहते हैं, अपने-अपने समय पर अपनी-अपनी प्रतिभा में सदैव रत्त रहते हैं।** तो देवी! मैं यह स्वीकार करता हूँ कि यह 'अभावाकृतक" माना गया हैं।" मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन किया तो उन्होंने कहा—"प्रभु! मेरा यह शरीर क्या परमाणुओं का संघात है?" उन्होंने कहा—"देवी! परमाणुओं का संघात है। इन परमाणुओं को स्थिर करने वाली मानो देखो इस शरीर में आत्मा है। आत्मा इन परमाणुओं को संगठित करती रहती है।"

## शरीर निर्माण की पूर्व-स्थिति

मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने जब ऐसा कहा तो शकुन्तका ने, देवी ने कहा—"हे प्रभु! मैं ज़ानना चाहती हूँ, जब यह परमाणु मेरे शरीर में इस रूप में नहीं होते तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है?" उन्होंने कहा—"हे

देवी! यही परमाणु जब तुम्हारा शरीर इस रूप में नहीं होता तो यह परमाणुवाद ही मानो तुम्हारे देखो उस माता के गर्भस्थल में निहित होते हैं। इन्हीं परमाणुओं से तुम्हारे मानव-शरीर का निर्माण होता रहता है।''

## निर्माणवेत्ता

वह निर्माणवेत्ता जब निर्माण करता है, तो मेरी भोली माता को यह प्रतीत नहीं होता कि कौन निर्माण कर रहा है? कौन निर्माणवेत्ता है? मेरे पुत्रो! देखो—''कहीं इसमें बुद्धि का निर्माण होता है, कहीं आज्ञा-चक्र का मानो देखो कहीं सूचना-केन्द्रों का निर्माण होता रहता है। बुद्धि भी एक प्रकार की नहीं है, मानो देखो, बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा और प्रज्ञा के रूप में परिणित होती रहती है। तो हे दिव्यासे! मानो देखो वह निर्माण करने वाला विश्वकर्मा निर्माण कर रहा है। माता के शरीर में ही, गर्भस्थल में, जब इस मानो शिशु का निर्माण होता है, तो बहत्तर करोड़, बहत्तर लाख दस हजार दो सौ दो (७२,७२,१०,२०२) नाड़ियों का निर्माण हो जाता है। वह मेरा प्यारा प्रभु कितना निर्माणवेत्ता है! कितना भव्यत्तम माना गया है! वह निर्माण करने वाला है तो वह विश्वकर्मा कहा जाता है। तो जब मानो तुम्हारा शरीर इस रूप में नहीं होता तो माता के शरीर में निर्माण होता रहता है। निर्माणवेत्ता निर्माण करता रहता है, वह विश्वकर्मा है, वह जनिता है, वह आनन्दवत् कहलाया गया है।''

## वीराङ्गना और वीरत्त्व में ब्रह्मवर्चस्वी देवत्त्व

मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार निर्णय दिया तो देवी ने कहा—''प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, जब मानो यह माता का गर्भाशय नहीं होता, तो यह परमाणुवाद कहाँ होता है।'' उन्होंने कहा—''हे देवी!

जब माता का गर्भाशय नहीं होता तो यही परमाणुवाद है, जो मानो देखो एक वीरांगना के रूप में, एक वीरत्त्व के रूप में रहता है। हे देवी! जो इन परमाणुओं की रक्षा करने वाली वीरांगना है, वह मानो देखो, वीरांगना बन करके दिव्यासा (जिज्ञासु) बन जाती है और मानो जो इन परमाणुओं की रक्षा करने वाला वीरत्त्व बन जाता है, ब्रह्मचारी बन करके, ब्रह्मवर्चोसी बन करके उस परब्रह्म परमात्मा की महिमा में सदैव रत्त रहता है। वही तो देवताओं की सभा में सुशोभनीय रहता है, जो देवत्त्व कहलाए गये हैं।''

## देवत्त्व और याज्ञिक की बन्धन मुक्ति

तो मेरे प्यारे! **जो यज्ञ में हवि प्रदान करने वाले, जो देवता कहलाते हैं, तो देवत्त्व मानो देखो अपने ब्रह्मरन्ध्र से ले करके मूलाधार तक या यूँ कहो मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक मुनिवरो! देखो अपने नाना प्रकार के बन्धनों से मुक्त होता हुआ, नाना वृत्तियों में रत्त होता हुआ, वह अपने में महान् और पवित्र बनता रहता है।''** तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया ऋषि ने जब इस प्रकार कहा वही देवता है जो ब्रह्मवर्चोसी कहलाता है। जो ब्रह्मचारी है अपनी आभा में निहित रहने वाला है, मानो देखो वही तो मृत्यु से पार होता है वह मृत्युञ्जयी बन जाता है।

## चाक्राणी का देवश्रावी गान

मानो! देखो एक वीरांगना है अपने भयंकर वनों में उद्गान गा रही है। मानो देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, जब चाक्राणी गार्गी, बेटा! वेदों का गान गाती रहती थी, जब मानो वह जटा-पाठ, घन-पाठ, माला-पाठ में, उदान में जब गान गाती रहती थी, तो बेटा! एक पंक्ति में सिंहराज

विद्यमान हैं, एक पंक्ति में मृगराज हैं, मानो सर्पराज भी उनके शब्दों को ग्रहण करते रहते। तो विचार यह आता रहता है, जब प्रभु का जिज्ञासु, वीरांगना बन करके, दिव्या अपने में गान गाना प्रारम्भ कर देती है, तो बेटा! देवताजन भी उसको श्रवण करते रहते हैं, उसको अपने में धारयामि बनाते रहते हैं। तो विचार आता रहता है, बेटा! जब मैं इस आभा में रत्त होने लगता हूँ, तो विचारों में एक मौलिक तत्त्व की आभा का भान होने लगता है। मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया, उन्होंने कहा—"वही योगेश्वर तो साधना में परिणित हो जाता है। आत्मा व आत्मवान बनने के लिए तत्पर हो जाता है।"

## वीरत्त्व और अन्न

मेरे प्यारे! देखो मुझे इस 'अस्वत ब्रह्म अन्नादं भूतम्' मेरे प्यारे! देवी ने एक वेद-मन्त्र उच्चारण किया और कहा कि—"प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, जब यह वीरांगना और वीरत्त्व नहीं होता तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है?" उन्होंने कहा—"हे देवी! जब यह वीरांगना और वीरत्त्व नहीं होता, यही परमाणुवाद देखो हमारे यहाँ अन्न में विद्यमान रहता है। जब सृष्टि के पिता ने इस संसार का सृजन किया अथवा निर्माण किया, तो मुनिवरो! देखो, सात प्रकार के अन्न को उत्पन्न किया।

## दो प्रकार का अन्न

एक अन्न तो बेटा! देखो, 'अप्रतिम्' कहलाता है। मेरे पुत्रो! प्रभु का कितना विज्ञान है, कितनी प्रतिभा कहलाई जाती है, एक ही पौधा है उस पौधे पर दो प्रकार का अन्न कहलाता है, एक अन्न मानव पान कर रहा है, एक अन्न को पशु पान कर रहा है। वाह ! रे मेरे प्रभु! तू कितना

विज्ञानवेत्ता है! मानो एक ही पौधा है, उस पर दो प्रकार का अन्न है, एक अन्न को मानव पान कर रहा है, वह ओज व तेज की उत्पत्ति कर रहा है, परन्तु दूसरा जो अन्न है उसको पशु पान कर रहा है! वह पय दे रहा है, मानो देखो पय दे करके और वह मानव को उद्गीत गाता हुआ प्रत्यों में रत्त कराता रहता है।

मेरे प्यारे! यह दो प्रकार का अन्न है, एक अन्न को मेरी प्यारी माता भोजनालय में तपाती है, एक अन्न को पशु पान करके, बेटा! दुग्धाहार करा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, गौ नाम का पशु है, मानो वह दुग्धाहार करा रहा है, कैसी विचित्रता है! मेरे प्यारे! प्रभु का कैसा विज्ञान गुथा हुआ है। एक ही पौधा है, उसमें दो प्रकार का अन्न है, बेटा! उसी का मानव पान कर रहा है, तेजस्वी बन रहा है, उद्गारों को उद्घोष कर रहा है। वह बड़ी अनुपम एक सत्ता प्रदान हो रही है। मेरे प्यारे! देखो, दूसरा अन्न जब वह पशु अपने में ग्रहण करता है, वह नाना प्रकार की कृतियों को जन्म देने वाला है।

## तीसरा अन्न–'हूत'

मेरे प्यारे! देखो, वह दो प्रकार का अन्न है और तीसरा जो अन्न है, वह 'हूत' कहलाया गया है। 'हूत' उसे कहते है, जहाँ यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यज्ञमान याग कर रहा है, वह हूत कर रहा है, आहुति दे रहा है। वह अग्नि के मुखारबिन्दु में, बेटा! आहुति देता हुआ अग्न्याधान कर रहा है और वह देवताओं का जो मुख है, वह अग्नि कहलाया गया है, अग्नि के मुखारबिन्दु में, बेटा! वह आहुति दे रहा है। वे देवत्त्व उसको अपने में प्रायः ग्रहण करते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! कैसा मेरे देव का यह विधान, यह वृत्तियाँ कहलाई गई हैं! वाह! रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानवेत्ता है!

एक अग्नि के मुखारबिन्दु में जाने से सर्वत्र देवत्त्व प्रसन्न हो रहे हैं। देवता अपने में गृहीत बन रहे हैं। मेरे **प्यारे! देखो, जब हूत होता है तो मानो देखो, वे देवता प्रसन्न होते हैं, उससे वृष्टि प्रारम्भ होती है और, मुनिवरो! देखो, धीमी-धीमी जब वृष्टि प्रारम्भ होती है, यह पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन जाती है और नाना प्रकार के व्यंजनों में रत्त हो करके, बेटा! यह मानवत्त्व को क्या, यह ब्रह्मकृतियों को ऊर्ध्वा में रत्त करा देती है।**

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, संक्षिप्त परिचय दे रहा हूँ। इन वाक्यों का विस्तार नहीं देना चाहता हूँ, केवल परिचय और वह परिचय भी, मुनिवरो! देखो, 'सम्भव ब्रहः', मैं आज तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूँ, और वह परिचय क्या है—पुत्रो? मेरे प्यारे! देखो 'यज्ञनं ब्रह्मे' यह तीसरा अन्न हुआ, जिसे हम 'हूत' कहते हैं। जिस यज्ञशाला में यज्ञमान, होता, उद्गाता और अध्वर्युः विद्यमान हो करके, बेटा! याग कर रहे हैं, वे देवत्त्व को देखो! प्रसन्न कर रहे हैं।

### चौथा अन्न—'प्रहूत'

मुनिवरो! देखो, ऋषि ने कहा 'ब्रह्मण वृत्तं ब्रह्मः वाचन्नमः देवः' वेद के आचार्य ने कहा—"देवी! तीसरा जो अन्न है, मानो वह 'हूत' है और चतुर्थ जो अन्न है वह, मुनिवरो! देखो, वह 'अन्नं ब्रह्मः' वह 'प्रहूत' कहलाया जाता है। हमारे यहाँ पुरोहितजन जब विद्यमान हो करके समाज को ऊँचा बनाते हैं, यह पुरोहितजन मानो देखो राष्ट्र को ऊँचा बनाते हैं। मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आ रहा है, मैं तुम्हें त्रेता के काल की वार्ता प्रकट करा रहा हूँ। मेरे प्यारे! देखो एक समय महाराज वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ, बेटा! एक सभा उपस्थित हुई और जिस सभा में यह निर्णय दिया गया,

विश्वामित्र को यह कहा गया कि तुम धर्नुयाग करो और धर्नुयाग में मानो देखो इस राष्ट्र को ऊँचा बनाओ, राष्ट्र की प्रतिभा और राजकुमारों के द्वारा वह याग सम्पन्न होना चाहिये। तो, बेटा! मुझे ऐसा स्मरण आ रहा है, महर्षि विश्वमित्र ने, महर्षि वशिष्ठ और माता अरुन्धती की आज्ञा पा करके उन्होंने वहाँ आश्रम से मानो देखो प्रस्थान किया और भ्रमण करते हुए अयोध्या में उनका आगमन हुआ। अयोध्या में अयोध्यावासियों ने कहा—"आज यह कैसा नृत्य होने लगा है, जो बिना समय के एक ब्रह्मवेता का आगमन हुआ है! मानो यह कैसा सौभाग्य जागरूक हो गया है!" मेरे प्यारे! देखो, वह राज्य सभा में राजस्थली पर पहुँचे। तो राजा ने अपने आसन् को त्याग दिया। आसन पर ऋषिवर विद्यमान हो गये और ऋषि से राजा ने नतमस्तक हो करके कहा—"प्रभु! आज बिना सूचना के आपका आगमन क्यों हुआ, मैं इस कारण को नहीं जान सका हूँ। प्रभु! आप मुझे आज्ञा दे देते तो मैं आपको मानो देखो अपने वाहनों में आप का इस अयोध्या में आगमन कराता। ऐसा कौन सा कारण है, जो आपका इस प्रकार आगमन हुआ है?" महर्षि विश्वामित्र बोले—"हे राजन्! तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा कि हम दण्डक वनों में एक धर्नुयाग कर रहे हैं और धर्नुयाग में देखो तुम्हारे जो राजकुमार हैं, इनके द्वारा हम याग कराना चाहते हैं।"

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा—"प्रभु! यह याग करना तो हमारा सौभाग्य है, जो आज मानो तुम धर्नुयाग कर रहे हो, यह तो राष्ट्र के लिए लाभप्रद है, हम सबके लिए भी। मानो देखो मुझे आज्ञा दो, यह बाल्य तो किशोर हैं और किशोरों से याग की रक्षा नहीं हो सकेगी। मुझे आज्ञा दो, मैं तुम्हारे याग को सम्पन्न कराऊँगा।" मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा—"हे राजन्! देखो, यह राजकुमारों से ही याग को सम्पन्न कराना है।" मेरे पुत्रो! राजा ने कहा—"प्रभु! यह बाल्य किशोर हैं।" ये चर्चाएं हो रही थीं। यह

वार्ता मानो देखो राजगृह में भी जा पहुँचीं। देखो कौशल्या, कैकेई इत्यादि सब देवियाँ मानो देखो राजस्थली पर आ पहुँची और ऋषियों के बारी-बारी चरणों को स्पर्श किया और चरणों को स्पर्श करते हुए माता कौशल्या ने कहा—"कहो, भगवन्! आगमन कैसे हुआ?" उन्होंने कहा—"हे ब्राह्मण ब्रहे!' मैं यहाँ, मानो देखो, दण्डक वनों में एक याग करा रहा हूँ और वह 'धर्नुयाग' है, उसके लिए मैं दोनों राजकुमारों को चाहता हूँ। क्या मानो देखो ये राजकुमार हैं, चारों ही राजकुमारों के लिए मैं आया हूँ। क्या मैं अपने याग को सम्पन्न कराना चाहता हूँ।" मेरे प्यारे! देखो, उन देवियों ने कहा—"क्या, हे राजन्! तुम राजकुमारों को क्यों नहीं प्रदान कर रहे हो?" उन्होंने कहा—" देवी! वे भोले, वह मानो बाल्य हैं, किशोर हैं।" उन्होंने कहा—"हे राजन्! तुम्हें प्रतीत है, यदि हमारे गर्भ से उत्पन्न होने वाला ब्रह्मचारी यदि देखो ऋषि की आज्ञा का पालन और ऋषि की सेवा नहीं कर सकता, तो मानो यह हमारा गर्भस्थल दूषित हो जाएगा। हे प्रभु! 'ब्रह्मे लोकां' देखो आप राजकुमारों को देखो ऋषि को प्रदान कीजिये।" मेरे प्यारे! देखो, जब ऐसा वर्णन आया तो उन्होंने कहा—'ब्रह्मणं ब्रहे', राजकुमारों को ऋषि को प्रदान कर दिया गया।

मेरे प्यारे! देखो, उसका नाम हम पुरोहित कहा करते हैं, यह 'प्रहूत' है, यह चौथा अन्न कहलाता है। **अन्न का अभिप्रायः है, जिसके उद्गार गाने से मानव तृप्त हो जाये, उसी का नाम अन्न कहा गया है।** अन्न का अभिप्रायः यह है कि वायु में भी अन्नाद विद्यमान रहता है, इसलिए ऋषि-मुनि अपने में, बेटा! देखो एकान्त स्थलियों में वायु का सेवन करते रहे हैं, साधना में सदैव रत्त होते रहे हैं और उससे अन्नाद को प्राप्त करते रहे हैं। अन्नाद की बड़ी विस्तृत एक विवेचना हैं, परन्तु देखो, अन्न यहाँ एक व्याख्याता का नाम भी देखो अन्नाद का स्वामी कहलाया गया है।

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा–"देवी! ब्रह्मऋषि ने जा करके दण्डक वनों में धर्नुयाग का आयोजन किया। धर्नुयाग किया, तो धर्नुयाग का अभिप्रायः यह कि **ब्रह्मचारियों को अस्त्रों-शस्त्रों की शिक्षा देने का नाम 'धर्नुयाग' कहा जाता है।"** तो मेरे प्यारे! देखो, जब महर्षि विश्वामित्र एक पुरोहित थे, इसीलिए प्रहूत का नाम भी अन्न माना गया है, यह चौथा अन्न कहलाता है, जिससे राष्ट्र और समाज का प्रायः कल्याण होता है, राष्ट्र जिससे ऊँचा बनता है।"

## साधक के तीन अन्न

मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा–"यह जो चार अन्न हैं, ये समाज का साझा अन्न कहलाता है, परन्तु देखो, तीन अन्न ऐसे हैं, जो साधक उन तीन अन्नों को अपना करके देखो आत्मवान बनता है, आत्मा का कल्याण और योगेश्वर और देखो वह अपने में ध्यानावस्थित हो जाता है। और वह साधना में साधक बन करके साधना में परिणित हो जाता है। तो वह कौन सा (अन्न) है? वह प्राण, मन और विचार मानो ये तीन प्रकार के अन्न हैं, जो आत्मवान बनने के लिए हैं।

### प्राण

बेटा! देखो, प्राण को जानना है। यह प्राण, हमारे शरीर में दस प्राण बन करके रहते हैं–बेटा! प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान, और पाँच उप-प्राण हैं–नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कूर्म और कृकल, ये दस प्राण हमारे शरीर में संचालित हो रहे है, मानो क्रियाक्लापों में परिणित हो रहे हैं। मानो देखो, इन प्राणों को जानना, यह प्राण क्या-क्या क्रियाक्लाप करते है? ब्रह्माण्ड की आभा में सदैव निहित रहते हैं।

## मन

देखो यह वहाँ प्राण और देखो यह मन, यह मन क्या है यह प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तन्तु माना गया है। यह प्रकाश से रत्त रहता है।

## विचारोत्पत्ति

यह प्राण और मन का दोनों का एकोकीकरण हो जाता है तो विचार की उपलब्धि होने लगती है। वह चिन्तन करता है, वह विचारों में रत्त हो जाता है, वह विचारवान बन करके, विचारों में रत्त हो करके, मेरे प्यारे! देखो, यह प्रत्येक इन्द्रियों का साकल्य बनाना प्रारम्भ करता है।

## एकोकृत मन-प्राण और विचारोत्पत्ति

पाँच ज्ञानन्द्रियाँ कहलाती है और पाँच ज्ञानन्द्रियों का साकल्य है, मेरे प्यारे! देखो, नेत्रों का रूप है और श्रोत्रों का शब्द है, और प्राण का सुगन्ध और दुर्गन्ध है। सुगन्ध कहना चाहिए और देखो, त्वचा का स्पर्श है और वाणी का रसोस्वादन है। मेरे प्यारे! देखो, दसों इन्द्रियों के साकल्य को, विषयों को एकत्रित करके जब, मुनिवरो! साकल्य बना करके और वह जो हृदय रूपी मानो देखो यज्ञशाला है, शरीर में, उसमें वह हूत कर रहा है, उसमें आहुति दे रहा है। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक इन्द्रियों का जो समावेश होता है, वह मानव के हृदय में होता है, इसीलिए हृदय में ही वह समाधिष्ठ हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, हृदय इस ब्रह्माण्ड का कुञ्ज कहलाया गया है, मुनिवरो! देखो, हृदय में प्रत्येक रूप, रस, गन्ध इत्यादि सब उसी में समावेश हो करके साधक, मुनिवरो! देखो, उसमें साधना करने लगता है। और वह साधक बन करके मेरे पुत्रो! देखो, साधना में तत्पर हो जाता है, विचारता रहता है।

...

बेटा! मैं कहाँ चला गया हूँ 'विचार देता हुआ! मुनिवरो! देखो, योगेश्वर जब इन पाँच ज्ञानेन्द्रियों का साकल्य बना करके, सामग्री बना करके, मानो ज्ञान रूपी, जो अग्नि हृदय में अगम्यता में मानो प्रदीप्त हो रही है, उसमें वह समावेश कर देता है। जब समावेश हो जाता हैं, तो योगेश्वर, बेटा! देखो, योगारूढ़ हो जाता हैं। योगारूढ़ हो करके, मेरे पुत्रो! देखो, यह तीन प्रकार का अन्न है, जिससे योगी अपने में समाधिष्ठ और मानवीयता में एक साधक बन जाता हैं।

## सात प्रकार के अन्न की लय-स्थिति

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा—"हे देवी! यह जो सात प्रकार का अन्न है, यह सृष्टि के पिता ने **चार प्रकार का अन्न लौकिक कहलाता है और तीन प्रकार का अन्न आत्मवान बनने के लिए होता है।** मानो देखो, यह अपने में अभ्योदय हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा—'धन्यं ब्रह्मा कृतं'। मेरे प्यारे! देवी ने कहा—"प्रभु! यह अन्न भी मैंने स्वीकार कर लिया हैं, परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ, हे प्रभु! देखो जब यह सात प्रकार का अन्न भी नहीं होता तो मानो यह 'अकृतम्' परमाणुवाद कहाँ रहता है? उन्होंने कहा—"हे देवी! हे दिव्यासे! तुम बड़ी बुद्धिमान हो। तुम्हारा बहुत प्रश्न करने का बड़ा गम्भीर अध्ययन है। हे देवी! जब यह सात प्रकार का अन्न भी नहीं होता, तो मानो देखो, 'ब्रह्मण ब्रीही वृत्तः' देखो, जब सात प्रकार का अन्न नहीं होता, तो उस समय हम आत्मा के 'प्रकाशं ब्रह्मः' देखो आत्मा ज्योतिवान रहे यह परमाणुवाद, मानो देखो, कुछ पृथ्वी में रहते हैं, कुछ आपोमयी ज्योति में, जल में रहते हैं, कुछ अग्नि में रहते हैं और इन्हीं परमाणुओं को भ्रमण कराने वाली, गति देने वाली वायु है, और जहाँ वह गतिवान होता है, उसे अन्तरिक्ष कहते हैं।

## अविनाशी आत्मा और परमाणु

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने वर्णन कराया कि यह परमाणुवाद मानो देखो पञ्च महाभूतों में निहित रहते हैं। पञ्च महाभूतों में निहित रह करके वृत्तियाँ बना करती हैं। हे देवी! जब यह आत्मा इस शरीर को मानो त्याग देता है, तो देवी! देखो, यह शव रह जाता है, मानो देखो, आत्मा अपने संस्कारों को ले करके, मानो देखो, अपने चित्त के मण्डल में प्रवेश कर जाता है। आत्मा तो चित्त के मण्डल में चला गया है और यह 'ब्रह्मण' देखो, यह शव रह जाता है। हे देवी! जब इसे अग्नि में दाह कर देते है तो उस समय अग्नि के परमाणु अग्नि में, जल के परमाणु जल में, और पृथ्वी के परमाणु पृथ्वी में और देखो यह प्राण वायु में और अवकाश अन्तरिक्ष में प्रवेश हो जाता है। तो देवी मैं जानना चाहता हूँ यह परमाणुवाद का भी विनाश नहीं होता। मानो यह परमाणुवाद भी नहीं गया। तो देवी! आत्मा का विनाश नहीं होता। जब परमाणु और आत्मा दोनों का विनाश नहीं होता, तो देवी! मैं जानना चाहता हूँ, यह मृत्यु है क्या, जिस मृत्यु के आँगन में प्रत्येक मानव दुःखित रहता है? मेरी प्यारी माता दुःखित रहती है। परन्तु यह है क्या? **मेरे प्यारे! देखो विचारा गया कि यह मृत्यु कोई वस्तु नहीं हैं। आत्मा का ह्रास नहीं होता। परमाणुओं का ह्रास नहीं होता हैं। केवल माता-पिता का जो संकल्प मात्र है, उसका ह्रास हो गया। मानो संकल्प मात्र समाप्त हो गया।**

## मृत्यु की मृत्यु

मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने वर्णन किया तो देवी मौन हो गई। शकुन्तका से ऋषि ने कहा– "देवी! और भी कुछ जानना चाहती हो? क्या मृत्यु तो मेरे विचार में नहीं रहा है और तुमने यह स्वीकार कर लिया है

कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं रहती, परन्तु, देखो, मैं एक वाक्य उच्चारण करने के लि ; और आया हूँ। हे देवी! मुझे वह सभा स्मरण है, राजा जनक के यहाँ जब एक सभा हुई तो मानो देखो महात्मा अर्द्धभाग ने महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि से यह कहा था कि संसार में मृत्यु की मृत्यु क्या है? मेरे प्यारे! देखो याज्ञवल्क्य ने देखो अर्द्धभाग के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा–कि मत कहो! मृत्यु की मृत्यु नहीं होती। अरे मृत्यु की मृत्यु, तो मानो देखो, मृत्यु का मृत्यु यह ब्रह्म है। तो **जानने वाले की मृत्यु नहीं हुआ करती। जो ब्रह्म को जान लेता है वह मृत्यु से उपराम हो जाता है।**

तो विचार आता है बेटा! विचार क्या कह रहा है, मेरे प्यारे! देखो, आत्मा का ह्रास नहीं होता, और न परमाणुवाद का ही ह्रास होता है। मानो देखो, यह मृत्यु है क्या? तो ऋषि कहता है–''देवी! **संसार में अंधकार का नाम मृत्यु और प्रकाश का नाम जीवन माना गया है।** मेरे प्यारे! देखो, प्रकाश क्या है? ज्ञानी ही प्रकाशमान हुआ करता है। मेरे प्यारे! देखो, अज्ञान में जो रहता है, वह मृत्यु को, अंधकार को, प्राप्त होता है। तो विचारने से प्रतीत होता है, वेद के वाङ्मय में जाने से प्रतीत हुआ कि वास्तव में मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं है। **बेटा! अज्ञान का नाम मृत्यु हैं, इसलिए प्रत्येक मानव को, प्रत्येक मेरी पुत्री को ज्ञानवान होना चाहिए, ज्ञानी होना चाहिए। अपने मानवीयत्त्व को जानने वाला और मानवीय दर्शनों को जानने वाला हो, बेटा! ज्ञानी कहा जाता है।**

## आत्मा और चित्त-मण्डल

आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को, बेटा! अपने आत्मवत् को जानना चाहिये। मेरे प्यारे! देखो, यह परमाणुवाद, मुनिवरो! देखो,

अपने-अपने अव्ययों में व्यय हो जाता है, अव्ययों में व्यक्त हो जाता है। परन्तु देखो, आत्मा अपने संस्कारों को ले करके चित्त के मण्डल में चला जाता है। तो, मुनिवरो! देखो, आत्मवत् बनना चाहिए। **आत्मवत् कौन होता है? जो, मुनिवरो! देखो, चित्त के मण्डल को जानता हुआ, अपनी आत्मवत् बन करके, आत्मा की प्रतिभा में सदैव रत्त रहता है।** आओ, मेरे प्यारें! मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हम परमपिता परमात्मा की महत्ती को सदैव जानते हुए महत्ती में रत्त हो जायें। आभा में रत्त हो करके, मुनिवरो! देखो, अभ्योदय अपने में धारयामि बनते चले जाये। आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, विशेष चर्चा न प्रकट करता हुआ, मेरे प्यारे! देखो, अपने में महान और पवित्र बन करके इस संसार सागर से पार हो जाये।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक्य क्या कह रहा है, हम परमपिता परमात्मा की महत्ती को जानते हुए और मानो देखो, मृत्युञ्जयी बनते हुए, हम इस संसार सागर से पार हो जायें। **मेरे प्यारे! सबसे प्रथम मानव का कर्त्तव्य यही है कि मानव को मृत्यु से पार होना चाहिये और मृत्यु को जानना ही उससे पार होना है। प्रकाश में जाना ही मृत्यु से पार होना है। तो मेरे प्यारे! मानव को ज्ञानवान बन करके इस सागर से पार होना है।**

आज का बेटा! हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है? हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गा करके, बेटा! इस संसार-सागर से पार हो जायें। आज का हमारा वाक्य कहता है कि वह जो परमपिता परमात्मा है, जो मानो जड़ और चैतन्यवत् है। मानो

देखो, जड़ और चैतन्य में जब, मुनिवरो! देखो, वह परमपिता परमात्मा दृष्टिपात् आता है, हमें उसकी उपासना करनी हैं, वह हमारा विष्णु है, मानो देखो, निर्माण करने वाला और रक्षक है। मुनिवरो! वही 'परमदेवम् ब्रह्मः देवत्त्व' कहलाया गया है। यह है, बेटा! आज का वाक्य। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हमें, बेटा! मृत्यु से पार होना है। यह नाना प्रकार के अनुष्ठान, नाना प्रकार का जो तपश्चर है, वह इसीलिए मानव करता रहता है कि मैं मृत्यु से पार हो जाऊँ। यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रघट करूँगा। आज का वाक्य अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि वह जो परमपिता परमात्मा है, वह जड़ और चेतनता में निहित रहने वाला है और आत्मवान बनना ही मानव के लिए बहुत अनिवार्य है, क्योंकि मानव देखो नित्य प्रति अपने क्रियाकलापों में निहित रहता है और, मुनिवरो! देखो, वह निहित रह करके, केवल अपने, मानव के पालन-पोषण में लगा रहता है। अरे, जो आत्मा के कारण तुम्हारा जीवन मानो चैतन्य बना हुआ है, उस आत्मा का भी चिन्तन करना चाहिये। आत्मवान बनना चाहिये। यह है, बेटा! आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रघट करूँगा। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन।

बडौली, मेरठ
२९-१-८८

**प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशनार्थ निम्नलिखित महानुभावों ने द्रव्य दानाहुती दी। समिति उनके सात्विक सहयोग के लिए हार्दिक आभार व्यक्त करती है और उनके सर्वविध कल्याण की शुभकामना करती है :–**

| | | |
|---|---|---|
| १. | श्री सुमन शर्मा, नोएडा | १०००.०० |
| २. | श्री अरुण कुमार S/o श्री जगदीश कुमार लोदी कम्पलेक्स, दिल्ली | १०००.०० |
| ३. | श्री कृपाल सिंह, आर-२/२०८, राजनगर, (गा.) | १०००.०० |
| ४. | श्री एन.डी. गर्ग, ई-४५, लाजपत नगर-३ न. दि. | १०००.०० |
| ५. | श्रीमती राधा गुप्ता, डब्ल्यू ज़ेड-४१, लाजवन्ती गार्डन, नयी दिल्ली | ५५०.०० |
| ६. | श्री तरुण नारंग, फ्रैन्डस कॉलोनी, नयी दिल्ली | ५०१.०० |
| . | श्री प्रकाश व बरफी देवी मिस्त्री ग्रा. कनोजा, मुरादनगर, ग़ाज़ियाबाद | ५०१.०० |
| ८. | स्व॰ श्रीमती बिशंबरी देवी पत्नी श्री बेगराज त्यागी, दिनकरपुर, मुज़फ्फरनगर | ५०१.०० |
| ९. | श्री मनोज कुमार, भोराखुर्द, मुज़फ्फरनगर | ५००.०० |
| १०. | श्री बनारसी दास महाजन | ५००.०० |
| ११. | श्री जयप्रकाश तोमर, रुस्तमपुर, बावली बाग. उ.प्र. | २५१.०० |
| १२. | मा. अरुण तुली, के-३, लाजपत नगर-३, न. दिल्ली | २५१.०० |
| १३. | श्रीमती धनेश यादव, सरगोधा इन्केल्व, न. दिल्ली | २५१.०० |

| | | |
|---|---|---|
| १४. | श्रीमती तृप्ता देवी, ५३-ए, डबल स्टोरी, मलका गंज, दिल्ली-११०००७ | २००.०० |
| १५. | गुप्त दान | १५१.०० |
| १६. | श्री वेदीराम यादव, संसडहार, बागपत | १०१.०० |
| १७. | श्री अनूप सूद, ई-१२/२०, फेस I, अर्जुन मार्ग डी.एल.एफ. कुतब एन्कलेब, गुड़गांवा, हरियाणा | १०१.०० |
| १८. | श्री तेजपाल सिंह चौहान, ६४५, रामनगर, रुड़की | १०१.०० |
| १६. | श्री भुलन सिंह, सन्हेरा, बागपत उ.प्र. | १०१.०० |
| २०. | श्री नरदेव व निगमदेव त्यागी, खंडावली, उ.प्र. | १०१.०० |
| २१. | श्री राजपाल त्यागी, मेरठ, (उ.प्र.) | १०१.०० |
| २२. | श्रीमती ऊषा त्यागी W/o श्री सतपाल त्यागी, कैथवाड़ी, मेरठ, (उ.प्र.) | १०१.०० |
| २३. | श्री बलिस्तर त्यागी, ग्रा. नारंगपुर, मेरठ (उ.प्र.) | १०१.०० |
| २४. | मा० राम चन्द्र सिंह, ग्रा. पो. फुगाना उ.प्र. | १०१.०० |
| २५. | श्री पलटू मल, उपनाम नरेन्द्र देव पटवारी, राजपुरा-१८८ सी.सी. कालोनी, दिल्ली-७ | १०१.०० |
| २६. | श्री मूलचन्द, बी-२८/डी, आई.आई.टी. न. दिल्ली | १०१.०० |
| २७. | नीरजा सिंह, नया कवि नगर, ५८जे, ग़ाज़ियाबाद | १००.०० |
| २८. | श्रीमती विद्यावती, के.जे.-६८, ग़ाज़ियाबाद | १००.०० |
| २६. | आर्य समाज, काकड़ा, ग़ाज़ियाबाद | ५१.०० |
| ३०. | डॉ. धर्मवीर सिंह, मानकपुर चौक, नानपुर, गाजि. | ५१.०० |
| ३१. | डॉ. ओमप्रकाश शर्मा, ननोता, सहारनपुर, (उ.प्र.) | ५१.०० |
| ३२. | श्री हरि शंकर भारद्वाज, राज चौराहा, मोदी नगर, उ.प्र. | ५१.०० |
| ३३. | श्री राजेन्द्र प्रधान, ग्रा. भदोड़ा | ५१.०० |
| ३४. | गुप्त दान | ५१.०० |

३५. श्री चुन्नीलाल सूद, डी-१२८, गली आर्य समाज मार्ग उत्तम नगर, नयी दिल्ली-११००५६ ५१.००
३६. श्री चुन्नी लाल सूद, डी-१२८ गली नं. ७३ आर्य समाज रोड, उत्तम नगर, नयी दिल्ली ५१.००
३७. श्री सुबह सिंह, चिरोड़ी, दौराला, मेरठ ५१.००
३८. श्री नरदेव निगम देव त्यागी, खन्डावली, मेरठ ५०.००
३६. श्री सीताराम ऐलम, मुज़फ्फरनगर ५०.००
४०. श्री रामपाल सिंह, बी-३३, पुलिस कॉलोनी, भजनपुरा ५०.००
४१. श्री इन्द्रपाल सिंह, कासिम खेड़ी, बागपत ५०.००
४२. श्री हरद्वारी, कासिमपुर, खेडी, बागपत ५०.००
४३. श्री तेजपाल सिंह, कासिमपुर, खेडी, बागपत ५०.००
४४. श्री हरी शंकर भारद्वाज, हापुर, चोपला, मोदीनगर २५.००
४५. श्री कालू राम, सुपुत्र श्री अतल सिंह ग्रा. छूर, मेरठ २१.००
४६. श्री नाहर सिंह, अणपुर, दौराला, मेरठ २१.००
४७. श्री घनश्याम दास अग्रवाल C/o अग्रवाल ट्रांसपोर्ट कम्पनी, मुज़फ्फरनगर २१.००
४८. श्री नाहर सिंह, ग्रा. अणपुर, दौराला जि. मेरठ (उ.प्र.) २१.००
४६. श्री ओमवीर, ग्रा. भन्डोरा, मेरठ, उ.प्र. २१.००
५०. श्री हरलाल सिंह, ग्रा. माडी, मुज़फ्फरनगर २१.००
५१. श्री शिवनाथ सिंह पाल, महादेव, सरहदना, मेरठ ११.००
५२. श्रीमती लक्ष्मी देवी, दान्दुपुर उ.प्र. ११.००
५३. श्री लक्षू सिंह, रामनगर, बागपत १०.००
५४. श्री राम सिंह, रामनगर, बाग़पत १०.००
५५. श्री कृष्ण पाल, रामनगर, बागपत १०.००
५६. श्री शीतल प्रसाद, गांधी जी मिल, बिहार १०.००
५७. श्री शीतल प्रसाद चौधरी १०.००

# ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी के प्रवचनों से प्रकाशित पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| १. | आत्म लोक | २५ रुपये |
| २. | आत्मा व योग साधना | १० रुपये |
| ३. | अलङ्कार व्याख्या | ३० रुपये |
| ४. | यज्ञ प्रसाद अर्थात यज्ञ का महत्त्व | १६ रुपये |
| ५. | धर्म का मर्म | १५ रुपये |
| ६. | देवपूजा | १८ रुपये |
| ७. | रामायण के रहस्य | २० रुपये |
| ८. | महाभारत के रहस्य | १५ रुपये |
| ९. | महाराजा रघु का याग | २० रुपये |
| १०. | मोक्ष प्राप्ति का मार्ग | २० रुपये |
| ११. | वनस्पति से दीर्घ आयु | २० रुपये |
| १२. | चित्त की वृत्तियों का निरोध | २५ रुपये |
| १३. | आत्मा, प्राण और योग | २० रुपये |
| १४. | पञ्च महायज्ञ | २० रुपये |
| १५. | अश्वमेध याग और चन्द्रसूक्त | ३० रुपये |
| १६. | याग-मञ्जूषा | २५ रुपये |
| १७. | आत्म-दर्शन | २५ रुपये |
| १८. | पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन | २५ रुपये |
| १९. | वैदिक प्रवचन (पुष्प ६२ तक) | प्रत्येक ७ रुपये |
| २०. | यौगिक प्रवचन माला (भाग १,२,३,४,५) | प्रत्येक ४० रुपये |
| २१. | शंका निवारण | ७ रुपये |
| २२. | वेद पारायण यज्ञ का विधि विधान | २५ रुपये |
| २३. | रावण इतिहास | ३५ रुपये |
| २४. | याग और तपस्या | ३५ रुपये |
| २५. | यज्ञ एवम् औषधि विज्ञान | ३५ रुपये |
| २६. | यागमयी साधना | २५ रुपये |
| २७. | दिव्य राम-कथा | ५० रुपये |

**पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों का साहित्य निम्न स्थानों पर उपलब्ध है :–**

१. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय लाक्षागृह, बरनावा।

२. श्री महावीर सिंह, २५१, दिल्ली गेट, नयी दिल्ली।

३. मैसर्स विजय कुमार गोविन्द राम हासानन्द,
४४०८, नई सड़क, दिल्ली।

४. श्री सुशील कुमार त्यागी
मकान नं. ७७३, सेक्टर ८,
आर.के. पुरम, नयी दिल्ली।

५. श्री राजपाल त्यागी
१०६/४, पंचशील, गली नं. ४, गढ़ रोड, मेरठ।

६. श्री विवेक त्यागी,
मकान नं. १६, अशोक कालोनी, अल्कापुरी, हापुड़।

७. श्री सेवाराम जी,
दुकान नं. ई-२४, संजय नगर,
सेक्टर २३, ग़ाज़ियाबाद।

८. श्री सुमन शर्मा, कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, चोटीपुरा,
पो.-रजबपुर, मुरादाबाद, (उ.प्र.)।
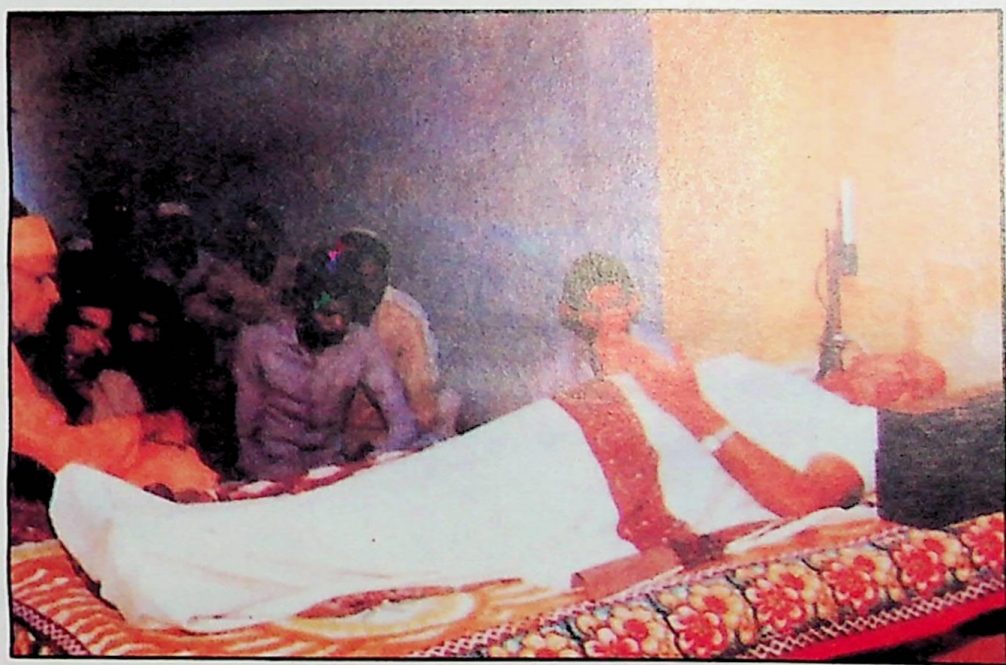
पूज्यपाद गुरूदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज
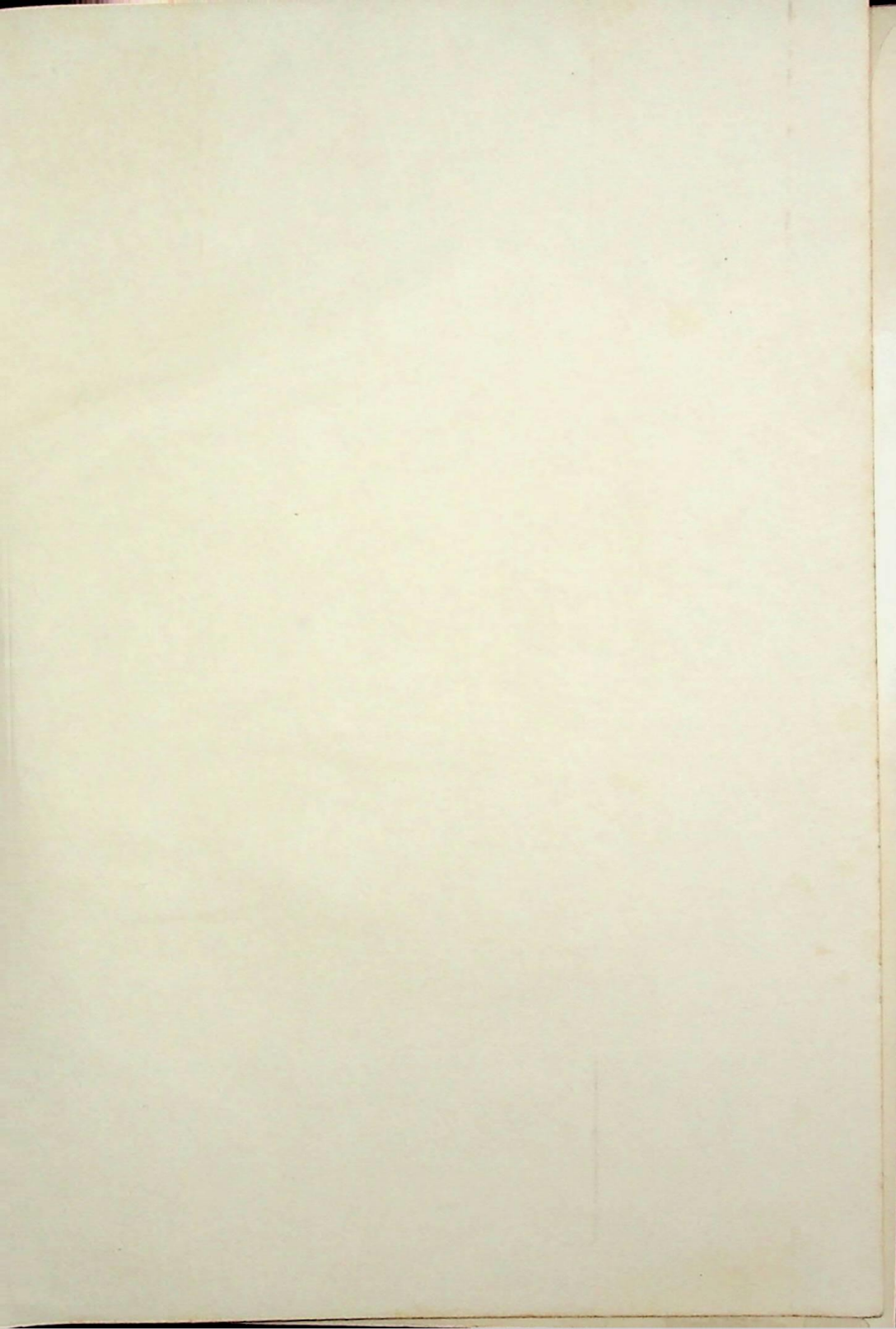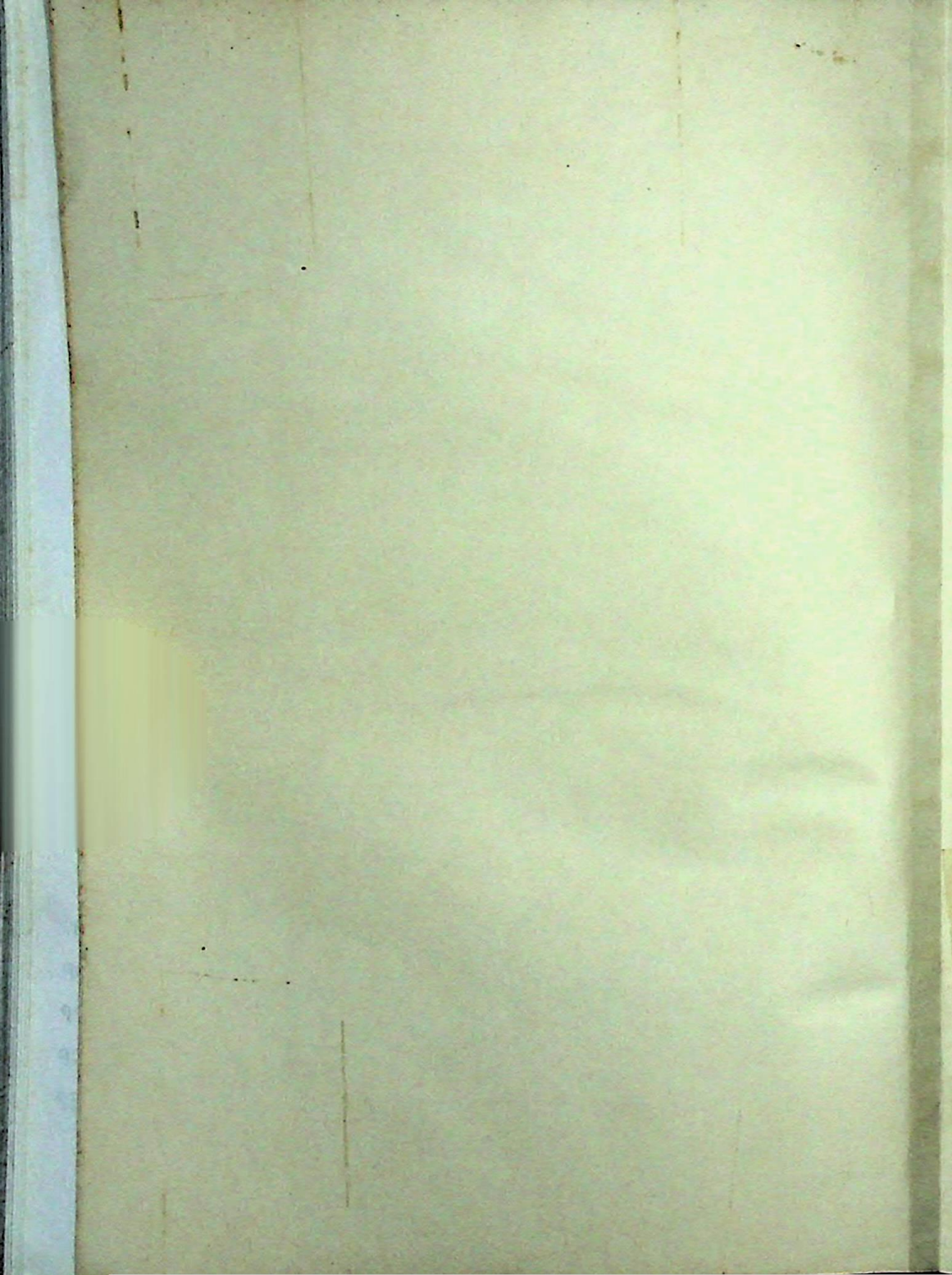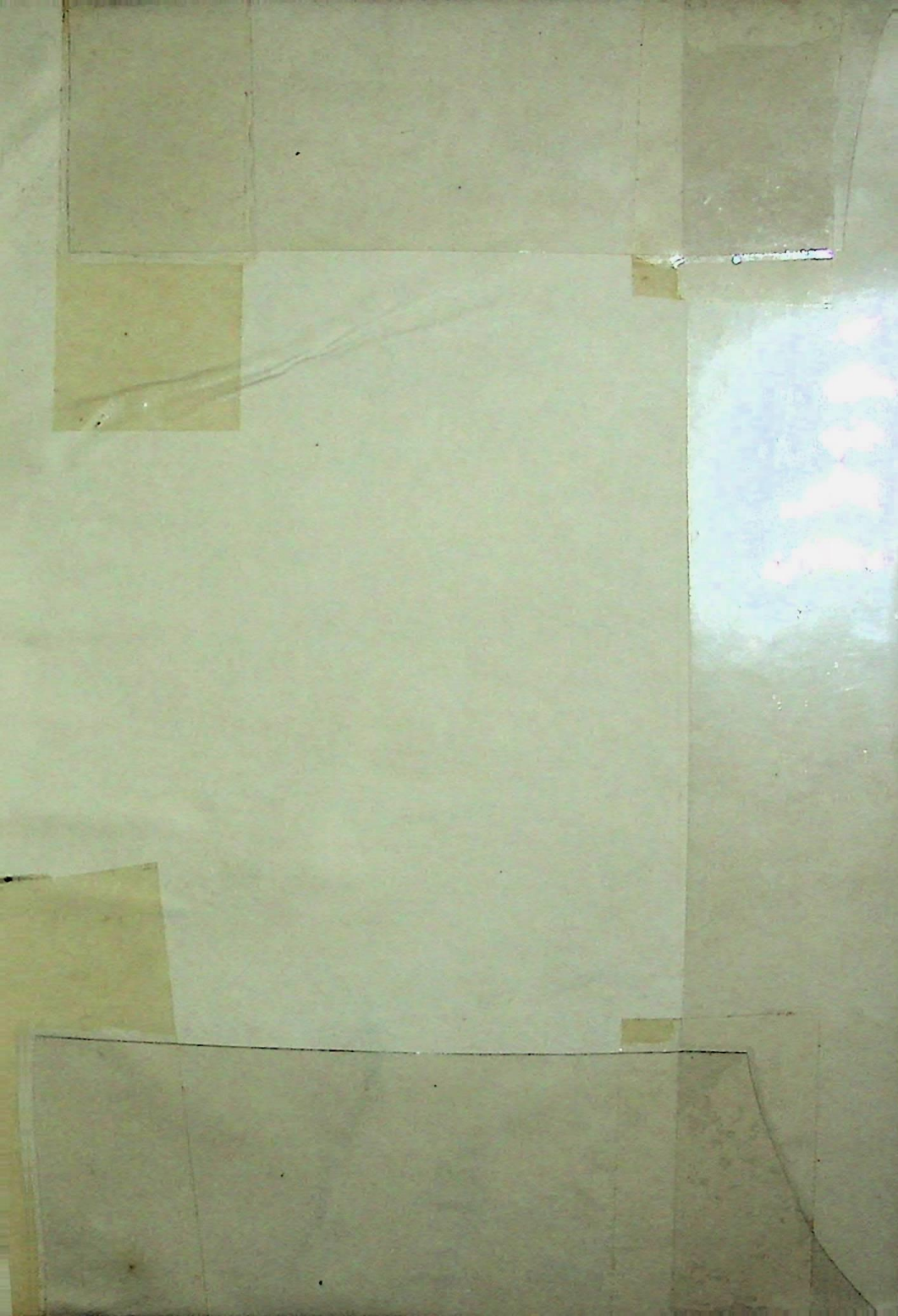
ब्रह्मचारी कृष्णदत्त जी इस युग के अद्‌भुत वेद वक्ता थे। इस जन्म में उन्हें किसी विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला परन्तु वे पूर्व जन्मों की स्मृति से वेद संहिताओं का पाठ और फिर उन मंत्रों की व्याख्या करते थे। अपने प्रवचनों में उन्होंने पूर्व जन्मों में देखी अनेक घटनाओं का विवरण दिया जिनसे प्राचीन भारतीय इतिहास के कई लुप्त अथवा विकृत तथ्यों की बुद्धिसंगत वास्तविकता का पता चलता है।

ब्रह्मचारी कृष्णदत्त जी कर्मों के भोग, आत्मा के पुनर्जन्म और अंतःकरण से जन्म-जन्मान्तरों के संचित ज्ञान के स्पष्ट प्रमाण थे। पन्द्रह अक्तूबर १९९२ को उन्होंने ५० वर्ष की अवस्था में अपने नश्वर शरीर को त्यागा परन्तु इसकी उद्‌घोषणा उन्होंने ३० वर्ष पहले ही ६ मार्च १९६२ को कर दी थी।

उनके कुछ महत्वपूर्ण प्रवचनों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजिकृत)
251, दिल्ली गेट, दिल्ली-110002